प्रतिशोधक आँचल

कटहल की दोपहर

दिन उमस भरा और गर्म था। नारायणन परिवार घर के बरामदे में बैठा कटहल निकालने में व्यस्त था। थामरा (कमल) अपनी माँ पार्वती को बड़े, पके हुए चक्का (कटहल) को सावधानी से काटते हुए देख रही थी। उसने आगे बढ़कर एक छोटा-सा कोया उठाने की कोशिश ही की थी कि पीछे से दादी जानकी अम्मा की कड़क आवाज़ सुनाई दी।

“अरे! निक्के, पेन्ने (रुको, लड़की)। पहले हाथों पर थोड़ा तेल मल लो, नहीं तो चिपचिपे हो जाएँगे। क्या हॉस्टल में रहकर सब भूल गई हो?”

थामरा ने मुँह बनाया, पास रखी नारियल के तेल की बोतल उठाई, हथेलियों पर थोड़ा-सा तेल मल लिया और फिर अपनी माँ को कटहल निकालते हुए देखने लगी। बीच-बीच में वह चुपके से एक-एक कोया भी उठा लेती।

“पार्वती, क्या पूरा दिन इसी में लगा दोगी?” जानकी अम्मा ने टोका। “जब मैं रसोई संभालती थी, तब दस मिनट में पूरा कटहल निकाल देती थी। तब तक मेरी कंजी (पतला चावल का दलिया) भी तैयार हो जाती थी, और मेरा बरामदा भी इतना गंदा नहीं होता था।”

पार्वती ने सिर झुकाए ही रखा। वह धैर्य से कटहल के भीतर जड़े प्रत्येक कोए को अलग करती रही। उसने कोई उत्तर नहीं दिया। वह जानती थी कि इस ताने का जवाब देना व्यर्थ है।

कुछ ही देर में पूरे बरामदे में पके कटहल की मीठी सुगंध फैल गई। थामरा एक-एक करके कोए खाने लगी।

“इतना मत खा, लड़की,” जानकी अम्मा ने चेताया। “इसी को दोपहर का खाना मत बना लेना, नहीं तो पेट खराब हो जाएगा। इससे और भी कितनी चीज़ें बनाई जा सकती हैं।”

तभी बाहर से ज़ोर का धप्प! सुनाई दिया।

फिर एक और।

थामरा खुशी से चीख पड़ी और दौड़कर बाहर गई। एक और विशाल, पका हुआ कटहल अपनी माँ-सी वृक्ष से विदा लेकर ज़मीन पर गिरा था।

“सावधान, लड़की!” जानकी अम्मा ने आवाज़ लगाई।

पार्वती बस मुस्करा दी।

पति की मृत्यु के बाद पार्वती अपनी इकलौती बेटी थामरा को लेकर केरल के कोट्टायम ज़िले में, मीनाचिल नदी के पास स्थित अपनी सास के घर आकर रहने लगी थी।

थामरा बेंगलुरु के एक हॉस्टल में पढ़ती थी और छुट्टियों में घर आती थी।

बेंगलुरु में पली-बढ़ी पार्वती के लिए गाँव का जीवन अपनाना आसान नहीं था, पर अब उसके और उसकी बेटी के लिए आर्थिक सुरक्षा और सिर पर सुरक्षित छत सबसे बड़ी प्राथमिकता थी।

उसी समय थामरा की उत्साहित आवाज़ ने उसके विचारों की कड़ी तोड़ दी।

“अम्मा! यह वाला तो बहुत बड़ा है!”

वह पास की झोपड़ी में रहने वाले मज़दूर की बेटी अम्मू के साथ मिलकर एक विशाल कटहल उठाए बरामदे में चली आ रही थी।दोनों लड़कियाँ मिलकर उसे किसी तरह सँभाल रही थीं।

छुट्टियों के दिनों में थामरा अपना अधिकांश समय अम्मू के साथ गाँव में घूमते-फिरते बिताती थी। अम्मू उससे चार महीने बड़ी थी।

जानकी अम्मा ने दोनों लड़कियों की ओर गर्व से देखा।यह दृश्य उनके लिए कभी पुराना नहीं हुआ था विवाह के बाद जब वह इस प्राचीन थारवाड (पैतृक घर) में आई थीं, तब से लेकर आज तक हर वर्ष ऐसा ही होता आया था।

उनकी स्मृतियाँ अनायास ही तिरुवनंतपुरम ज़िले के अट्टिंगल स्थित अपने मायके की ओर लौट गईं।

उन्हें लगा मानो मसालों के पौधों की सुगंध आज भी उन पुराने गलियारों में तैर रही हो।

बचपन में वे उसी घर के आँगन में नाचती-भागती थीं और अपने पिता के साथ धान के खेतों का निरीक्षण करने जाया करती थीं, जहाँ दिहाड़ी मज़दूर खेती किया करते थे।

फिर उनका विवाह अचुतन से हुआ और वे पाला के इस विशाल थारवाड की गृहलक्ष्मी बन गईं।

अचुतन को फलों के पेड़ों से बड़ा प्रेम था।उन्होंने घर के चारों ओर आम, कटहल और केले के अनेक पेड़ लगवाए थे।

वर्षों तक वे पेड़ हर मौसम में फल देते रहे।

सन् 1982 में अचुतन के निधन के बाद उनका इकलौता बेटा मुकुंदन ही उनके जीने का सहारा बन गया।

लेकिन दो वर्ष बाद एक सड़क दुर्घटना में मुकुंदन भी उनसे हमेशा के लिए बिछड़ गया।

उस त्रासदी को अब तीन वर्ष बीत चुके थे।

जानकी अम्मा केवल इसलिए जीवित थीं क्योंकि मुकुंदन का एक अंश थामरा के रूप में उनके साथ था।

उनकी आँखें भर आईं।

उन्होंने चुपचाप अपने भीतर उठते दर्द को फिर से दिल की गहराइयों में दबा दिया।

"अप्पाची (पैतृक दादी)," थामरा ने पुकारा, "अम्मू कह रही थी कि पास में एक बहुत पुराना, टूटा-फूटा थारवाड है, जहाँ भूत रहते हैं। उसका कोई इतिहास भी है... और वह इतिहास आपको पता है।"

अम्मू ने अपराध-बोध से सिर झुका लिया।

"मुझे नहीं पता था कि थामरा को इसके बारे में कुछ नहीं मालूम," उसने धीमे से कहा।

अप्पाची ने उसे कठोर नज़र से देखा।

"यदि थामरा को यह कहानी कोई सुनाएगा," उन्होंने दृढ़ स्वर में कहा, "तो वह मैं सुनाऊँगी—लेकिन तब, जब वह अठारह वर्ष की हो जाएगी।"

"अप्पाची, मैं तो दो महीने बाद अठारह की हो जाऊँगी," थामरा ने तुरंत विरोध किया।

"अच्छी बात है," जानकी अम्मा ने शांत स्वर में कहा। "फिर अगली छुट्टियों में मैं तुम्हें वहाँ ले चलूँगी और सब कुछ बताऊँगी।"

फिर उन्होंने उँगली उठाकर अम्मू की ओर देखा।

"और तब तक... तुम एक शब्द भी नहीं बोलोगी।"

अम्मू ने चुपचाप सिर हिलाया और वहाँ से खिसक गई।

जिस घर का कोई नाम नहीं लेता था

"अम्मा, क्या आपको उस भूतिया घर के बारे में कुछ पता है?"

थामरा ने अपनी माँ के कंधे के ऊपर से झाँकते हुए पूछा। पार्वती चूल्हे पर चढ़े पायसम (दूध, चावल और गुड़ से बनी मीठी खीर) को धीरे-धीरे चला रही थीं।

उन्होंने जैसे प्रश्न सुना ही नहीं।

"पायसम पाँच मिनट में तैयार हो जाएगा। ज़रा अच्छी बच्ची बनो और अप्पाची से कहो कि अटारी में रखे बड़े चावल के मटकों में से थोड़ा और गुड़ निकाल दें।"

"अम्मा, प्लीज़... अप्पाची से कहिए न, मुझे उस भूतिया घर में ले चलें।"

पार्वती ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा।

“थामरा, तुम जानती हो, वह अपना निर्णय नहीं बदलेंगी।और सच कहूँ तो मैं भी उनसे सहमत हूँ। जो कुछ भी वह कर रही हैं, तुम्हारी भलाई के लिए कर रही हैं।अभी तुम्हारी उम्र ऐसी है कि हर बात का असर मन पर जल्दी पड़ता है।”

थामरा समझ गई कि अगली छुट्टियों तक प्रतीक्षा करना उसके बस की बात नहीं थी।

उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि वह किसी भी तरह उस भूतिया घर का रहस्य जानेगी।

उस दोपहर वह दौड़ती हुई सीमेंट वाले बरामदे में पहुँची, पीछे से अप्पाची के गले में बाँहें डाल दीं और प्यार से बोली,

“अप्पाची... इस बार क्या मैं बड़ी वाली धारा में तैरने जा सकती हूँ?”

जानकी अम्मा का मन एक पल में वर्षों पीछे लौट गया।

उन्हें अपना छोटा-सा मुकुंदन याद आ गया, जो ठीक इसी तरह उनकी गर्दन में बाँहें डालकर उनसे बड़ी धारा में दोस्तों के साथ खेलने जाने की अनुमति माँगता था।

बिलकुल अपने पिता पर गई है, उन्होंने मन ही मन सोचा।

“हाँ,” उन्होंने मुस्कराते हुए कहा, “जा सकती हो।लेकिन सावधानी से।अम्मू को साथ ले जाना।वह तो मछली की तरह तैरती है।और हाँ... ढंग के कपड़े पहनना।”

“ठीक है, अप्पाची!” कहकर थामरा उछलती-कूदती अम्मू के साथ निकल पड़ी।

बड़ी धारा घर से लगभग पंद्रह मिनट की दूरी पर थी।

जानकी अम्मा तब तक उन्हें देखती रहीं, जब तक दोनों लड़कियाँ आँखों से ओझल नहीं हो गईं।

उन्होंने गहरी साँस ली।

काश... मुकुंदन आज जीवित होता।

तब उन्हें अपनी प्यारी थामरा के साथ-साथ एक पोते को भी दुलारने का सुख मिलता।

उनकी आँखों में क्षणभर के लिए उदासी उतर आई।

लेकिन अगले ही पल उन्होंने स्वयं को सँभाल लिया।

जीवन ने उन्हें सिखा दिया था कि स्मृतियों को साथ लेकर भी मुस्कुराना पड़ता है।

गुप्त योजना

बड़ी धारा की ओर जाते हुए अम्मू पूरे रास्ते उत्साह से बोलती रही।

"थामरा, वह भूतिया घर सचमुच डरावना है... लेकिन मुझे वहाँ जाना बहुत अच्छा लगता है।बड़ी धारा से हमें और पंद्रह मिनट पैदल चलना होगा, फिर मुख्य सड़क पार करनी होगी।जानकी अम्मा तुम्हें कभी वहाँ जाने की अनुमति नहीं देंगी... लेकिन अगर तुम चाहो, तो हम चुपके से जा सकते हैं"।

थामरा की आँखें चमक उठीं।

"कैसे?"

"मैं गोपाल चेतन को साथ चलने के लिए कह सकती हूँ।वह हमें वहाँ ले जाएगा।भूतिया थारवाड के ठीक सामने भागीरथी अम्मा रहती हैं।अगर हम उन्हें थोड़ा-सा पैसा दे दें, तो वह उस घर की पूरी कहानी सुना देंगी"।

"कितना पैसा?" थामरा ने उत्सुकता से पूछा।

"दस-पंद्रह रुपये काफी होंगे।उन्हें पुकयिला (तंबाकू का पत्ता) बहुत पसंद है, लेकिन उनके बेटे उन्हें उसके लिए पैसे नहीं देते"।

थामरा आत्मविश्वास से मुस्कराई।

"इतने पैसे तो मैं अप्पाची से ले ही लूँगी।असली समस्या समय की है"।

दोनों कुछ देर चुपचाप चलती रहीं।

फिर अम्मू ने धीरे से कहा,

"अगर हम कह दें कि कल हम बड़ी धारा पर थोड़ी देर और रुकेंगे, तो?"

थामरा कुछ पल सोचती रही।

फिर अचानक उसके चेहरे पर शरारती मुस्कान फैल गई।

"नहीं... कल नहीं।परसों चलते हैं"।

"क्यों?"

"क्योंकि परसों अप्पाची सूखे नारियल (कोप्रा) का छिलका उतरवाने और उससे तेल निकलवाने के लिए तेल मिल जाएँगी।वहाँ उन्हें कम-से-कम चार-पाँच घंटे लगेंगे।वही सबसे सही दिन होगा"।

वह अब पूरी योजना बनाने लगी।

“आज ही मैं उनसे परसों बड़ी धारा जाने की अनुमति माँग लूँगी।कल पूरा दिन घर के काम में उनकी मदद करूँगी—खेत से सब्ज़ियाँ और फल तोड़ूँगी।जब मैं उनकी मदद करती हूँ, तो वह बहुत खुश होती हैं।”

अम्मू उत्साह से उछल पड़ी।

“और मैं आज ही गोपाल चेतन से बात करती हूँ।अगर वह तैयार हो गए, तो कल सुबह जब मैं दूध देने आऊँगी, तुम्हें बता दूँगी।”

थामरा ने हाथ आगे बढ़ाया।

“पक्का?”

“पक्का।”

दोनों ने एक-दूसरे की हथेली थपथपाई।

उस दिन दोनों ने मुश्किल से कुछ देर ही तैराकी की।

उनका अधिकांश समय उस गुप्त अभियान की योजना बनाने में ही बीत गया।

अगली सुबह अम्मू रोज़ की तरह दूध लेकर आई।

जैसे ही थामरा ने उसे देखा, वह तुरंत घर के पीछे बने कुएँ के पास भागी।

वह दोनों की गुप्त बैठक की जगह थी।

अम्मू ने चारों ओर देखा कि कोई सुन तो नहीं रहा।

फिर धीरे से फुसफुसाई,

“गोपाल चेतन तैयार हैं।”

थामरा का चेहरा खिल उठा।

“सच?”

“हाँ... लेकिन उन्होंने कहा है कि बदले में कुछ केले दे देना।”

“वह तो हो जाएगा,” थामरा ने तुरंत कहा।

“ठीक है,” अम्मू बोली, “परसों करीब ग्यारह बजे मुझे बुलवा लेना।अगर मैं पहले आ गई, तो अप्पाची को शक हो जाएगा कि हमने पहले से योजना बनाई थी।”

“चिंता मत करो,” थामरा ने मुस्कराकर कहा।“उस समय तक अप्पाची तेल मिल जा चुकी होंगी।”

दोनों ने जल्दी से बातचीत समाप्त की।

उन्हें डर था कि कहीं कोई उन्हें फुसफुसाते हुए न देख ले।

अम्मू दूध का बर्तन थामरा को देकर सामान्य ढंग से वापस चली गई।

थामरा रसोई के पीछे पहुँची।

उसने देखा, उसकी माँ सिल-बट्टे पर नारियल पीस रही थीं।

वह चुपचाप भीतर झाँकने लगी।

अप्पाची केले, कटहल, जिमीकंद और कद्दुओं की गिनती कर रही थीं।सब कुछ उनके अपने खेत की उपज थी।

“अप्पाची,” थामरा मुस्कराकर बोली, “मैं आपकी मदद कर दूँ?”

जानकी अम्मा ने सिर उठाकर उसे देखा।

“आओ, बेटी।”

थामरा बैठ गई और गिनती में उनका हाथ बँटाने लगी।

कुछ देर बाद उसने सहजता से कहा,

“कल सुबह मैं पीछे वाले खेत से साग भी तोड़ लाऊँगी।”

जानकी अम्मा का चेहरा खिल उठा।

“भगवान तुम्हें सुखी रखे।तुम्हारे घर आने से घर में फिर से रौनक लौट आती है।”

कुछ देर बाद थामरा ने पूछा,

“अप्पाची, आप किसी को काम पर क्यों नहीं रख लेतीं? इतनी सारी गिनती और हिसाब-किताब अकेले करना कितना मुश्किल होता होगा।”

जानकी अम्मा खिलखिलाकर हँस पड़ीं।

“अरे लड़की! क्या तुम्हें लगता है कि मैं बूढ़ी हो गई हूँ?”

उन्होंने मज़ाकिया अंदाज़ में अपनी उँगलियाँ हिलाईं।

“जिस दिन मैंने अपने हाथ-पैर और दिमाग का इस्तेमाल करना छोड़ दिया, उसी दिन मैं भी इन सब्ज़ियों जैसी हो जाऊँगी... बस पड़ी रहूँगी।”

दोनों हँस पड़ीं।

लेकिन थामरा के मन में तो अभी भी केवल एक ही बात घूम रही थी—

योजना पर संकट

थामरा कुछ देर तक अप्पाची के साथ काम करती रही फिर उसने सहज भाव से पूछा,

“अप्पाची, क्या मैं अब से एक दिन छोड़कर बड़ी धारा में तैरने जाया करूँ? यह छोटी वाली धारा अब बिल्कुल अच्छी नहीं लगती। मुझे बड़ी धारा बहुत पसंद है।”

जानकी अम्मा ने मुस्कराकर उसकी ओर देखा।

“जा सकती हो... लेकिन कल नहीं।”

थामरा का दिल जैसे एक पल के लिए थम गया।

“क्यों, अप्पाची?”

“क्योंकि कल मुझे तेल की चक्की जाना है। मैं चाहती हूँ कि तुम मेरे साथ चलो। रास्ता लंबा है, साथ रहेगा तो अच्छा लगेगा।”

थामरा का चेहरा उतर गया।

“अरे, अप्पाची! मैंने तो सोचा था कि एक दिन मैं आपकी घर के कामों में मदद करूँगी और अगले दिन बड़ी धारा चली जाया करूँगी।”

जानकी अम्मा ने स्नेह से उसकी ठोड़ी उठाई।

“नहीं, बेटी। कल मुझे तुम्हारी ज़रूरत है।”

थामरा ने अनमने मन से सिर हिला दिया और रसोई से बाहर निकल आई।

उसका पूरा बनाया हुआ कार्यक्रम एक ही पल में बिखर गया था।

अब वह अम्मू तक संदेश भी नहीं पहुँचा सकती थी।

गोपाल चेतन को भी खबर देनी थी।

लेकिन कोई उपाय नहीं था।

हताश होकर वह घर के चारों ओर फैले खेतों में यूँ ही टहलने लगी।

अगली सुबह थामरा की आँख खुली तो वह सीधे रसोई में पहुँची।

पार्वती चूल्हे के सामने खड़ी थीं।

पुट्टु कुडम में से भाप उठ रही थी और वे धैर्य से पुट्टु पकने की प्रतीक्षा कर रही थीं।

"अम्मा," थामरा ने उदास स्वर में कहा, "मेरा आज अप्पाची के साथ तेल की चक्की जाने का बिल्कुल मन नहीं है"।

पार्वती उसकी ओर मुड़ीं और मुस्करा दीं।

"कौन जा रहा है आज तेल की चक्की?"

थामरा ने आश्चर्य से उनकी ओर देखा।

"अप्पाची?"

"नहीं," पार्वती बोलीं।"रात से उनके घुटनों में बहुत दर्द है।वे बिस्तर पर हैं"।

थामरा कुछ समझ नहीं पाई।

पार्वती ने आगे कहा,

"उन्होंने अम्मू के हाथ संदेश भिजवाया है कि वह तुम्हें आज बड़ी धारा ले जाए"।

थामरा की आँखें चमक उठीं।

"सिर्फ आज ही नहीं," पार्वती ने मुस्कराते हुए कहा, "जब तक तुम यहाँ हो, वह रोज़ तुम्हें बड़ी धारा ले जाएगी"।

"सच?"

थामरा खुशी से चीख पड़ी।

वह दौड़कर अपनी माँ से लिपट गई और लगभग उन्हें ज़मीन से उठा ही लिया।

पार्वती हँस पड़ीं।

“वह तुमसे बहुत प्यार करती हैं, थामरा।”

फिर धीरे से बोलीं,

“और सच कहूँ, तुम्हें मुझसे कहीं बेहतर अनुशासन भी वही सिखाती हैं।”

थामरा भागती हुई अप्पाची के कमरे में पहुँची।

उसने उन्हें कसकर गले लगाया और उनके गालों पर एक के बाद एक कई चुंबन जड़ दिए।

“अप्पाची... आप दुनिया की सबसे अच्छी अप्पाची हैं!”

जानकी अम्मा हँस पड़ीं।

“जा, लड़की। खूब तैरना। अगर देर तक रुकने वाली हो, तो साथ में कुछ केले और थोड़ा गुड़ भी ले जाना।”

थामरा को अचानक याद आया—

गोपाल चेतन!

वह तो उनके लिए केले ले जाना ही भूल गई थी।

“अप्पाची,” उसने संकोच से कहा, “मुझे थोड़े पैसे भी दे दीजिए। मैं रास्ते में थट्टुकडा से कुछ खाने की चीज़ लेना चाहती हूँ।”

जानकी अम्मा ने तुरंत सिर हिलाया।

“नहीं। बाहर का खाना खाने की कोई ज़रूरत नहीं।”

फिर उनका स्वर नरम हो गया।

“तुम्हारी माँ घर पर जो चाहे बना सकती है।”

उन्होंने संदूक खोला और कुछ पैसे निकालकर उसकी हथेली पर रख दिए।

“लो… यह कुछ जेब-खर्च है। यहाँ रहते हुए अगर कभी कोई ज़रूरत पड़ जाए तो काम आएगा। और कभी-कभी अम्मू के लिए भी कुछ ले दिया करना। वह तुम्हें रोज़ बड़ी धारा तक ले जाती है।”

थामरा ने हथेली खोली।

उसमें पचास रुपये का नोट रखा था।

उस समय उसके लिए वह किसी खज़ाने से कम नहीं था।

अब उसके पास—

गोपाल चेतन के लिए केले थे,

भागीरथी अम्मा के लिए पुकयिला खरीदने के पैसे थे,

और रोमांचक यात्रा पर निकलने की पूरी तैयारी भी।

उसे लगा, जैसे किस्मत स्वयं उसकी सहायता कर रही हो।

उसका मन खुशी से भर उठा।

कडनाड का रहस्यमय इल्लम

अगली सुबह ठीक दस बजे अम्मू एक तौलिया और कपड़ों का जोड़ा लेकर आ पहुँची। कुछ ही देर बाद थामरा भी तैयार होकर बाहर निकली। उसने मुस्कराकर अपनी माँ को हाथ हिलाया और दोनों लड़कियाँ पहाड़ी रास्ते से बड़ी धारा की ओर चल पड़ीं।

गाँव के चर्च के पास पहुँचते ही अम्मू ने सामने खड़े गोपाल चेतन को देखा और हाथ हिलाकर इशारा किया। थामरा ने अपने साथ लाए दो छोटे-छोटे पके केले के गुच्छे उन्हें थमा दिए। गोपाल ने मुस्कराकर उन्हें स्वीकार किया और तीनों अपनी रोमांचक यात्रा पर निकल पड़े।

वे बड़ी धारा को पार कर मुख्य सड़क तक पहुँचे। सड़क के उस पार फैले हरे-भरे धान के खेतों के बीच सँकरी पगडंडी थी। एक छोटे-से तालाब के किनारे से होते हुए गोपाल उन्हें पड़ोसी गाँव कडनाड की ओर ले चला।

———

चिलचिलाती धूप में लगभग पैंतालीस मिनट पैदल चलने के बाद थामरा थकने लगी।

अम्मू ने उसका हाथ थाम लिया।

“बस पाँच मिनट और,” उसने मुस्कराकर कहा।

उसी समय उनकी नज़र सामने फैले एक घने परिसर पर पड़ी।

ऊँचे-ऊँचे नीम के वृक्षों की छाया में, उनके बीच अश्वगंधा और तुलसी के अनगिनत पौधे उगे हुए थे।हर ओर इतनी घनी हरियाली थी कि उसके भीतर छिपा मकान मुश्किल से दिखाई देता था।

हवा में औषधीय पौधों की तीखी, सुगंधित महक तैर रही थी।

थामरा ने कौतूहल से पूछा,

“यह किसका घर है?”

गोपाल ने उत्तर दिया,

“यह एक बहुत प्रसिद्ध वैद्यन (पारंपरिक आयुर्वेदाचार्य) का घर है।लोग कहते हैं कि वे धातुओं से सोना बना लेते हैं और देर रात तक मंत्रोच्चार करते रहते हैं।तुम्हारी अप्पाची उन्हें अच्छी तरह जानती हैं।कई बार मेरे हाथों अपने खेत की उपज उनके घर भिजवा चुकी हैं”।

पीढ़ियों से उस वैद्यन का परिवार वहीं रहकर आयुर्वेद की साधना करता आया था।

जिज्ञासावश थामरा थोड़ा और आगे बढ़ी और भीतर झाँकने लगी।

वह और अम्मू दोनों उस परिसर को देखकर मंत्रमुग्ध रह गईं।

चारों ओर अनगिनत दुर्लभ जड़ी-बूटियाँ, बेलें और पेड़ उगे हुए थे।बगीचे को किसी ने तराशा नहीं था, फिर भी उसमें एक अद्भुत सौंदर्य था—मानो प्रकृति ने स्वयं उसे रचा हो।

थामरा ने अपने जीवन में पहली बार इतने प्रकार के औषधीय पौधे एक साथ देखे थे।

वह सचमुच एक जीवित औषधालय था, जहाँ हर दवा के लिए ताज़ी जड़ी-बूटियाँ सहज उपलब्ध थीं।

परिसर के एक कोने में एक कुलम (तालाब) भी था, जिसका उपयोग शायद स्नान, शुद्धिकरण और उपचार के लिए किया जाता होगा।

गोपाल ने बताया,

“यहाँ दूर-दूर से विद्यार्थी भी शिक्षा लेने आते हैं”।

घने वृक्षों के बीच से घर का आँगन मुश्किल से दिखाई देता था।

थामरा ने मन ही मन निश्चय किया कि लौटकर वह अप्पाची से उस रहस्यमय वैद्यन के बारे में अवश्य पूछेगी, जिसके बारे में कहा जाता है कि वह धातुओं को सोने में बदल देता है।

पारंपरिक चिकित्सा सीखने का उसका गुप्त सपना इस दृश्य को देखकर और भी प्रबल हो उठा।

कुछ दूर आगे चलकर गोपाल उन्हें केले के पेड़ों से घिरे एक छोटे-से खपरैल वाले घर तक ले आया।

यात्रा का रोमांच अब हवा में घुलने लगा था।

अचानक थामरा फुसफुसाई,

“अरे! पुकयिला तो हम लाना ही भूल गए!”

गोपाल मुस्कराया।

“चिंता मत करो। पहले मैं तुम्हारी मुलाक़ात भागीरथी अम्मा से करा देता हूँ। यहाँ सब उन्हें भगी अम्मा कहते हैं। फिर मैं दो मिनट में सड़क किनारे की दुकान से पुकयिला ले आता हूँ।”

“अम्मा…!”

गोपाल चेतन ने ऊँची आवाज़ लगाई।

अंदर से एक दुबली-पतली वृद्धा बाहर आईं।

वे एक पैर के सहारे उछलते हुए चल रही थीं। दूसरा पैर घुटने से मुड़ा हुआ था। हाथ में एक लंबी लकड़ी की छड़ी थी, जिस पर वे पूरा भार डाले थीं।

“अम्मा,” गोपाल ने आदर से कहा, “मैं मीनाच्चिल नदी के उस पार से गोपाल हूँ। आपका पोता और मैं साथ पढ़ते थे।”

“अरे… गोपी!”

वृद्धा का चेहरा खिल उठा।

उन्होंने मुस्कराकर तीनों को बरामदे में बैठने का संकेत किया।

“घर में कोई नहीं है,” उन्होंने कहा। “मेरा बेटा और बहू धान के खेत में गए हैं।”

गोपाल थोड़ा झुककर बोला,

“अम्मा, मैं दो लड़कियों को लाया हूँ। ये उस भुतहे थारवाड की कहानी सुनना चाहती हैं।”

भगी अम्मा की आँखों में तुरंत चमक आ गई।

“अच्छा...! लेकिन क्या इस बूढ़ी औरत के लिए पुकयिला भी लाए हो?”

गोपाल हँस पड़ा।

“आप इनसे बातें कीजिए, अम्मा। मैं अभी लेकर आता हूँ।”

भगी अम्मा संतोष से मुस्कराईं।

“और हाँ... लौटते समय सड़क वाले ठेले से कुछ वड़ा भी लेते आना। मेरी बहू कभी नमकीन नहीं बनाती। अब बुढ़ापे में मन छोटी-छोटी चीज़ों के लिए तरस जाता है।”

थामरा अब अपनी उत्सुकता रोक नहीं पा रही थी।

“अम्मा,” उसने पूछा, “क्या आप हमारे साथ उस भुतहे घर तक चल पाएँगी और उसकी कहानी सुनाएँगी?”

भगी अम्मा हल्के से मुस्कराईं।

“चलने की ज़रूरत ही क्या है, बेटी?”

उन्होंने सामने इशारा किया।

“यहीं मेरे पास बैठो... और सीधा सामने देखो।”

थामरा और अम्मू उनके दोनों ओर बैठ गईं।

उन्होंने उसी दिशा में देखा, जहाँ भगी अम्मा देख रही थीं।

तभी पहली बार उनकी नज़र उस पर पड़ी।

पत्थरों से बना एक विशाल भवन...

घने जंगल के बीच लगभग पूरी तरह छिपा हुआ।

जंगली वृक्षों और लताओं ने उसे इस तरह अपने भीतर समेट लिया था, मानो वर्षों से प्रकृति स्वयं उसे दुनिया की नज़रों से छिपाने का प्रयास कर रही हो।

दूर केवल उस विशाल थारवाड का अकेला कुआँ दिखाई दे रहा था।

उस दृश्य में कुछ ऐसा था जिसने पूरे वातावरण को रहस्य और प्रतीक्षा से भर दिया।

उसी समय गोपाल लौट आया।

उसने पुकयिला भगी अम्मा के हाथ में रख दिया।

उन्होंने अभ्यासपूर्ण सहजता से तंबाकू का पत्ता मोड़ा, उसे अपने मुँह में दबाया और गहरी संतुष्टि की साँस ली।

उनके चेहरे पर एक स्नेहिल मुस्कान फैल गई।

“अब,” उन्होंने बरामदे की दीवार से टिकते हुए कहा, “अम्मा आराम से कहानी सुना सकती है”।

उन्होंने अपनी आवाज़ धीमी कर ली, मानो सामने खड़ा वह प्राचीन इल्लम स्वयं उनकी बात सुन रहा हो।

“यह कथा मुझे मेरी मौतुषी (नानी) ने सुनाई थी।पीढ़ी-दर-पीढ़ी यह हमारे परिवार में चली आती रही है।हमारे कुल की स्त्रियाँ प्रायः नब्बे वर्ष से अधिक जीती थीं।

मैं वहीं से आरंभ करूँगी जहाँ ओट्टमथुल्लल इस कथा का प्रारंभ करता है, और फिर उसमें वे बातें जोड़ूँगी जो मेरे पूर्वजों ने सँभालकर रखीं।

वह विशाल इल्लम (नम्बूदरी ब्राह्मणों का पारंपरिक निवास) रामन नम्बूदरी थम्पुरान का थारवाड था।उनके साथ वहाँ उनकी पत्नी मीनाक्षी, उनकी पुत्री सरस्वती और उनकी माता पद्मावती रहती थीं।

उन दिनों वह थारवाड नौकरों, सहायकों और आने-जाने वालों से हमेशा जीवंत रहता था...”

पुराने इल्लम के भीतर

भगी अम्मा ने बताया कि ओट्टमथुल्लल में उस इल्लम का इतना सजीव वर्णन किया गया है कि सुनने वाला उसे अपनी आँखों के सामने खड़ा हुआ महसूस करने लगे फिर भी, उस भूमि के लोग उसे और भी अच्छी तरह जानते थे।

उन्होंने सामने फैले घने जंगल की ओर इशारा करते हुए कहा,

“यदि तुम अभी खड़ी होकर ध्यान से देखो, तो बेलों और झाड़ियों के बीच आज भी उस इल्लम की एल (L) आकार की बनावट पहचान सकती हो”।

थामरा और अम्मू उत्सुकता से उठकर खड़ी हो गईं।

भगी अम्मा ने हाथ से दिशा दिखाते हुए कहा,

“सीधा खड़ा भाग थम्पुरान का कक्ष था। दूसरी ओर फैले हिस्से में दो किडप्पुमुरि (शयनकक्ष), एक चायिप (भंडार अथवा पार्श्व कक्ष) और विशाल अडुक्कला (रसोई) थी।”

“घर बहुत बड़ा नहीं था,” उन्होंने आगे कहा, “लेकिन उसका प्रत्येक कमरा इतना विशाल, मजबूत और पक्के पत्थरों से बना था कि लगता था मानो सदियों तक अडिग रहेगा।”

दोनों भागों के सामने चौड़ा बरामदा बना था।

ऊपर लाल माटी की ढलानदार खपरैल की छत, किनारे खुले, और बीच में ठंडी छाया।

बरसात के दिनों में वही आश्रय बन जाता।

वहीं पूजा-पाठ और धार्मिक अनुष्ठान होते।

और वहीं बैठकर थम्पुरान अंबलम (मंदिर) समिति की बैठकें किया करते थे।

थामरा अब तक पूरी तरह उस कथा में डूब चुकी थी।

“अम्मा,” उसने उत्साह से पूछा, “क्या हम किसी दिन उस इल्लम के भीतर जा सकते हैं?”

भगी अम्मा मुस्कराईं।

“तुम्हें रोकने वाला अब वहाँ कोई नहीं है।”

कुछ क्षण रुककर उन्होंने जोड़ा,

“लेकिन गाँव का कोई आदमी उधर नहीं जाता। सबका विश्वास है कि वह स्थान अभिशप्त है... वहाँ भूत बसते हैं।”

थामरा और अम्मू ने एक-दूसरे की ओर देखा।

बिना कुछ कहे दोनों ने मन ही मन निश्चय कर लिया—

वे एक दिन उस इल्लम को अवश्य देखेंगी।

मुख्य भवन के अतिरिक्त वहाँ दो कमरों का एक छोटा-सा अतिथि-गृह भी था, जहाँ रिश्तेदार और अतिथि ठहरते थे।

पूरा परिसर पत्थरों से निर्मित था और प्रत्येक इमारत पर ढलानदार खपरैल की छत थी।

उन सबसे थोड़ा हटकर एक विशाल गोलाकार पत्थर का मंडप बना था।

उसके मध्य भगवान विष्णु की प्रतिष्ठित प्रतिमा विराजमान थी।

वहाँ विवाह होते थे।

चोरूनू (बच्चे को पहली बार अन्न खिलाने का संस्कार) भी वहीं सम्पन्न होता था।

भगी अम्मा कुछ क्षणों के लिए रुक गईं।

“लेकिन…”

उन्होंने धीरे से कहा,

“एक समय ऐसा भी आया था जब मीनाक्षी ने उस मंडप को अपने एक स्वप्न को साकार करने के लिए उपयोग करने की योजना बनाई थी।”

थामरा तुरंत आगे झुक आई।

“कौन-सा स्वप्न?”

भगी अम्मा मुस्करा दीं।

“धैर्य रखो, लड़की।”

“उसकी बारी भी आएगी।”

“और यदि तुम सचमुच साहसी हुई… तो एक दिन स्वयं उस इल्लम में जाकर सब देख भी सकती हो।”

“हालाँकि,” उन्होंने धीमे स्वर में कहा, “गाँव वाले आज भी उसे भूतों का घर मानते हैं।”

थामरा और अम्मू की आँखों में फिर वही चमक लौट आई।

इल्लम में थम्पुरान के कक्ष तक किसी की सहज पहुँच नहीं थी।

यहाँ तक कि सफाई करने वाली स्त्रियाँ भी अपना काम समाप्त करते ही बिना किसी आहट के वहाँ से चली जाती थीं।

उत्तर दिशा में स्थित वह विशाल कक्ष पूरी तरह थम्पुरान के लिए आरक्षित था।

उसमें आम की लकड़ी से बने दो भव्य पलंग रखे थे।

उनकी नक्काशी और विशालता उस कक्ष को राजसी गरिमा देती थी।

परंतु...

भगी अम्मा की आवाज़ अचानक गंभीर हो गई।

“उस कमरे का उपयोग केवल विश्राम के लिए नहीं होता था।”

“वहाँ ऐसे काम भी होते थे जिनका नाम लेने का साहस कोई नहीं करता था।”

मुख्य भवन से वह भाग अलग-सा प्रतीत होता था।

फिर भी दोनों को जोड़ता एक लंबा बरामदा था—

मानो दो बिल्कुल भिन्न संसारों के बीच कोई गुप्त मार्ग।

रामन नम्बूदरी, जिन्हें पूरा इलाका थम्पुरान कहकर पुकारता था, लंबे, दुबले और प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले व्यक्ति थे।

वे प्रायः केवल मुंडु और थोर्थु धारण करते थे।

उनका सिर पूरी तरह मुंडा रहता, केवल बाईं ओर सलीके से बँधी हुई कुडुमि (नम्बूदरी ब्राह्मणों की शिखा) उनकी पहचान थी।

उन्हें अपनी उस शिखा पर अत्यधिक गर्व था।

गाँव में वे अत्यंत अलोकप्रिय थे।

लोग उन्हें कंजूस, कठोर और अहंकारी मानते थे।

धान के खेतों में काम करने वाले मज़दूर भी उनसे जितना संभव हो सके, दूर ही रहना पसंद करते थे।

यहाँ तक कि अन्य नम्बूदरी परिवारों में भी उनका स्थान सबसे ऊँचे वर्ग में माना जाता था।

वे परंपराओं के इतने कट्टर अनुयायी थे कि स्वयं को प्राचीन हिन्दू व्यवस्था का वास्तविक संरक्षक समझते थे।

रात होने पर उनका एक निश्चित नियम था।

वे अपनी पत्नी मीनाक्षी के कक्ष के बाहर जाकर तीन बार हल्की खाँसी देते।

यह संकेत होता कि वे अपने दाम्पत्य अधिकार का दावा करने आए हैं।

खाँसी सुनते ही मीनाक्षी चुपचाप बाहर निकलतीं।

यदि कोई पूछता, तो कहतीं कि उन्हें शौच या लघुशंका के लिए बाहर जाना है।

फिर वे थम्पुरान के कक्ष में चली जातीं।

कुछ समय बाद वापस लौट आतीं और अपनी बेटी सरसु के पास लेट जातीं।

लेकिन जैसे-जैसे सरसु बड़ी होने लगी, यह अभिनय कठिन होता गया।

वह अक्सर कहती,

"अम्मा, मैं भी आपके साथ चलती हूँ।अँधेरे में कहीं आप गिर न जाएँ"।

यह सुनकर थामरा और अम्मू ने एक-दूसरे की ओर अर्थपूर्ण नज़रों से देखा।

अब वे समझने लगी थीं कि उस युग में स्त्रियों का जीवन कितना बंधा हुआ था।

"मीनाक्षी..."

भगी अम्मा ने धीरे-धीरे अगला पात्र सामने रखा।

"उन्हें सब चेरिया थम्पुराटी—यानी घर की छोटी स्वामिनी—कहते थे"।

वे अत्यंत सरल स्वभाव की स्त्री थीं।

सिर से पाँव तक सोने के आभूषणों (स्वर्णम्) से लदी रहतीं, पर उनका पूरा संसार उसी इल्लम की चारदीवारी तक सीमित था।

उन दिनों नम्बूदरी स्त्रियों को अंथर्जनम् या अकथम्मा कहा जाता था—

अर्थात् वे स्त्रियाँ जो घर के भीतर ही रहती थीं।

उन्हें न तो अन्य जातियों के पुरुष देख सकते थे और न ही अपने परिवार से बाहर के नम्बूदरी।

मीनाक्षी अलप्पुझा जिले के प्रभावशाली जमींदार शंकरन नम्बूदरी की पुत्री थीं।

अन्य नम्बूदरी कन्याओं की तरह उन्हें औपचारिक शिक्षा नहीं मिली थी।

लेकिन उनकी माँ ने आग्रह करके एक आशान (गुरु) बुलवाया था, जिसने उन्हें मिट्टी पर उँगली से अक्षर लिखना सिखाया।

विवाह के बाद भी मीनाक्षी ने निश्चय किया कि उनकी बेटी सरसु अशिक्षित नहीं रहेगी।

थम्पुरान की इच्छा के विरुद्ध जाकर उन्होंने पहले स्वयं उसे अक्षर सिखाए।

फिर उसे एझुथुपल्ली (पारंपरिक ग्राम पाठशाला) भेजने का निर्णय लिया।

यहीं से...

भगी अम्मा कुछ क्षणों के लिए रुकीं।

"...इस कहानी का भाग्य बदलना शुरू हुआ"।

सरसु की दुनिया

भगी अम्मा ने आगे कहना शुरू किया—

मीनाक्षी बहुत कम बोलती थीं।

वे न तो थम्पुरान से बहस करतीं, न शिकायत करतीं, न ही ऊँची आवाज़ में अपना विरोध प्रकट करतीं।

लेकिन इसका अर्थ यह नहीं था कि उनमें साहस की कमी थी।

उनके विरोध का अपना अलग ही तरीका था।

जब कभी वे थम्पुरान से अप्रसन्न होतीं, तो स्वयं भोजन करना छोड़ देतीं।

और कभी-कभी इल्लम के छोटे बछड़े को थम्पुरान के बरामदे से बाँध देतीं, बिना चारा दिए।

बछड़ा भूख से लगातार रँभाता रहता।

गोशाला में बँधी उसकी माँ व्याकुल होकर उत्तर देती।

दोनों की करुण पुकार पूरे आँगन में गूँजती रहती।

थम्पुरान उस आवाज़ को अधिक देर तक सहन नहीं कर पाते।

अंततः उन्हें झुकना ही पड़ता।

एक और कारण भी था।

वे अपने ससुर शंकरन नम्बूदरी को नाराज़ करने का साहस नहीं कर सकते थे।

उनका प्रभाव दूर-दूर तक था।

सरसु के जन्म के बाद मीनाक्षी ने एक पुत्र को भी जन्म दिया था।

लेकिन वह बालक जन्म के कुछ ही समय बाद चल बसा।

उसके बाद मीनाक्षी कभी माँ नहीं बन सकीं।

इसी बात को लेकर थम्पुरान के मन में एक ही चिंता बनी रहती—

वंश आगे कौन बढ़ाएगा?

एक दिन उन्होंने मीनाक्षी से दूसरा विवाह करने की बात छेड़ी।

“मुझे पुत्र चाहिए,” उन्होंने निर्विकार स्वर में कहा।

“मेरी सम्पत्ति मेरे ही वंशजों के पास रहनी चाहिए।”

उन दिनों स्त्रियों को पैतृक सम्पत्ति में कोई अधिकार नहीं था।

मीनाक्षी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

वे चुप रहीं।

उनका मौन ही उनका प्रतिरोध था।

थम्पुरान ने फिर कहा,

“मैं तब तक प्रतीक्षा करूँगा, जब तक सरसु रजस्वला नहीं हो जाती।उसके बाद दूसरा विवाह करूँगा।”

उन्हें विश्वास था कि तब तक उनकी बेटी इतनी बड़ी हो जाएगी कि सब समझ सकेगी।

सरसु...

जिसे घर में सब प्यार से कोच्चु थम्पुराटी—यानी “छोटी स्वामिनी”—कहते थे।

वह अत्यंत सुंदर बालिका थी।

उसकी माँ चाहती थीं कि वह पढ़े-लिखे और संसार को समझे।

नम्बूदरियों के लिए दो विशेष मठ थे, जहाँ केवल लड़कों को शिक्षा दी जाती थी।

किसी भी नम्बूदरी कन्या को वहाँ प्रवेश नहीं मिलता था।

दूसरी ओर थीं एझुथुपल्ली—

गाँव की पारंपरिक पाठशालाएँ, जो प्रायः चर्चों से जुड़ी होती थीं और सभी जातियों के बच्चों के लिए खुली थीं।

लेकिन अधिकांश नम्बूदरी परिवार अपने बच्चों को वहाँ भेजने से डरते थे।

उन्हें लगता था कि दूसरी जातियों के संपर्क से उनकी “शुद्धता” नष्ट हो जाएगी।

मीनाक्षी ने इन सबकी परवाह नहीं की।

उन्होंने थम्पुरान को मना लिया।

हालाँकि...

एक शर्त के साथ।

विद्यालय में सरसु के लिए एक अलग मेज़ रखी गई।

इतनी दूर कि वह किसी अन्य बच्चे को छू न सके...

और इतनी पास कि आशान की शिक्षा सुन सके।

उसे प्रतिदिन स्कूल लाने और वापस ले जाने के लिए एक नायर स्त्री भी नियुक्त की गई।

विद्यालय में सरसु की दो सहेलियाँ थीं।

अंजना—

जो नायर परिवार से थी।

और...

चक्की—

जो एझवा समुदाय की लड़की थी।

दोनों लगभग उसकी ही उम्र की थीं।

अंजना हमेशा एक मर्यादित दूरी बनाए रखती।

उसे जाति की सीमाएँ बचपन से सिखाई गई थीं।

लेकिन चक्की बिल्कुल अलग थी।

चंचल...

निडर...

और बेपरवाह।

सरसु को उसी का साथ सबसे अधिक प्रिय था।

वह रोज़ किसी न किसी बहाने चक्की को अपने साथ घर लौटने के लिए मना लेती।

चक्की भी मान जाती।

उसके मन में एक गुप्त इच्छा थी—

काश...

वह एक बार सरसु के घर जाकर वहाँ का भोजन खा पाती।

लेकिन उसने कभी यह इच्छा ज़ुबान पर नहीं लाई।

जब सरसु उत्साह से चक्का प्रदमन (कटहल से बना पायसम) का वर्णन करती, तो चक्की के मुँह में पानी भर आता।

उधर...

सरसु को चक्की का जीवन किसी स्वप्न जैसा लगता।

वह सोचती—

काश...

वह भी बिना किसी पहरेदार के घर से बाहर निकल सकती।

धाराओं में नहा सकती।

पेड़ों पर चढ़ सकती।

बागों में दौड़ सकती।

खुले बालों के साथ हवा में भाग सकती।

और कक्षा में सब बच्चों के साथ बैठकर पढ़ सकती।

स्कूल से लौटते समय चक्की कभी-कभी फुर्ती से पेड़ों पर चढ़ जाती।

सरसु नीचे खड़ी उसे देखती रहती।

उसका मन भी वैसा ही करने को मचलता।

लेकिन वह जानती थी—

यदि पिता को इसकी भनक भी लग गई...

तो वे उसकी पढ़ाई हमेशा के लिए बंद कर देंगे।

सरसु अपने पिता से डरती थी।

बचपन से उसने उन्हें नौकरों पर, माँ पर और यहाँ तक कि अपनी दादी पर भी अधिकार जमाते देखा था।

कभी-कभी पिता उससे स्कूल या उसकी सहेलियों के बारे में पूछ लेते।

लेकिन उनमें कोई वास्तविक रुचि नहीं होती।

वे बार-बार केवल एक बात दोहराते—

"दूसरी जातियों की लड़कियों से दूर रहो"।

फिर भी उन्होंने उसके लिए एक कनक्कु आशान (गणित के शिक्षक) की व्यवस्था की।

कारण...

वे चाहते थे कि सरसु बड़ी होकर उनकी सौ एकड़ ज़मीन, खेतों की उपज और सैकड़ों कामगारों का हिसाब-किताब संभाल सके।

इसी इल्लम में थम्पुरान की वृद्ध माता पद्मावती भी रहती थीं।

सब उन्हें वलिया थम्पुराटी—अर्थात् “बड़ी स्वामिनी”—कहते थे।

घर में सबसे अधिक आयु उन्हीं की थी।

फिर भी वे आश्चर्यजनक रूप से चुस्त थीं।

उनका अधिकांश समय पूजा-पाठ और धार्मिक कार्यों में बीतता।

उनका और थम्पुरान का संबंध औपचारिक था।

दोनों यथासंभव एक-दूसरे के सामने आने से बचते।

लेकिन जब कभी पुत्र उनकी सहनशक्ति की सीमा पार कर देता...

तो वे केवल एक शब्द कहतीं—

“नम्बूदरी!”

और उस एक शब्द में इतना कठोर तिरस्कार होता कि किसी लंबे उपदेश की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।

दोपहर का सूरज अब और तेज़ हो चला था।

भगी अम्मा की आवाज़ के साथ तीनों बच्चे मानो धीरे-धीरे वर्तमान से निकलकर उस भूले-बिसरे युग में प्रवेश कर चुके थे।

भगी अम्मा ने तीनों की ओर देखा और मुस्कराईं।

“अब...”

उन्होंने कहा,

“तुम इस कथा के सभी प्रमुख पात्रों से मिल चुके हो।”

उन्होंने सामने दूर दिखाई देते उस वीरान इल्लम की ओर देखा।

“अब असली कहानी शुरू होती है...”

थम्पुरान की परछाई

भगी अम्मा ने अपनी पीठ दीवार से टिकाई, आँखें कुछ क्षणों के लिए मूँद लीं, जैसे स्मृतियों के किसी बहुत पुराने दरवाज़े को खोल रही हों।

“ओट्टमथुल्लल की कथा,” उन्होंने धीमे स्वर में कहना शुरू किया, “उस दिन से आरंभ होती है जब थम्पुरान अपने किडप्पुमुरि के बाहर बने विशाल बरामदे में लकड़ी की बाँहों वाली कुर्सी पर आराम से बैठे थे”।

वह कुर्सी पूरे बरामदे में रखी एकमात्र फर्नीचर थी।

उन्होंने अपना मुंडु और थोर्थु घुटनों तक समेट रखा था और पूरी बेफ़िक्री से उस पर पसरे हुए थे।

उनके सामने दो व्यक्ति बैठे थे।

एक था गाँव का थट्टन—सुनार।

दूसरा था आशारी—बढ़ई।

बढ़ई को इसलिए बुलाया गया था कि वह सरसु के लिए अलग पलंग बनाए।

बेटी अब बड़ी हो रही थी।

अपनी माँ के साथ एक ही बिस्तर पर सोना अब उसके लिए उचित नहीं माना जा रहा था।

उधर सुनार, थम्पुरान के हाथ में रखे सोने के छोटे-से कर्णफूल को ध्यान से देख रहा था।

सरसु शीघ्र ही युवावस्था में प्रवेश करने वाली थी।

परिवार की परम्परा के अनुसार उसके प्रथम रजस्वला होने पर भव्य समारोह आयोजित किया जाना था।

थम्पुरान चाहते थे कि कर्णफूल बड़े दिखाई दें...

लेकिन उनमें एक रत्ती भी अतिरिक्त सोना न जोड़ना पड़े।

सुनार ने असमर्थता जताई।

“बिना और सोना मिलाए यह सम्भव नहीं है”।

थम्पुरान का चेहरा कठोर हो गया।

सुनार ने व्यंग्य से मुस्कराते हुए कहा,

“तो फिर पास वाले वैद्यन से कहिए न...

जो रसशास्त्र जानते हैं।

वह पारद (पारा) से स्वर्ण बना देंगे।

आपका खर्च भी बच जाएगा”।

थम्पुरान की केवल एक कठोर दृष्टि पर्याप्त थी।

सुनार तुरंत चुप हो गया।

थामरा यह सुनकर उलझ गई।

“अम्मा,” उसने पूछा,

“रसशास्त्र क्या होता है?

और पारे से सोना कैसे बनाया जा सकता है?”

भगी अम्मा ने कंधे उचकाए।

“इतनी गहराई मुझे भी नहीं मालूम, बेटी”।

“ओट्टमथुल्लल में बस इतना कहा गया है कि पास ही रहने वाले एक वैद्यन तंत्रम् और रसशास्त्र में सिद्ध थे।

वे पारद से औषधियाँ भी बनाते थे...

और सोना भी”।

उन्होंने उँगली उठाकर कहा,

“लेकिन उस वैद्यन का महत्व तुम्हें बाद में समझ आएगा”।

थामरा तुरंत अपने घर के थर्मामीटर के बारे में सोचने लगी।

उसे याद आया कि उसकी माँ हमेशा कहती थीं—

“थर्मामीटर कभी मुँह में मत तोड़ना।

उसमें पारा होता है।

वह ज़हरीला होता है"।

उसने मन ही मन निश्चय किया कि घर लौटकर वह रसशास्त्र के बारे में अवश्य पढ़ेगी।

और अप्पाची से भी पूछेगी।

आख़िर उनके परदादा आयुर्वेदाचार्य थे।

"क्या वही वैद्यन इस भुतहे इल्लम से जुड़े हुए थे?"

थामरा ने फिर पूछा।

भगी अम्मा ने हल्की झुंझलाहट से उसकी ओर देखा।

"अरे लड़की!

इतनी जल्दी क्यों कर रही हो?

धैर्य रखो।

समय आने पर तुम्हें स्वयं समझ में आ जाएगा कि सब एक-दूसरे से कैसे जुड़े हैं"।

उधर थम्पुरान ने आकाश की ओर देखा।

सूर्य काफी ऊपर चढ़ चुका था।

वे तुरंत अपनी कुर्सी से उठ खड़े हुए।

अब धान के खेतों का निरीक्षण करने का समय हो गया था।

सुनार और बढ़ई दोनों से लेन-देन तय हो चुका था।

मजदूरी के बदले उन्हें अगले दो वर्षों तक निश्चित मात्रा में धान और केले दिए जाएँगे।

नकद धन देना थम्पुरान को कभी पसंद नहीं था।

वे अत्यन्त कंजूस थे।

मंदिरों के संरक्षक होने और गाँव की बड़ी ज़मीनों के स्वामी होने के कारण उनका प्रभाव इतना अधिक था कि कारीगर भी उनकी शर्तें मानने को विवश रहते।

थारवाड की खेती दूर-दूर तक फैली हुई थी।

यदि वे चाहते, तो कोई नौकर उनकी कुर्सी उठाकर साथ चलता।

कोई दूसरा उनके ऊपर छाता ताने रहता।

लेकिन थम्पुरान कभी किसी को अपने साथ नहीं ले जाते थे।

कारण...

वे किसी से साझा नहीं करना चाहते थे।

खासतौर पर वह बात...

जिसके लिए वे प्रतिदिन खेतों का चक्कर लगाया करते थे।

वे खेत देखने नहीं जाते थे।

वे...

खेतों में काम करती स्त्रियों को देखने जाते थे।

और यदि कोई सेवक साथ होता, तो गाँव भर में बातें फैल जातीं।

भगी अम्मा की आवाज़ यहाँ और धीमी हो गई।

थामरा और अम्मू अब पूरी तरह स्तब्ध थीं।

उन्हें महसूस हो रहा था कि कहानी अब एक बहुत अँधेरे मोड़ की ओर बढ़ रही है।

सत्ता का भय

भगी अम्मा कुछ क्षण चुप रहीं।

फिर धीमे स्वर में बोलीं—

“उन दिनों केरल के कुछ भागों में समाज की व्यवस्था आज से बिल्कुल अलग थी”।

"निचली जातियों की हिन्दू स्त्रियों को, विशेषकर नम्बूदरी पुरुषों के सामने, अपने वक्ष ढँकने की अनुमति नहीं थी। यदि कोई ऐसा करती, तो उसे दंडित किया जा सकता था। लोककथाओं में इसे 'मुलक्करम' (स्तन-कर) के नाम से याद किया जाता है।"

थामरा और अम्मू अविश्वास से एक-दूसरे को देखने लगीं।

उन्हें यह सब किसी दुःस्वप्न जैसा लग रहा था।

भगी अम्मा आगे बोलीं—

"गरीब स्त्रियों के सामने कोई विकल्प नहीं होता था। जो लड़की युवावस्था में पहुँच जाती, उसे भी वही नियम मानने पड़ते।"

"यदि कोई स्त्री अपने शरीर को ढँकने का साहस करती, तो थम्पुरान अपनी छड़ी से उसका कपड़ा हटा देते। कभी-कभी उसे स्वयं कपड़ा हटाने का आदेश देते।"

उन्होंने एक गहरी साँस ली।

"लेकिन उन्हें सबसे अधिक आनंद तब आता था, जब वे उसके पति को आदेश देते कि वह अपनी पत्नी का वस्त्र स्वयं हटाए। इससे उन्हें पति और पत्नी—दोनों पर अपना अधिकार महसूस होता था।"

बरामदे में कुछ पल के लिए सन्नाटा छा गया।

अम्मू ने अनायास अपने दुपट्टे को और कसकर पकड़ लिया।

थामरा के भीतर भी बेचैनी उठने लगी।

वह कल्पना भी नहीं कर पा रही थी कि कोई समाज ऐसा भी हो सकता है।

भगी अम्मा ने फिर कहना शुरू किया—

"थम्पुरान लगभग हर दिन खेतों का चक्कर इसी उद्देश्य से लगाते थे।"

"रात के समय भी कभी-कभी वे निचली जातियों की स्त्रियों को अपने इल्लम में बुलवा भेजते।"

"यह वर्षों से चलता आ रहा था।"

उनका एक विश्वासपात्र आदमी गाँव की हर नई खबर उन तक पहुँचाता।

किस घर में कौन-सी स्त्री आई है...

किस लड़की ने अभी-अभी युवावस्था में प्रवेश किया है...

सब कुछ।

भय के नियम

जिस दिन थम्पुरान किसी स्त्री को रात में बुलाने वाले होते, उस दिन उनका व्यवहार बदल जाता।

वे कह देते—

“आज गरारे के लिए गरम पानी लाओ।”

या...

“आज भोजन जल्दी परोस दो। तबीयत ठीक नहीं है। मैं जल्दी विश्राम करूँगा।”

मीनाक्षी इन संकेतों का अर्थ समझती थीं।

उन्हें पता चल जाता कि उस रात थम्पुरान उनके कक्ष के बाहर तीन बार खाँसने नहीं आएँगे।

वे मान बैठे थे कि उनकी पत्नी उनके इन कर्मों से अनजान है।

लेकिन...

सच्चाई कुछ और थी।

इन्हीं दिनों थम्पुरान की नज़र एक नई स्त्री पर पड़ी थी।

उसका नाम था—

कुइल।

अच्चु की पत्नी।

वह पुलयार समुदाय की थी।

थम्पुरान मन ही मन सोचते—

“इतने वर्षों तक यह मेरी नज़र से कैसे बची रही?”

फिर स्वयं ही मुस्करा देते।

“अभी भी देर नहीं हुई।”

“आज… मुझे उसे देखना ही है।”

यह सुनते ही थामरा और अम्मू के चेहरे का रंग उड़ गया।

अब उन्हें पहली बार समझ आने लगा था कि इस कहानी का भय किसी भूत या प्रेत में नहीं…

बल्कि मनुष्य के भीतर छिपे अँधेरे में है।

भगी अम्मा ने लंबी साँस ली।

“अय्यो…”

उन्होंने थके हुए स्वर में कहा।

“आज के लिए बस।”

थामरा लगभग चौंक पड़ी।

“अम्मा, अभी नहीं! आगे क्या हुआ?”

भगी अम्मा हल्के से मुस्कराईं।

वह जानती थीं कि कहानी कहाँ रोकनी है।

सबसे रोचक मोड़ पर रुकना ही अच्छे कथावाचक की पहचान होती है।

और…

उन्हें यह भी मालूम था कि यदि कहानी अधूरी रहेगी, तो उनकी पुकयिला का भंडार भी भरा रहेगा।

अम्मू उठ खड़ी हुई।

“चलो, थामरा। बहुत देर हो रही है।”

थामरा ने अनमने मन से कहा,

“भगी अम्मा, जब तक यह कहानी पूरी नहीं हो जाती, हम रोज़ आएँगे।”

“शेरी,” भगी अम्मा ने मुस्कराकर सिर हिलाया।

“आ जाना।”

तीनों ने उन्हें प्रणाम किया और घर की ओर चल पड़े।

वापसी का पूरा रास्ता असामान्य रूप से शांत था।

थामरा के मन में केवल तीन चेहरे घूम रहे थे—

थम्पुरान...

सरसु...

और कुइल।

वह सोचती रही—

ऐसा क्या हुआ होगा कि इतना भव्य थारवाड एक दिन उजड़ गया?

कैसे वह इल्लम लोगों के लिए भय का प्रतीक बन गया?

उधर अम्मू के मन में भी एक विचित्र विचार आया।

उसे लगा—

यदि जाति और संपत्ति का अंतर हटा दिया जाए...

तो शायद वह स्वयं चक्की है...

और थामरा...

सरसु।

जब थामरा अपने थारवाड पहुँची, तब भी उसका मन उसी कहानी में अटका हुआ था।

बरामदे में बैठी अप्पाची ने उसे देखते ही पूछा,

“अरे... तुम लोग धारा पर नहीं गए थे क्या?”

थामरा चौंक गई।

“गई थी, अप्पाची”।

जानकी अम्मा ने उसे ऊपर से नीचे तक देखा।

फिर मुस्कराकर बोलीं,

“तो फिर...

तुम्हारे बाल सूखे कैसे हैं?”

थामरा समझ गई—

वह पकड़ी जा चुकी है।

उसने नज़रें झुका लीं।

“वो... आज तैरने का मन नहीं हुआ”।

“मैं और अम्मू बस बातें करते रहे।उसने थोड़ी देर तैर लिया”।

अप्पाची ने कुछ नहीं कहा।

लेकिन थामरा उनकी आँखों से नज़रें नहीं मिला सकी।

वह चुपचाप भीतर चली गई।

उसके मन में अब केवल एक चिंता थी—

क्या अप्पाची उसे कल फिर जाने देंगी?

अगली सुबह

अगली सुबह थामरा जान-बूझकर अप्पाची के सामने आने से बचती रही।

वह कभी रसोई में माँ का हाथ बँटाती, तो कभी सब्ज़ियों की क्यारी में जाकर भोजन के लिए हरी पत्तेदार सब्ज़ियाँ तोड़ लाती।घर के कामों में अपने को इतना व्यस्त कर लिया कि अप्पाची को उससे बात करने का अवसर ही न मिले।

कुछ देर बाद उसने कपड़ों का एक जोड़ा उठाया और कुएँ के पास बने कुलिमुरि (स्नानघर) की ओर चल पड़ी।

“थामरा!”

पीछे से अप्पाची की आवाज़ सुनाई दी।

थामरा के कदम वहीं रुक गए।

उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा।

अब तो मैं पकड़ी गई, उसने मन ही मन सोचा।

धीरे-धीरे वह पलटी।

“जी... अप्पाची?”

जानकी अम्मा ने उसे ध्यान से देखा।

“आज तैरने जाने का मन नहीं है क्या?”

प्रश्न अप्रत्याशित था।

थामरा एक क्षण के लिए चौंकी, लेकिन तुरंत स्वयं को सँभाल लिया।

“है तो, अप्पाची,” उसने मुस्कराकर उत्तर दिया।

जानकी अम्मा ने भौंहें उठाईं।

“तो फिर अभी स्नान करने क्यों जा रही हो?”

“तुम तो जानती हो, हमारी परंपरा है कि धारा से लौटकर स्नान किया जाता है”।

थामरा फिर पकड़ी गई थी।

वह झेंपकर मुस्कराई।

“भूल गई थी, अप्पाची”।

जानकी अम्मा भी मुस्करा दीं।

उन्होंने आगे कुछ नहीं पूछा।

कुछ देर बाद थामरा उनके पास बैठ गई।

दोनों मिलकर हरी मिर्चों को दही में डुबो-डुबोकर धूप में सुखाने लगीं।

सूख जाने पर उन्हें टीन के डिब्बों में भरकर रखा जाता था और बाद में चावल के साथ तलकर खाया जाता था।

“कल करेला भी काटकर सुखाएँगे,” अप्पाची ने प्रसन्न स्वर में कहा।

कुछ देर चुप रहने के बाद थामरा ने सहज भाव से पूछा,

“अप्पाची... क्या आसपास कोई अच्छा वैद्यन रहता है?”

जानकी अम्मा ने तुरंत उसकी ओर देखा।

“क्यों?”

“तबीयत ठीक नहीं है क्या?”

“अगर ठीक नहीं लग रहा, तो आज तैरने मत जाना।”

थामरा हँस पड़ी।

“नहीं, अप्पाची। मैं तो बस सोच रही थी... क्या मैं बड़ी होकर पारंपरिक चिकित्सा सीख सकती हूँ?”

“सुना है, एक अच्छा वैद्य बनने में वर्षों लग जाते हैं। किसी अनुभवी वैद्य के साथ रहकर सीखना पड़ता है।”

“मुझे यह सब बहुत रोचक लगता है।”

———

यह सुनते ही जानकी अम्मा का चेहरा खिल उठा।

उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था कि थामरा आयुर्वेद में रुचि लेगी।

उनके मन में एक साथ कई भाव उमड़ पड़े।

केरल से बेहतर आयुर्वेद सीखने की जगह भला और कहाँ हो सकती है?

और यदि थामरा यहीं रहकर सीखे...

तो वह भी उनके पास रहेगी।

यह विचार ही उनके हृदय में मधुर शांति भर गया।

उन्होंने उत्साह छिपाते हुए कहा,

"मैं तुम्हें अपने पुराने मित्र केशवन वैद्यन के पास ले चलूँगी'।

"सर्पदंश के उपचार में उनका बड़ा नाम है'।

वे कुछ पल चुप रहीं।

मानो कोई पुरानी स्मृति सामने आ गई हो।

"एक बार मैंने अपनी आँखों से देखा था..."

उन्होंने धीमे स्वर में कहा,

"एक व्यक्ति लगभग मर चुका था'।

"केशवन वैद्यन ने उसका उपचार किया... और देखते-देखते वह फिर साँस लेने लगा'।

"आज भी वह दृश्य याद करती हूँ, तो रोंगटे खड़े हो जाते हैं'।

फिर हँसते हुए बोलीं,

"लेकिन एक बात याद रखना'।

"उनके घर जाना है, तो नाक मज़बूत होनी चाहिए'।

थामरा ने आश्चर्य से पूछा,

"क्यों?"

"क्योंकि वहाँ हर समय दवाइयों, तेलों, जड़ी-बूटियों और उबलते काढ़ों की इतनी तेज़ गंध रहती है कि नए लोगों का सिर चकरा जाए'।

कुछ सोचकर अप्पाची फिर बोलीं,

"आजकल शायद बहुत कम वैद्य रसशास्त्र जैसी विद्याओं का अभ्यास करते हों'।

"लेकिन मैंने सुना है कि केशवन वैद्यन के पूर्वज अवश्य करते थे'।

"अब केशवन कितना जानते हैं, यह मैं नहीं कह सकती'।

थामरा ने मन ही मन निश्चय किया कि वह रसशास्त्र के बारे में अधिक से अधिक जानेगी।

उसी समय दूर से अम्मू की आवाज़ सुनाई दी।

वह हाथ हिलाकर थामरा को बुला रही थी।

जानकी अम्मा मुस्कराईं।

“जा, बेटी”।

“आज खूब मन लगाकर तैरना”।

लेकिन उनके मन के किसी कोने में एक और इच्छा जन्म ले चुकी थी।

काश...

थामरा सचमुच यहीं रह जाए...

आयुर्वेद सीखे...

और जीवन भर उनके पास रहे।

“अम्मू,” रास्ते में चलते हुए थामरा ने उत्साह से कहा,

“मेरी ज़िंदगी की यह सबसे रोमांचक छुट्टियाँ हैं”।

तीनों फिर सड़क पार करके कडनाड के उस रहस्यमय इल्लम की ओर बढ़ रहे थे।

“लेकिन आज हमें दस मिनट पहले निकलना चाहिए,” थामरा ने कहा।

“क्यों?” अम्मू ने आश्चर्य से पूछा।

वह तो भगी अम्मा की कहानी में ही खोई हुई थी।

थामरा ने उत्तर नहीं दिया।

उसका मन अब भी थम्पुरान...

सरसु...

और कुइल के इर्द-गिर्द घूम रहा था।

उधर अम्मू के लिए भी यह छुट्टियाँ किसी उत्सव से कम नहीं थीं।

जब भी थामरा गाँव आती, उसे थारवाड जाने, अच्छा भोजन खाने और उसके साथ घूमने का अवसर मिल जाता।

लेकिन इस बार तो मानो उसे कोई खज़ाना मिल गया था।

जिस भुतहे इल्लम को वह बचपन से दूर से देखती आई थी...

आज उसके रहस्य की परतें एक-एक करके खुल रही थीं।

———

रास्ते में गोपाल चेतन हमेशा की तरह थट्टुकडा पर रुके।

उन्होंने परिप्पु वडा और पुकयिला खरीदी।

तीनों जानते थे कि इन दोनों चीज़ों की कीमत रुपये से कहीं अधिक थी।

थामरा और अम्मू अब लगभग अठारह वर्ष की थीं।

चलते-चलते वे सोचने लगीं—

यदि उनका जन्म थम्पुरान के समय हुआ होता...

तो क्या उनका जीवन भी वैसा ही होता?

क्या उन्हें भी बिना शरीर ढँके रहना पड़ता?

आज तो माता-पिता अपनी बेटियों को पूरा शरीर ढँककर बाहर निकलने की शिक्षा देते हैं।

अप्पाची तो विशेष रूप से ध्यान रखती थीं कि थामरा और पार्वती कुलिमुरि से भी पूरी तरह कपड़े पहनकर ही बाहर निकलें।

घर के आसपास खेतों में अनेक मज़दूर काम करते रहते थे।

वे कहा करती थीं—

“स्त्री की गरिमा उसी के अपने हाथ में होती है किसी की भटकती नज़रों का तमाशा कभी मत बनना।”

इसी कारण थामरा हमेशा अपना लंबा पावडा और ब्लाउज़ स्नानघर तक साथ ले जाती और कपड़े पहनकर ही बाहर आती।

इन सब बातों ने उसे थम्पुरान के समय की सामाजिक व्यवस्था और भी भयावह लगने लगी।

दूर सामने भगी अम्मा का छोटा-सा घर दिखाई देने लगा...

और उनके साथ इतिहास की अगली परत खुलने वाली थी।

खेतों की कोयल — कुइल

भगी अम्मा ने तीनों को देखते ही स्नेह से मुस्कराकर बरामदे में बैठने का इशारा किया।

गोपाल चेतन ने केले के पत्ते में लिपटे परिप्पु वडा और पुकयिला उनके हाथ में रख दिए।

“अहा...” भगी अम्मा के चेहरे पर बाल-सुलभ प्रसन्नता फैल गई।

उन्होंने बड़े चाव से दो परिप्पु वडा खाए।

फिर मुस्कराकर बोलीं,

“पुकयिला मैं रात को खाऊँगी, जब मेरे बच्चे सो जाएँगे।”

थामरा अब और प्रतीक्षा नहीं कर सकती थी।

“अम्मा,” उसने याद दिलाया, “कल आप कुइल के बारे में बता रही थीं... थम्पुरान की नई सनक।”

“हाँ...”

भगी अम्मा की आँखें धीरे-धीरे अतीत में उतर गईं।

“अब वहीं से कहानी आगे बढ़ती है...”

कुइल पुलयार समुदाय की एक अत्यंत सुंदर युवती थी।

कुछ ही समय पहले उसका विवाह अपने ही समुदाय के युवक अचु से हुआ था।

कहते हैं, जब वह शिशु थी, तब उसका रोना कोयल की कूक जैसा मधुर लगता था।

तभी से सब उसे कुइल कहने लगे।

विवाह से पहले भी उसकी सुंदरता की चर्चा पूरे इलाके में थी।

उसके समुदाय के कई युवक उससे विवाह करना चाहते थे।

लेकिन कुइल ने अपना मन अचु को दे दिया।

उसकी कमर तक लहराती लंबी काली केशराशि पूरे इलाके में प्रसिद्ध थी।

बड़ी-बड़ी आँखें...

सुडौल देह...

और गले तथा बाँहों में पहने पत्थरों के आभूषण...

अचु को अपनी पत्नी पर गर्व था।

उनके छोटे-से समुदाय ने सादगी से उनका विवाह कराया।

रात भर गीत, नृत्य और उत्सव चलता रहा।

विवाह के बाद अचु और कुइल ने अपनी बस्ती में एक छोटी-सी फूस की झोपड़ी बनाई।

कुइल ने एक सप्ताह तक घर पर रहकर गृहस्थी सँभाली।

फिर वह अपने पति के साथ दोबारा धान के खेतों में काम करने लगी।

उसी दिन...

पहली बार...

थम्पुरान की नज़र उस पर पड़ी।

और उसके बाद...

हर दिन खेतों का निरीक्षण करते समय उनकी दृष्टि अनायास ही कुइल को खोजने लगी।

अन्य स्त्री मज़दूरों ने उसे सावधान किया।

"जब थम्पुरान इधर आएँ...

तो भीड़ में खो जाना।

उनकी आँखों के सामने मत पड़ना।"

लेकिन कुइल ने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया।

वह अभी भी अपने नए-नए विवाह के सुख में डूबी हुई थी।

उसे संसार का कोई भय नहीं था।

फिर वह दिन आया...

जिसने सब कुछ बदल दिया।

दोपहर का समय था।

कुइल अन्य स्त्रियों के साथ काम करते-करते बातें कर रही थी।

उसकी पीठ थम्पुरान की ओर थी।

लंबे, भीगे बाल उसकी कमर तक बिखरे हुए थे।

लगता था, गर्मी से राहत पाने के लिए वह अभी-अभी पास की धारा में स्नान करके लौटी थी—

जैसा कि खेतों में काम करने वाली स्त्रियाँ अक्सर किया करती थीं।

इतने में किसी ने धीरे से कहा,

“थम्पुरान...!”

सभी स्त्रियाँ एक क्षण में सावधान हो गईं।

उन्होंने धूप से बचने के लिए ओढ़े हुए पतले कपड़े हटा दिए।

कुइल भी मुड़ी।

लेकिन वह तैयार नहीं थी।

थम्पुरान की वासनापूर्ण दृष्टि सीधे उस पर टिक गई।

अनायास ही उसने अपने लंबे बालों को दोनों हाथों से समेटकर अपने वक्ष पर फैला लिया।

यह उसकी सहज, स्वाभाविक प्रतिक्रिया थी।

थम्पुरान का चेहरा तमतमा उठा।

“अध्यप्रसंगी!”

उन्होंने क्रोध से गरजते हुए कहा।

“धृष्ट स्त्री!”

थम्पुरान की ऊँची आवाज़ सुनते ही अच्चु पास के खेत से दौड़ता हुआ आ गया।

बाकी स्त्रियाँ भयभीत होकर इधर-उधर बिखर गईं।

कोई भी नम्बूदरी के क्रोध का सामना नहीं करना चाहता था।

थम्पुरान ने अच्चु की ओर घूरकर कहा,

“क्या तुमने इसे नहीं सिखाया कि थम्पुरान के सामने कैसे खड़ा हुआ जाता है?”

“इसके वक्ष खुले होने चाहिए।”

अच्चु काँप उठा।

उसने आदरवश अपना दाहिना हाथ मुँह पर रख लिया, ताकि उसकी साँस भी थम्पुरान को “अपवित्र” न कर दे।

धीरे से बोला,

“थम्पुरान…

इसने कोई कपड़ा नहीं ओढ़ा है।

यह तो केवल अपने बाल हैं…”

थम्पुरान की आँखों में एक ठंडी मुस्कान उभरी।

“हूँ…”

उन्होंने धीमे स्वर में कहा।

“कल रात…”

“इसे मेरे इल्लम भेज देना।”

“रात के नौ बजे के बाद।”

“सीधे मेरे कमरे में आए।”

“और बिना कोई शोर किए।”

“देखते हैं…

मैं इस धृष्ट स्त्री को कैसे सबक सिखाता हूँ।”

अच्चु जैसे पत्थर का हो गया।

वह न कुछ कह सका…

न हिल सका।

थम्पुरान बिना पीछे देखे वहाँ से आगे बढ़ गए।

उन्हें पूरा विश्वास था—

उनका आदेश कभी टाला नहीं जाएगा।

———

धान के खेत के अंतिम छोर पर पहुँचकर वे गोमस्थन (मुनीम) कुमारन के पास रुके।

“अच्चु और कुइल को आज एक भी एडंगाज़ी धान मत देना।”

उन्होंने आदेश दिया।

सामान्यतः एक दिन की मज़दूरी के बदले प्रत्येक मज़दूर को दो एडंगाज़ी धान मिलता था।

कुमारन ने बिना कोई प्रश्न किए सिर झुका दिया।

थम्पुरान संतोष के साथ घर की ओर लौट पड़े।

उनके मन में अब केवल एक ही चेहरा था—

कुइल।

मीनाक्षी का मौन प्रतिरोध

थम्पुरान खेतों से लौटते समय सीधे वैद्यन के घर की ओर मुड़ गए।

उन्हें देखकर वैद्यन क्षणभर के लिए चौंक उठे।

“थम्पुरान?” उन्होंने आदरपूर्वक पूछा, “आज अचानक...?”

थम्पुरान के होंठों पर हल्की मुस्कान तैर गई।

“और किसलिए आया होऊँगा?”

वैद्यन उनकी बात समझ गए।

उन्होंने कुछ असहज होकर कहा,

“लेकिन मैं तो आपको इस महीने की पूरी मात्रा पहले ही दे चुका हूँ।”

थम्पुरान चुप रहे।

वैद्यन ने धीमे स्वर में समझाना शुरू किया,

“मैंने पहले भी निवेदन किया था... औषधि उचित मात्रा में दी जाए तो जीवन बचाती है, पर वही दवा अधिक मात्रा में विष बन जाती है।”

उन्होंने थम्पुरान की आँखों में देखते हुए कहा,

“आप सप्ताह भर में जितनी मात्रा ले रहे हैं, उससे आपके शरीर को गंभीर हानि हो सकती है। प्राणों का भी संकट हो सकता है।”

“एक सप्ताह की दवा तैयार करने में मुझे लगभग एक महीना लग जाता है। मेरे पास कई गंभीर रोगी भी हैं जिन्हें इसकी आवश्यकता है।”

थम्पुरान का चेहरा कठोर हो गया।

उन्होंने बिना एक शब्द बोले वैद्यन की ओर देखा।

उस एक दृष्टि में आदेश भी था...

और धमकी भी।

वैद्यन ने गहरी साँस ली।

वे भीतर गए।

कुछ क्षण बाद एक छोटा-सा कपड़े का बंधा हुआ थैला लेकर लौटे।

उन्होंने वह थैली चुपचाप थम्पुरान के हाथ में रख दी।

थम्पुरान बिना धन्यवाद दिए मुड़े और वहाँ से चले गए।

वैद्यन देर तक उन्हें जाते हुए देखते रहे।

उनके चेहरे पर विवशता थी।

वे जानते थे कि वे एक चिकित्सक हैं।

लेकिन वे यह भी जानते थे कि सामने खड़ा व्यक्ति उस पूरे क्षेत्र का सबसे शक्तिशाली आदमी था।

उस शाम थम्पुरान असामान्य रूप से बेचैन थे।

बार-बार उनके मन में एक ही विचार उठ रहा था—

कुइल को आज ही बुला लेना चाहिए था।

संध्या ढल चुकी थी।

इल्लम के भीतर हलचल कम हो गई थी।

तभी रसोई की दिशा से धीमी बातचीत की आवाज़ सुनाई दी।

थम्पुरान बरामदे में आए।

अँधेरे में उन्हें दो आकृतियाँ दिखाई दीं।

“आरे आने? (कौन है वहाँ?)”

उन्होंने ऊँची आवाज़ लगाई।

भीतर से मीनाक्षी की शांत आवाज़ आई।

“मैंने एक थिरुम्मुकारी (मालिश करने वाली स्त्री) को बुलाया था।”

“उसकी सेवा के बदले उसे थोड़ा चावल दे रही हूँ।”

थम्पुरान ने अधिक ध्यान नहीं दिया।

वे वापस अपने कक्ष में लौट गए।

उनके मन में अब भी केवल एक ही चेहरा था—

कुइल।

उधर...

जैसे ही थम्पुरान भीतर गए, मीनाक्षी ने राहत की लंबी साँस ली।

अँधेरे में खड़े दो लोग धीरे-धीरे बाहर आए।

वे थे—

अचु और कुइल।

अचु ने अपना थोर्थु पोटली की तरह बाँध रखा था।

उसमें तीन एडंगाज़ी चावल बँधे हुए थे।

ये वही चावल थे जो मीनाक्षी ने उन्हें चोरी-छिपे दिए थे।

उन्हें खेतों की हर छोटी-बड़ी घटना का समाचार मिल जाता था।

मज़दूर उन पर विश्वास करते थे...

और उनसे प्रेम भी।

जब उन्हें पता चला कि कुइल ने केवल अपने बालों से शरीर ढँक लिया था और इसी कारण अचु तथा कुइल की दिनभर की मज़दूरी रोक दी गई...

तो उनका हृदय द्रवित हो उठा।

उन्होंने चुपचाप दोनों को बुलवाया।

वे नहीं चाहती थीं कि उस रात उनके घर का चूल्हा बुझा रहे।

उन्होंने अपने भंडार से चावल निकालकर उनके हाथ में रख दिए।

“आज रात कम-से-कम तुम्हारे घर कंजी तो पक जाएगी...”

उन्होंने धीमे स्वर में कहा।

कुइल की आँखें भर आईं।

अच्चु कुछ बोल नहीं पाया।

दोनों ने मौन भाव से झुककर उन्हें प्रणाम किया।

मीनाक्षी बरामदे में खड़ी रहीं।

अँधेरे में विलीन होती उन दोनों की परछाइयों को देर तक देखती रहीं।

उन्हें आभास था...

कि आने वाले दिन केवल अच्चु और कुइल के लिए ही नहीं,

बल्कि पूरे इल्लम के लिए एक ऐसे तूफ़ान का संकेत हैं,

जो बहुत कुछ बदल देगा।

एक अशुभ रात की आहट

अच्चु और कुइल अँधेरे में तेज़ी से अपनी बस्ती की ओर लौट रहे थे।

दोनों के बीच लंबे समय तक कोई बात नहीं हुई।

मीनाक्षी द्वारा दिए गए चावल की पोटली अच्चु के हाथ में थी, लेकिन उसका मन कहीं और भटक रहा था।

आख़िरकार कुइल ने धीमे स्वर में पूछा,

“क्या सोच रहे हो?”

अच्चु ने उत्तर नहीं दिया।

कुछ कदम और चलने के बाद वह रुका।

“कल रात...”

उसकी आवाज़ भर्रा गई।

“थम्पुरान ने तुम्हें अपने इल्लम बुलाया है”।

कुइल के कदम जैसे वहीं थम गए।

“क्या...?”

“मैं नहीं जाऊँगी।”

अच्चु ने उसकी ओर देखा।

उसकी आँखों में भय था।

“अगर तुम नहीं गई... तो?”

दोनों जानते थे कि उस प्रश्न का उत्तर कितना भयानक हो सकता है।

मज़दूरी बंद हो सकती थी।

झोपड़ी छिन सकती थी।

पूरी बस्ती पर अत्याचार हो सकता था।

शायद जान भी जा सकती थी।

सत्ता केवल एक व्यक्ति की नहीं थी—

वह पूरे सामाजिक ढाँचे की शक्ति थी।

कुइल ने दृढ़ स्वर में कहा,

“मैं तुम्हारी पत्नी हूँ।”

“मैं किसी और के पास नहीं जाऊँगी।”

अच्चु ने उसका हाथ कसकर पकड़ लिया।

वह अपनी पत्नी की बात सुनकर गर्व भी महसूस कर रहा था और भीतर तक काँप भी रहा था।

उसे पता था कि एक साधारण खेतिहर मज़दूर की इच्छा का उस व्यवस्था में कोई मूल्य नहीं था।

उधर इल्लम में...

थम्पुरान अपने कक्ष में अकेले बैठे थे।

वैद्यन से लाई हुई औषधि की छोटी-सी पोटली उनके सामने रखी थी।

उन्होंने सावधानी से उसकी थोड़ी-सी मात्रा ली।

कुछ देर बाद उनकी साँसें गहरी होने लगीं।

चेहरे पर एक विचित्र उत्तेजना उभर आई।

वे अपनी कुर्सी पर पीछे टिक गए।

उनकी आँखों के सामने बार-बार एक ही चेहरा उभर रहा था—

कुइल।

उन्हें विश्वास था कि उनका आदेश कभी अस्वीकार नहीं किया जाएगा।

सालों से ऐसा कभी हुआ भी नहीं था।

उसी समय...

इल्लम के दूसरे छोर पर मीनाक्षी भगवान के सामने दीपक जलाकर बैठी थीं।

उनकी आँखें बंद थीं।

हाथ प्रार्थना में जुड़े हुए थे।

लेकिन उनके मन में शांति नहीं थी।

उन्हें खेतों से लौटे मज़दूरों ने सब बता दिया था।

वे जानती थीं कि अगली रात किस संकट को अपने साथ लेकर आने वाली है।

उन्होंने मन-ही-मन प्रार्थना की—

“हे नारायण...

किसी निर्दोष की रक्षा करना”।

भगी अम्मा कुछ क्षणों के लिए चुप हो गईं।

बरामदे में गहरा सन्नाटा छा गया।

दूर कहीं कोयल की आवाज़ सुनाई दी।

थामरा और अम्मू साँस रोके उनकी ओर देख रही थीं।

थामरा से रहा नहीं गया।

“फिर क्या हुआ, अम्मा?”

भगी अम्मा ने हल्की मुस्कान के साथ उसकी ओर देखा।

“वही तो इस कथा का सबसे कठिन अध्याय है, बेटी।”

“उसे सुनने के लिए तुम्हें भी थोड़ा धैर्य रखना होगा।”

उन्होंने अपनी पुकयिला की डिबिया बंद की और धीरे से उठ खड़ी हुईं।

“आज इतना ही।”

थामरा ने निराश होकर अम्मू की ओर देखा।

अब उसके मन में केवल एक ही प्रश्न था—

क्या कुइल थम्पुरान के इल्लम जाएगी... या उसके जीवन की दिशा उसी रात बदल जाएगी?

कुइल का निर्णय

अगली सुबह कुइल सामान्य दिनों की तरह धान के खेतों में काम करने पहुँची, लेकिन आज उसके चेहरे की सहज मुस्कान कहीं खो गई थी।

अन्य स्त्रियाँ उसे देखते ही चुप हो गईं।

उनमें से हर एक समझ चुकी थी कि पिछली दोपहर क्या हुआ था।

कुछ देर बाद एक बुजुर्ग मज़दूर स्त्री उसके पास आई।

उसने चारों ओर देखा कि कोई सुन तो नहीं रहा।

फिर बहुत धीमे स्वर में बोली,

“बेटी... यदि बुलावा आया है, तो सावधान रहना।”

कुइल ने उसकी ओर देखा।

“क्या कोई कभी मना नहीं करता?”

बूढ़ी स्त्री के चेहरे पर एक कड़वी मुस्कान उभरी।

“मना करने की कीमत बहुत बड़ी होती है”।

“कभी पूरी बस्ती चुकाती है...”

“और कभी केवल एक परिवार”।

इतना कहकर वह फिर अपने काम में लग गई।

अच्चु पूरे दिन बेचैन रहा।

उसके हाथ काम कर रहे थे, लेकिन मन बार-बार कुइल पर जाकर ठहर जाता।

वह जानता था कि शाम ढलते ही कोई निर्णय लेना होगा।

घर लौटते समय दोनों लगभग मौन रहे।

उनकी छोटी-सी झोपड़ी के बाहर पहुँचकर अच्चु ने धीरे से कहा,

“यदि तुम नहीं जाना चाहती... तो मत जाना”।

कुइल ने उसकी ओर देखा।

उसकी आँखों में भय नहीं था, केवल दृढ़ता थी।

“मैं तुम्हारी पत्नी हूँ”।

“मुझे किसी और के सामने झुकना स्वीकार नहीं”।

अच्चु की आँखें भर आईं।

वह जानता था कि यह साहस बहुत महँगा पड़ सकता है।

उधर इल्लम में थम्पुरान पूरी निश्चिंतता से अपने कक्ष में बैठे थे।

उन्हें विश्वास था कि उनका आदेश टाला नहीं जाएगा।

उन्होंने नौकर को निर्देश दिया कि रात का भोजन जल्दी परोस दिया जाए।

फिर कहा,

“आज मुझे कोई परेशान न करे।"

घर के भीतर यह संकेत सब समझते थे।

मीनाक्षी ने भी समझ लिया।

उन्होंने कुछ नहीं कहा।

केवल भगवान के सामने रखा दीपक थोड़ा और ऊँचा कर दिया।

उस लौ को देखते हुए उनके मन में एक ही प्रार्थना उठ रही थी—

“हे भगवान, किसी निरपराध की रक्षा करना।"

उधर पुलयार बस्ती में अँधेरा उतर चुका था।

झोपड़ियों से कंजी पकने की महक उठ रही थी।

लेकिन अच्चु और कुइल के घर का चूल्हा अभी तक नहीं जला था।

दोनों चुपचाप बैठे थे।

उनके बीच शब्दों की नहीं, भय की बातचीत चल रही थी।

रात धीरे-धीरे गहराती जा रही थी...

और उसके साथ एक ऐसा निर्णय निकट आ रहा था, जो केवल दो व्यक्तियों का नहीं, कई पीढ़ियों का भाग्य बदलने वाला था।

भगी अम्मा ने यहीं अपनी बात रोक दी।

उन्होंने दूर खड़े उस उजड़े हुए इल्लम की ओर देखा।

साँझ की धुँधली रोशनी में उसकी टूटी हुई दीवारें और भी रहस्यमय लग रही थीं।

“याद रखना,” उन्होंने धीमे स्वर में कहा,

“कई बार किसी घर को भूत नहीं सताते...”

“उस घर में किए गए कर्म उसे भुतहा बना देते हैं।”

थामरा और अम्मू ने अनायास उस वीरान इल्लम की ओर देखा।

अब वह उन्हें केवल एक खंडहर नहीं लग रहा था।

मानो उसकी हर दीवार अपने भीतर कोई अनकही कहानी छिपाए बैठी हो।

भय की रात

रात पूरी तरह उतर चुकी थी।

इल्लम के विशाल प्रांगण में असामान्य सन्नाटा पसरा हुआ था।

कहीं दूर झींगुरों की आवाज़ सुनाई दे रही थी और बीच-बीच में किसी रातरानी पक्षी की पुकार उस निस्तब्धता को चीर जाती।

थम्पुरान अपने कक्ष में टहल रहे थे।

कभी खिड़की से बाहर झाँकते...

कभी दीपक की लौ ठीक करते...

कभी दरवाज़े की ओर देखते।

उन्हें पूरा विश्वास था कि आज्ञा का पालन अवश्य होगा।

वर्षों से ऐसा ही होता आया था।

उधर पुलयार बस्ती में छोटी-सी झोपड़ी के भीतर अच्चु और कुइल आमने-सामने बैठे थे।

मिट्टी के दीपक की काँपती लौ उनके चेहरों पर पड़ रही थी।

“अभी भी समय है,” अच्चु ने धीमे स्वर में कहा, “अगर तुम जाना चाहो...”

कुइल ने उसकी बात बीच में ही रोक दी।

“मैंने अपना निर्णय कर लिया है।”

उसका स्वर शांत था, पर अटल।

“मैं तुम्हारी पत्नी हूँ।

“किसी भय के कारण अपना सम्मान नहीं छोड़ सकती।

अच्चु ने सिर झुका लिया।

वह जानता था कि उसकी पत्नी सही है।

लेकिन वह यह भी जानता था कि उस सत्य की कीमत बहुत भारी हो सकती है।

कुछ देर दोनों मौन बैठे रहे।

फिर कुइल ने धीरे से उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया।

“जो होगा, हम दोनों मिलकर सहेंगे।

अच्चु की आँखें भर आईं।

उधर इल्लम में...

मीनाक्षी को भी नींद नहीं आ रही थी।

वे बरामदे में आकर कुछ देर अँधेरे में खड़ी रहीं।

दूर कहीं पुलयार बस्ती की ओर टिमटिमाते दीपकों को देखती रहीं।

उन्हें बार-बार लगता था कि कोई अनिष्ट होने वाला है।

उनके मन में इच्छा हुई कि किसी तरह उस लड़की को बचा लें।

लेकिन वे जानती थीं कि इस व्यवस्था में उनकी अपनी सीमाएँ थीं।

वे स्वयं भी उसी घर की कैदी थीं।

वलिया थम्पुराटी, पद्मावती, अपने कक्ष में जप कर रही थीं।

उन्होंने आँखें खोले बिना ही पूछा,

“मीनाक्षी... अभी तक जाग रही हो?”

"हाँ, अम्मा"।

"मन अशांत है?"

मीनाक्षी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

पद्मावती ने केवल इतना कहा,

"जब घर में अधर्म बढ़ने लगे, तो सबसे पहले शांति ही घर छोड़ देती है"।

उनके शब्द सुनकर मीनाक्षी के भीतर जैसे कुछ काँप उठा।

भगी अम्मा ने कुछ क्षण रुककर दोनों लड़कियों की ओर देखा।

थामरा और अम्मू पूरी तन्मयता से सुन रही थीं।

"क्या उस रात कुइल इल्लम गई?" थामरा से रहा नहीं गया।

भगी अम्मा मुस्कराईं।

"यही तो कहानी का सबसे बड़ा मोड़ है, बेटी"।

"लेकिन हर कहानी को साँस लेने का समय देना चाहिए"।

उन्होंने धीरे से पुकयिला की डिबिया बंद की और सामने खड़े उजड़े हुए इल्लम की ओर देखा।

"कभी-कभी," उन्होंने धीमे स्वर में कहा, "भाग्य का निर्णय मनुष्य नहीं करता... उसका साहस करता है"।

इतना कहकर वे चुप हो गईं।

बरामदे में फिर वही गहरा मौन उतर आया।

दूर खड़ा वह प्राचीन इल्लम मानो स्वयं अपनी अगली कथा सुनाए जाने की प्रतीक्षा कर रहा था।

खेतों में अपमान

अगले दिन न जाने क्यों थम्पुरान रोज़ की अपेक्षा कुछ देर से खेतों का निरीक्षण करने निकले।

हाथ में अपनी छड़ी लहराते हुए वे धान के खेतों के बीच बने वरम्बु (खेतों के बीच की ऊँची मेड़) पर चलते हुए मज़दूरों की ओर बढ़े।

अजीब बात थी—

सभी स्त्रियाँ उनकी ओर पीठ किए काम कर रही थीं।

ऐसा लगता था मानो उन्हें थम्पुरान के आने का आभास ही न हो।

वे अभी उनके पास पहुँचे ही थे कि अचानक उनका पैर फिसल गया।

दायाँ पैर मेड़ में बने एक गहरे गड्ढे में जा धँसा।

“आह...!”

दर्द से उनकी तीखी चीख निकल गई।

चीख सुनते ही सभी स्त्रियाँ मुड़ गईं।

थम्पुरान को देखते ही उन्होंने प्रथा के अनुसार तुरंत अपना वक्ष अनावृत कर दिया।

लेकिन इस समय थम्पुरान दर्द से इतने व्याकुल थे कि उनका ध्यान उस ओर गया ही नहीं।

चारों ओर से मज़दूर उनकी ओर दौड़े।

परन्तु कोई भी उन्हें हाथ लगाने का साहस नहीं कर पाया।

उन्हें छूना, उन्हें ‘अपवित्र’ कर देना माना जाता था।

इतने में कुमारन दौड़ता हुआ आया।

वह नायर जाति का था, जिसे उस समय नम्बूदरियों के बाद ऊँचा माना जाता था।

इसलिए वही थम्पुरान को सहारा देकर उठाने का अधिकारी समझा गया।

कुछ ही देर में खेत के दूसरे छोर से थम्पुरान की लकड़ी की कुर्सी मँगाई गई।

कुमारन ने उन्हें सहारा देकर किसी तरह उस पर बैठाया।

थम्पुरान दर्द से कराहते हुए धीरे-धीरे उठे।

कुमारन ने झुककर उस गड्ढे को ध्यान से देखा।

वह सामान्य गड्ढा नहीं था।

बहुत गहरा था।

और ऐसा प्रतीत होता था कि उसे किसी ने जान-बूझकर हाल ही में खोदा था।

कल ही तो वह इसी मेड़ से होकर गुज़रा था।

तब पूरी मेड़ मज़बूत और समतल थी।

उसे तुरंत संदेह हो गया।

उसने चार मज़दूरों को आदेश दिया कि वे थम्पुरान को कुर्सी सहित कंधों पर उठाकर इल्लम पहुँचा दें।

थम्पुरान क्रोध से तिलमिला उठे।

उन्होंने कुमारन की ओर देखकर कहा,

“इल्लम आना...

मुझे तुमसे बात करनी है”।

जब चार मज़दूर थम्पुरान को कंधों पर उठाकर इल्लम पहुँचे, तब मीनाक्षी और पद्मावती ने उन्हें देखा।

दोनों के चेहरे पर कोई आश्चर्य नहीं था।

मानो कुछ असामान्य हुआ ही न हो।

थम्पुरान ने ऊँची आवाज़ में पुकारा,

“मीनाक्षी!”

“तुरंत वैद्यन को बुलवाओ”।

उन्हें उनके कक्ष की ओर ले जाया जा रहा था कि तभी भीतर से एक गंभीर पुरुष स्वर सुनाई दिया—

“मीनाक्षी पर कौन चिल्ला रहा है?”

वह आवाज़ सुनते ही थम्पुरान जैसे पत्थर के हो गए।

वे उस स्वर को पहचान चुके थे।

वह थे—

उनके ससुर, शंकरन नम्बूदरी।

शंकरन बाहर आए।

उन्होंने कुर्सी पर बैठे रामन नम्बूदरी की ओर देखा।

फिर हल्की व्यंग्यपूर्ण मुस्कान के साथ बोले,

“क्या बात है, रामन?”

“चलना छोड़ दिया है क्या?”

“अब इन बेचारे लोगों के कंधों पर अपना भार डालने लगे हो?”

शंकरन ने वर्षों से रामन के बारे में तरह-तरह की बातें सुनी थीं।

लेकिन कभी कोई ठोस प्रमाण नहीं मिला था।

एक पिता होने के नाते वे समय-समय पर मीनाक्षी से उसके वैवाहिक जीवन के बारे में पूछते रहते थे।

हर बार मीनाक्षी मुस्कराकर केवल इतना कहती—

“मैं सुखी हूँ।”

“वरम्बु में बने एक गड्ढे में गिर गया,”

रामन ने सहानुभूति पाने की आशा से कहा।

“गड्ढा?”

शंकरन ने भौंहें सिकोड़ लीं।

“वरम्बु में गड्ढा कैसे हो सकता है?”

“वे मेड़ें तो लगातार आने-जाने से इतनी कठोर हो जाती हैं कि उन पर भारी कृषि-औज़ार भी घसीटे जा सकते हैं”।

“इतनी चौड़ी और मज़बूत कि उन पर महाराजा की सवारी भी निकल जाए”।

रामन ने झुँझलाकर कहा,

“अच्चन...”

“मेरे खेतों के इन बदमाश मज़दूरों ने मिलकर जान-बूझकर वह गड्ढा खोदा है”।

“मैं रोज़ उसी रास्ते से जाता हूँ”।

“ऐसा पहले कभी नहीं हुआ”।

शंकरन ने शांत स्वर में पूछा,

“लेकिन ऐसा वे करेंगे ही क्यों?”

“क्या तुम उन्हें उनकी एडंगाज़ी नहीं देते?”

“मैंने आज तक ऐसी साज़िश नहीं सुनी”।

रामन ने तुरंत उत्तर दिया,

“मैं हर मज़दूर को एक दिन के काम के बदले दो एडंगाज़ी धान देता हूँ”।

शंकरन कुछ क्षण सोचते रहे।

फिर बोले,

“हूँ...”

“तो फिर अवश्य कोई ऐसी बात है, जिससे मैं अभी तक अनजान हूँ...”

उन्होंने विषय बदल दिया।

“खैर...”

“मीनाक्षी ने मुझे बुलाया था”।

“मैं कुछ दिनों के लिए सरसु को अपने साथ ले जा रहा हूँ”।

“उसकी मौतुशी (नानी) उसे बहुत याद कर रही है”।

“क्यों न उसके युवावस्था में प्रवेश का समारोह मेरे इल्लम में किया जाए?”

रामन तुरंत असहज हो गए।

“अच्चन…”

“अब यह कठिन होगा”।

“सारी तैयारियाँ यहीं हो चुकी हैं”।

“मेरी दोनों बहनें भी समारोह के लिए आने वाली हैं”।

शंकरन कुछ पल चुप रहे।

वे चाहते तो ज़ोर दे सकते थे।

लेकिन उन्होंने स्वयं को रोक लिया।

उन्हें डर था कि यदि उन्होंने अधिक दबाव डाला…

तो उसका परिणाम मीनाक्षी को भुगतना पड़ेगा।

उन्हें आज भी इस बात का गहरा पश्चाताप था कि विवाह से पहले उन्होंने रामन के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं जुटाई थी।

शंकरन नम्बूदरी

रामन ने औपचारिकता निभाते हुए पूछा,

“अच्चन, आपने आने की सूचना पहले क्यों नहीं भेजी?”

शंकरन ने मानो प्रश्न सुना ही नहीं।

उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया।

रामन और शंकरन—दोनों ही नम्बूदरी थे…

लेकिन दोनों के व्यक्तित्व में धरती-आसमान का अंतर था।

जहाँ रामन अपने कठोर स्वभाव और कंजूसी के लिए जाना जाता था…

वहीं शंकरन पूरे प्रदेश में सम्मान और स्नेह का पात्र था।

उस समय सामान्यतः खेतों में एक दिन के श्रम के बदले दो या तीन एडंगाज़ी धान दिया जाता था।

लेकिन शंकरन अपने प्रत्येक मज़दूर को पाँच एडंगाज़ी धान देते थे।

हर महीने के अंत में वे प्रत्येक परिवार को दो नारियल भी भेंट करते।

ओणम जैसे त्योहारों या परिवार के किसी जन्मदिन पर वे नए मुंडु और थोर्थु बाँटते...

और इल्लम से मिठाइयाँ भी भिजवाते।

यदि कोई मज़दूर बीमार पड़ जाता या घायल हो जाता...

तो वे स्वयं वैद्यन को बुलवाकर उसका उपचार करवाते।

सबसे बड़ी बात...

उन्होंने कभी किसी निम्न जाति की स्त्री को अपने सामने वक्ष अनावृत करने के लिए बाध्य नहीं किया।

इतना ही नहीं..

उन्होंने अपने बेटों को भी यही शिक्षा दी थी।

इसी कारण दूर-दूर के गाँवों—

तिरुवनंतपुरम...

कोल्लम...

कोट्टायम...

देविकुलम...

और पद्मनाभपुरम से भी मज़दूर उनके खेतों में काम करने आ जाते थे।

वे केवल ज़मींदार नहीं..

एक संरक्षक माने जाते थे।

साँझ ढलने लगी।

मीनाक्षी ने अपने पिता के स्वागत में अनेक व्यंजन बनाए थे।

भोजन परोस दिया गया।

शंकरन और रामन साथ बैठकर भोजन करने लगे।

भोजन समाप्त होने पर शंकरन ने अपने मुंडु की तहों से एक छोटी-सी सुनहरी थैली निकाली।

उन्होंने वह सरसु की हथेली पर रख दी।

“यह तुम्हारी मौतुशी ने भेजा है”।

सरसु की आँखें चमक उठीं।

उसने उत्सुकता से थैली खोली।

अंदर माणिक जड़े हुए सुंदर स्वर्ण कर्णफूल थे।

“अच्चा!”

वह खुशी से उछल पड़ी और अपने नानाजी से लिपट गई।

शंकरन ने भी उसे स्नेह से गले लगा लिया।

“अब जल्दी खाना खत्म करो और सो जाओ”।

उन्होंने मुस्कराते हुए कहा,

“कल सुबह हमें जल्दी निकलना है”।

“मैं इस बार वही वल्लम लाया हूँ जिसमें लकड़ी का झूला लगा है”।

सरसु की खुशी का ठिकाना न रहा।

उसे अपने नानाजी की सुंदर नावें बहुत प्रिय थीं।

विशेषकर वह नाव जिसमें लकड़ी का झूला लगा था।

जब वह शिशु थी…

तो उसके मामाओं ने उसी नाव में उसके लिए एक छोटा-सा पालना भी बनाया था।

कुछ देर बाद शंकरन ने मीनाक्षी की ओर देखा।

“बेटी...”

“क्या तुम भी अपनी माँ और भाइयों से मिलने नहीं चलोगी?”

“एक सप्ताह बाद लौट आना”।

“या यदि चाहो तो उससे भी पहले”।

मीनाक्षी ने बिना कुछ कहे धीरे से सिर हिला दिया।

उन्होंने आने से इंकार कर दिया।

शंकरन ने और आग्रह नहीं किया।

वे अपनी बेटी की चुप्पी को पढ़ना जानते थे।

———

उसी शाम...

मीनाक्षी के बुलावे पर प्रसिद्ध आयुर्वेदाचार्य चावरकोडे नारायणन वैद्यन इल्लम पहुँचे।

वे युद्ध-चिकित्सा, मर्म चिकित्सा और स्थानीय औषधीय वनस्पतियों के महान ज्ञाता माने जाते थे।

इल्लम में प्रवेश करते ही उनकी दृष्टि मीनाक्षी पर पड़ी।

उन्होंने अपने औषधियों का थैला नीचे रखा।

फिर कमर से झुककर...

दोनों हथेलियाँ भूमि पर स्पर्श कीं...

और उन्हें अपने वक्ष से लगाकर गहरा प्रणाम किया।

यह था—

कलरि वंदनम्।

इतना सम्मान देखकर थामरा स्वयं को रोक नहीं सकी।

“भगी अम्मा!”

“वैद्यन ने मीनाक्षी को प्रणाम क्यों किया?”

भगी अम्मा मुस्कराईं।

फिर बोलीं,

“यही तो बात बहुत कम लोग जानते हैं।

“मीनाक्षी केवल चेरिया थम्पुराटी नहीं थीं…”

“वे पूरे क्षेत्र की प्रसिद्ध मीनाक्षी गुरुक्कल थीं।

थामरा और अम्मू दोनों स्तब्ध रह गईं।

भगी अम्मा आगे बोलीं,

“वे उस समय की शायद एकमात्र महिला थीं जिन्होंने कलरिपयट्टु में पूर्ण निपुणता प्राप्त की थी…”

“और जिन्हें आधिकारिक रूप से गुरुक्कल—अर्थात् आचार्य—स्वीकार किया गया था।

नारायणन वैद्यन स्वयं भी कभी कलरि के विद्यार्थी रहे थे।

लेकिन गुरुक्कल बनने से पहले ही उन्होंने वह मार्ग छोड़ दिया।

उन्होंने अपना जीवन आयुर्वेद और मर्म चिकित्सा को समर्पित कर दिया।

इसलिए…

आज भी वे मीनाक्षी गुरुक्कल को वही सम्मान देते थे, जो एक गुरु को दिया जाता है।

मर्म चिकित्सा और एक रहस्य

नारायणन वैद्यन को देखकर थम्पुरान कुछ असहज हो उठे।

उन्होंने झेंपते हुए उनका अभिवादन किया।

शंकरन नम्बूदरी ने आश्चर्य से दोनों की ओर देखा।

“क्या तुम दोनों पहले से एक-दूसरे को जानते हो?”

नारायणन वैद्यन ने शांत भाव से सिर हिलाया।

“हाँ।

“नम्बूदरी दो-एक बार मेरे पास आए थे।

“मैंने इन्हें इसी गाँव के स्थानीय वैद्यन के पास भेजा था।

“इनके लिए एक विशेष औषधि तैयार कर रहा हूँ।

“वह मैं उसी स्थानीय वैद्यन के माध्यम से भिजवा दूँगा।

शंकरन ने आश्चर्य से रामन की ओर देखा।

“अच्छा...!”

“मुझे तो पता ही नहीं था कि रामन अस्वस्थ हैं।

उन्होंने क्षणभर मीनाक्षी की ओर देखा।

मीनाक्षी का चेहरा बिल्कुल निर्विकार था।

मानो उन्होंने कुछ सुना ही न हो।

नारायणन वैद्यन ने पहले मीनाक्षी से संक्षिप्त चर्चा की।

फिर थम्पुरान के पास जाकर उनकी चोट का परीक्षण किया।

उन्होंने कमर के पास एक मर्म बिंदु दबाया।

फिर पैर पर दूसरा।

इसके बाद मलमल के कपड़े में बँधी औषधीय जड़ी-बूटियों की गर्म पोटली से धीरे-धीरे सिंकाई की।

कुछ देर बाद उन्होंने ताज़ा तैयार किया हुआ औषधीय लेप थम्पुरान के घायल पैर पर सावधानी से लगा दिया।

उपचार पूरा होने पर उन्होंने शंकरन की ओर देखकर मुस्कराते हुए कहा,

“आपने मुझे व्यर्थ कष्ट दिया।

“गुरुक्कल स्वयं इनका उपचार बड़ी सरलता से कर सकती थीं।

अम्मू स्वयं को रोक न सकी।

“भगी अम्मा…”

“उन्होंने ऐसा क्यों कहा?”

“और इलाज शुरू करने से पहले मीनाक्षी से सलाह क्यों ली?”

भगी अम्मा ने अपने पैर फैलाए और आराम से बैठ गईं।

फिर बोलीं,

“क्योंकि मीनाक्षी गुरुक्कल केवल कलरिपयट्टु की आचार्या ही नहीं थीं..”

“मर्म चिकित्सा में भी पारंगत थीं।

“कलरिपयट्टु के उन्नत प्रशिक्षण में शरीर के प्रत्येक मर्म बिंदु का गहन अध्ययन कराया जाता है।

“युद्ध में उन्हीं बिंदुओं पर आघात किया जाता है…”

“और चिकित्सा में उन्हीं बिंदुओं के माध्यम से उपचार भी किया जाता है।

“इसलिए वैद्यन ने पहले उनसे चर्चा की।

नारायणन वैद्यन ने दस दिनों तक प्रतिदिन एक बार नवरा कंजी खाने की सलाह दी।

यह विशेष औषधीय चावल, जड़ी-बूटियों और मसालों से बनी पौष्टिक कंजी थी।

गर्म सिंकाई और लेप के बाद थम्पुरान का दर्द कुछ कम हो गया था।

रामन के आदेश पर मीनाक्षी ने वैद्यन को पाँच एडंगाज़ी धान दक्षिणा में दिए।

उनका मन था कि पिता अलप्पुझा से जो मिठाइयाँ और नमकीन लाए थे, उनमें से भी कुछ वैद्यन को भेंट करें।

लेकिन…

थम्पुरान ने इसकी अनुमति नहीं दी।

वैद्यन जब इल्लम से विदा लेने लगे, तब शंकरन चुपचाप उनके साथ बाहर तक आए।

उन्होंने धीमे स्वर में पूछा,

“रामन को वास्तव में क्या रोग है?”

वैद्यन ने कुछ उत्तर दिया।

वह उत्तर सुनते ही शंकरन के चेहरे का रंग बदल गया।

वे स्तब्ध रह गए।

“क्या कहा था वैद्यन ने?”

थामरा तुरंत पूछ बैठी।

उसके स्वर में उत्सुकता भी थी...

और चिंता भी।

भगी अम्मा मुस्करा दीं।

“धैर्य रखो, बेटी”।

“कहानी पूरी होने पर सब समझ में आ जाएगा”।

थामरा ने फिर पूछा,

“अम्मा... आपको इतने सारे विवरण कैसे याद हैं?”

भगी अम्मा हल्के से हँसीं।

“क्योंकि यह कहानी केवल सुनी नहीं गई...”

“जी भी गई है”।

“हममें से बहुत-से लोगों ने वर्षों तक इस कथा का नाट्य-प्रदर्शन देखा है”।

“और यह घर...”

उन्होंने अपने छोटे-से आँगन की ओर देखते हुए कहा,

“यही तो मेरा पुश्तैनी घर है"।

“मेरे परिवार की तीन पीढ़ियाँ थम्पुरान के इल्लम और खेतों में काम करती रही हैं"।

“आज जहाँ यह छोटा-सा मकान है…”

“वहाँ पहले हमारी झोपड़ी हुआ करती थी"।

“उस समय लगभग साठ लोग इल्लम और उसके आसपास के बाग़-बगीचों में काम करते थे"।

“केले…”

“कटहल…”

“नारियल…”

“आम…”

“कंद-मूल…”

“और तरह-तरह की सब्ज़ियाँ…”

“सब वहीं उगते थे"।

“धान के खेतों में अलग से अस्सी मज़दूर काम करते थे"।

उन्होंने गहरी साँस ली।

“जो लोग इल्लम के भीतर काम करते थे…”

“उन्हें घर के अंदर की हर बात पता होती थी"।

“और फिर वही बातें धीरे-धीरे पूरे गाँव में फैल जाती थीं"।

“मेरा अपना परिवार तीस वर्षों से अधिक समय तक इल्लम की अडुकला (रसोई) में काम करता रहा"।

“और बेटी…”

“रसोई में काम करने वालों से कोई बात छिपी नहीं रहती"।

भगी अम्मा की आँखों में एक अलग ही चमक उभर आई।

“लेकिन उस रात...”

उन्होंने धीरे से कहा,

“कुछ ऐसा हुआ...”

“जिसने पहली बार इस समाज में स्त्रियों के मौन विद्रोह की शुरुआत की।”

“एक ऐसा विद्रोह...”

“जिसकी कल्पना भी उस समय कोई नहीं कर सकता था।”

इतना कहकर उन्होंने बात वहीं रोक दी।

आज की कथा समाप्त हो चुकी थी।

थामरा ने बहुत आग्रह किया।

“अम्मा, अब तो नींद भी नहीं आएगी।”

लेकिन भगी अम्मा मुस्कराती रहीं।

“बस...”

“बाकी कल।”

एक बेचैन रात

उस दिन तीनों चुपचाप लौट रहे थे।

किसी के मुँह से एक शब्द भी नहीं निकला।

जब वे बड़े नाले के पास पहुँचे, तो थामरा और अम्मू जल्दी से पानी में उतर गईं।

दोनों ने थोड़ी देर तैरकर अपने बाल और कपड़े भिगो लिए।

फिर तौलिये से बालों को हल्का-सा सुखाया, ताकि वे पूरी तरह गीले न लगें, लेकिन इतने नम रहें कि किसी को संदेह न हो।

अब थामरा कोई जोखिम नहीं उठाना चाहती थी।

भुतहे थारवाड की कहानी अब अपने सबसे रोमांचक मोड़ पर पहुँच रही थी, और वह अप्पाची के हाथों पकड़ी नहीं जाना चाहती थी।

चलते-चलते अम्मू ने कहा,

“मुझे लगता है, आज रात रामन नम्बूदरी के इल्लम में ज़रूर हिंसा होगी।”

थामरा ने सिर हिलाया।

“नहीं...”

“भगी अम्मा ने तो मौन विद्रोह की बात कही थी।”

“और फिर थम्पुरान तो घायल भी हैं।”

“कम-से-कम अभी के लिए।”

“वे कर ही क्या सकते हैं?”

गोपाल चेतन, जो अब तक चुप थे, अचानक बोले,

“हो सकता है शंकरन नम्बूदरी को सब पता चल गया हो...”

“और उन्होंने गुस्से में रामन को ही मार डाला हो।”

तीनों कुछ क्षण चुप हो गए।

हर किसी के मन में कहानी का अपना-अपना अंत चल रहा था।

अगली सुबह...

थामरा की आँख खुली तो उसने देखा कि न माँ घर में थीं और न अप्पाची।

वह बाहर निकली और पास के नारियल के बाग़ की ओर चली गई।

वहाँ दोनों खड़ी थीं।

कुछ मज़दूर फुर्ती से नारियल के पेड़ों पर चढ़ रहे थे और एक-एक करके नारियल नीचे गिरा रहे थे।

अप्पाची ने उसे देखते ही कहा,

“अच्छा हुआ, तुम जाग गई”।

“मैंने गाड़ी मँगवा ली है”।

“आज हम तेल की घानी जाएँगे”।

थामरा ने आश्चर्य से पूछा,

“लेकिन अप्पाची…”

“ये तो अभी हरे नारियल हैं”।

“इन्हें तो पहले सूखने देना होगा”।

अप्पाची हँस पड़ीं।

“मुझे मत सिखाओ, लड़की”।

“ज़रा घर के सामने जाकर देखो”।

“अटारी से सारे सूखे नारियल मैं कल ही उतरवा चुकी हूँ”।

“वे सब गाड़ी में लादने के लिए तैयार पड़े हैं”।

“आज हम तेल निकलवाने जा रहे हैं…”

“और तुम भी मेरे साथ चलोगी”।

उधर…

जहाँ नम्बूदरी इल्लम में समय जैसे ठहर गया था…

और मौन विद्रोह आकार ले रहा था…

इधर वर्तमान के कडनाड में थामरा का चेहरा उतर गया।

मन तो उसका भगी अम्मा की कहानी में अटका था…

लेकिन जाना पड़ा तेल की घानी।

अप्पाची की दो पुरानी सहेलियाँ भी वहाँ मिलीं।

वे थामरा से मिलकर बहुत प्रसन्न हुईं।

थामरा ने मुस्कराकर उनका अभिवादन किया।

फिर चुपचाप अपनी बारी का इंतज़ार करने लगी।

एक-एक करके अप्पाची के लाए हुए सूखे नारियल मशीन में डाले जाने लगे।

छिलके अलग हुए...

गरी निकली...

और कुछ ही देर बाद पारदर्शी, सुगंधित नारियल का तेल पतली धार बनकर बहने लगा।

अप्पाची ने उसका मन बहलाने के लिए रास्ते में उसे एथक्का पझम (केले के पकौड़े) भी खिलाए।

लेकिन...

थामरा का मन तो अब भी उसी रात में अटका था...

जिस रात नम्बूदरी इल्लम में मौन विद्रोह जन्म लेने वाला था।

शाम तक दोनों थकी-हारी घर लौटीं।

रात के भोजन में सादा चोरु (लाल चावल),

मोरु करी (छाछ की करी)

और चक्का कुरु मेझुक्कुपुरट्टी (मसालों में भुने कटहल के बीज) बने थे।

भोजन के बाद थामरा बिस्तर पर लेट गई।

कुछ देर तक चुप रही।

फिर अचानक उसने माँ से पूछा,

“अम्मा...”

“क्या हमारी पुरखिनें भी कभी बिना वक्ष ढँके रहती थीं?”

पार्वती चौंक उठीं।

“अचानक यह प्रश्न क्यों?”

थामरा ने सहज बनने की कोशिश की।

“बस...”

“एक किताब में पढ़ रही थी”।

पार्वती कुछ पल सोचती रहीं।

फिर बोलीं,

“परंपरा तो यही कहती है”।

“लेकिन यह प्रथा मुख्यतः पुलयार जैसी निम्न जातियों की स्त्रियों पर लागू होती थी”।

थामरा कुछ देर चुप रही।

फिर धीरे से पूछा,

“अम्मा...”

“क्या आप जाति-व्यवस्था में विश्वास करती हैं?”

पार्वती ने गहरी साँस ली।

“हमारा पालन-पोषण उसी सोच में हुआ है”।

“और देख ही रही हो...”

“गाँवों में आज भी उसका असर पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ”।

“दुख की बात है...”

थामरा ने करवट बदलते हुए कहा।

लेकिन उसकी आँखों के सामने केवल एक ही दृश्य घूम रहा था—

वह अगली रात...

जिसका रहस्य भगी अम्मा अगली मुलाक़ात में खोलने वाली थीं।

भगी अम्मा के लिए उपहार

अगली सुबह अम्मू हमेशा की अपेक्षा बहुत जल्दी आ पहुँची।

उसके चेहरे पर उत्साह साफ़ झलक रहा था, हालाँकि वह उसे छिपाने की पूरी कोशिश कर रही थी।

थामरा भी तुरंत तैयार हो गई।

उसने अपना पावडा, ब्लाउज़ और स्नान के बाद बदलने के लिए थोर्थु उठाया।

“अप्पाची... अम्मा... हम जा रहे हैं!”

वह हँसते हुए बोली,

“आज लौटने में देर हो जाएगी। मेरा मन है कि पूरे दिन आराम से पानी में तैरती रहूँ!”

दोनों जैसे ही बाहर निकलने लगीं, पार्वती पीछे से पुकारती हुई आईं।

“थामरा... ज़रा ठहरो!”

उनके हाथों में केले के बड़े पत्तों में सावधानी से लिपटे दो पैकेट थे, जिन्हें नारियल की रस्सी से बाँधा गया था।

“यह तुम्हारे लिए है!”

उन्होंने मुस्कराकर कहा।

थामरा ने उत्सुकता से पैकेट खोला।

उसमें बड़े प्यार से रखे थे—

रोज़ कुकीज़...

डायमंड कट्स...

और मीठा अवल (मीठे चिवड़े)।

फिर पार्वती ने केले के पत्तों में लिपटे दो और पैकेट उसके हाथ में रखे।

“यह पोधि चोरु है!”

“एक तुम्हारे लिए...”

“और एक अम्मू के लिए!”

अम्मू की आँखें खुशी से चमक उठीं।

पार्वती हँस पड़ीं।

"अगर तुम दोनों शाम तक भी लौटो..."

"तो भी भूखी नहीं रहोगी।"

उसी क्षण थामरा को गोपाल चेतन और भगी अम्मा का ध्यान आ गया।

उसने शरारती मुस्कान के साथ कहा,

"अम्मा..."

"दो पैकेट और मिल सकते हैं?"

पार्वती ने आश्चर्य से पूछा,

"इतना सब कौन खाएगा?"

थामरा ने बिना पलक झपकाए उत्तर दिया,

"तैरने के बाद बहुत भूख लगती है।"

"हम लोग दो-दो पैकेट भी खत्म कर देंगे।"

पार्वती हँस पड़ीं।

"अच्छा..."

"रुको।"

वे भीतर गईं और दो और पोधि चोरु लाकर उसके हाथ में रख दिए।

थामरा मन-ही-मन मुस्कराई।

वह जानती थी कि यह भोजन केवल उनके लिए नहीं था।

उसका इरादा था—

भगी अम्मा को यह स्वादिष्ट भोजन खिलाकर उनसे उस दिन कहानी का थोड़ा और बड़ा हिस्सा सुन लेना।

गली के मोड़ पर हमेशा की तरह गोपाल चेतन उनका इंतज़ार कर रहे थे।

थामरा ने मुस्कराकर उनके हाथ में भी कुछ नमकीन और मिठाइयाँ रख दीं।

तीनों चलते-चलते खाते रहे।

ऊपर सूरज आग बरसा रहा था।

हवा में इतनी उमस थी कि कुछ ही देर में तीनों पसीने से तर हो गए।

लेकिन...

आज किसी को गर्मी का अहसास नहीं था।

सबके मन में केवल एक ही उत्सुकता थी—

मौन विद्रोह की वह रात।

“भगी अम्मा!”

थामरा ने बरामदे में पहुँचते ही पुकारा।

“देखिए... आज आपके लिए क्या लाए हैं!”

उसने पूरे का पूरा एक पोधि चोरु उनके सामने रख दिया।

भगी अम्मा की आँखें चमक उठीं।

उन्होंने सबसे पहले केले के पत्ते में रखी रोज़ कुकी उठाई।

एक कौर मुँह में रखते ही उनके चेहरे पर ऐसी तृप्ति फैल गई जैसे किसी बच्चे को मनपसंद मिठाई मिल गई हो।

धीरे-धीरे उन्हें इन बच्चों का साथ अच्छा लगने लगा था।

अब वे स्वयं भी उनके आने की प्रतीक्षा करने लगी थीं।

दिनभर खेतों में काम करने गए बेटे-बहू के लौटने तक उनका अकेलापन इन्हीं बच्चों और इस कहानी से भर जाता था।

और ऊपर से...

पुकयिला की नियमित व्यवस्था।

इससे अधिक उन्हें और क्या चाहिए था?

पेट भरकर खाने के बाद उन्होंने संतोष की साँस ली।

फिर दीवार से टिककर बैठ गईं।

तीनों बच्चे भी उत्सुकता से उनके सामने आ बैठे।

भगी अम्मा ने एक बार फिर अपनी आँखें बंद कीं।

और...

उनकी आवाज़ के साथ वर्तमान धीरे-धीरे धुँधला पड़ने लगा।

तीनों फिर उसी बीते हुए युग में पहुँच गए...

जहाँ उस रात...

एक ऐसा मौन विद्रोह जन्म लेने वाला था,

जो आने वाले समय में पूरे थारवाड का भाग्य बदल देने वाला था।

विद्रोह की रात

उस रात मीनाक्षी ने सरसु को अपनी दादी, पद्मावती, के कमरे में सुला दिया।

आज वह चाहती थीं कि उनका कमरा पूरी तरह खाली रहे।

उन्हें सरसु के कपड़े सावधानी से समेटकर रखने थे।

साथ ही अपनी माँ और भाइयों के लिए बड़े प्रेम से बनाए हुए नमकीन और मिठाइयाँ भी बाँधनी थीं।

वे जानती थीं कि अगले दिन प्रातः शंकरन नम्बूदरी लौट जाएँगे।

वे समय के अत्यंत पाबंद थे।

सूर्य की ओर एक नज़र डालते और उसी के अनुसार प्रस्थान का समय निश्चित कर देते।

फिर संसार की कोई शक्ति उन्हें रोक नहीं सकती थी।

उस रात शंकरन नम्बूदरी ने रामन के विशाल कक्ष में ही विश्राम किया।

कमरे में आमने-सामने रखे आम की लकड़ी के दो विशाल पलंग थे।

रामन और शंकरन के बीच बातचीत बहुत कम हुई।

दोनों अपने-अपने पलंग पर लेट गए।

वैद्यन की चिकित्सा के बाद रामन के पैर का दर्द काफ़ी कम हो गया था।

अब वे हल्का-सा लंगड़ाते हुए चल सकते थे।

बरामदे में रखा विलक्कु (तेल का दीपक) पूरी रात जलने के लिए छोड़ दिया गया।

कमरे के भीतर के दोनों दीपकों की लौ धीमी कर दी गई।

कुछ देर बाद शंकरन की गहरी, नियमित खर्राटों की आवाज़ पूरे कमरे में गूँजने लगी।

लेकिन...

रामन की आँखों में नींद नहीं थी।

तभी...

धीरे-धीरे...

दरवाज़े पर दस्तक हुई।

ठक... ठक... ठक...

रामन झटके से उठ बैठे।

“कौन है?”

उन्होंने ऊँची आवाज़ में पूछा।

अभी वे पूरी तरह उठ भी नहीं पाए थे कि शंकरन नम्बूदरी भी जाग गए।

"रुको..."

उन्होंने शांत स्वर में कहा।

"मैं देखता हूँ"।

उन्होंने अपना मुंडु ठीक किया।

फिर धीरे से उठकर दरवाज़ा खोला।

उधर रामन भी लंगड़ाते हुए उनके पीछे-पीछे आ गए।

उन्हें तनिक भी आभास नहीं था कि अगले कुछ क्षण उनके जीवन की दिशा बदल देंगे।

पहला साक्षी

दरवाज़ा खुलते ही शंकरन नम्बूदरी ने पास रखा विलक्कु (तेल का दीपक) उठाया और बरामदे में आ गए।

दीपक की पीली लौ जैसे ही आगे बढ़ी, उनके कदम वहीं ठिठक गए।

उनके सामने का दृश्य देखकर वे स्तब्ध रह गए।

बरामदे के सामने फैले खुले आँगन में लगभग पचास पुलयार स्त्रियाँ खड़ी थीं।

सभी के वक्ष अनावृत थे।

हर एक के हाथ में जलती हुई चूट्टु (सूखे नारियल के पत्तों से बनी मशाल) थी।

मशालों की काँपती लौ उनके चेहरों पर पड़ रही थी, और पूरा आँगन एक विचित्र, भयावह उजाले से भर उठा था।

शंकरन ने कठोर स्वर में पूछा,

"इस समय यहाँ आने का क्या कारण है?"

भीड़ में से एक युवा स्त्री धीरे-धीरे आगे बढ़ी।

उसका अनावृत शरीर तेल की चमक से दमक रहा था।

कमर तक झूलते लंबे बाल उसकी पीठ पर बिखरे थे।

रामन की साँस जैसे रुक गई।

वह...

कुइल थी।

उसी क्षण उन्हें सब याद आ गया।

उन्होंने ही अचु को आदेश दिया था कि अगली रात कुइल को इल्लम भेज दे।

लेकिन...

वरम्बु पर गिरने की घटना...

शंकरन का अचानक आ जाना...

और वैद्यन के उपचार के बीच...

वे अपना ही आदेश भूल चुके थे।

शंकरन ने कुइल की ओर देखा।

उनकी आवाज़ अब पहले जैसी कठोर नहीं रही।

“बेटी...”

“अपने शरीर को ढँक लो।”

फिर उन्होंने पूरी भीड़ की ओर देखते हुए कहा,

“और तुम सब भी।”

रामन का हृदय धड़क उठा।

कुइल ने सिर झुकाकर बहुत धीमे स्वर में कहा,

“थम्पुरान ने मेरे पति से कहा था...”

“कि आज रात मुझे यहाँ भेज दें।”

भीड़ में खड़ी एक अधेड़ पुलयार स्त्री आगे आई।

उसने कहा,

“यह अकेले आने से डर रही थी”।

“इसलिए हम सब इसके साथ चले आए”।

“हमने सोचा…”

“इतनी सारी स्त्रियों को अपनी सेवा में देखकर थम्पुरान प्रसन्न होंगे”।

उसकी बात सुनते ही शंकरन सब समझ गए।

वर्षों से जो बातें वे लोगों के मुँह से सुनते आए थे…

आज उनका जीवित प्रमाण उनके सामने खड़ा था।

उन्होंने धीरे-धीरे मुड़कर रामन की ओर देखा।

रामन बिल्कुल जड़ हो चुके थे।

उनकी आँखें झुकी हुई थीं।

तभी शंकरन की नज़र सामने वाले गलियारे पर पड़ी।

अँधेरे में खड़ी मीनाक्षी सब कुछ देख रही थीं।

उनके चेहरे पर कोई भाव नहीं था।

शंकरन का क्रोध और भी प्रबल हो उठा।

उन्होंने फिर पुलयार स्त्रियों की ओर मुड़कर ऊँची आवाज़ में कहा,

“यह मेरी बेटी का घर है”।

“मैं नहीं चाहता कि आज के बाद कोई भी स्त्री—किसी भी कारण से—रात के समय इस इल्लम में आए…”

“और न ही कोई स्त्री यहाँ अनावृत अवस्था में दिखाई दे”।

“जो भी मेरी बात नहीं मानेगा…”

“उसे मैं क्षमा नहीं करूँगा”।

फिर उनका स्वर कोमल हो गया।

उन्होंने कुइल से कहा,

“जाओ, बेटी।”

“अपने घर लौट जाओ।”

“अब ऐसा दोबारा कभी नहीं होगा।”

कुइल ने सिर झुका लिया।

धीरे-धीरे पूरा समूह मुड़ गया।

जलती हुई मशालों की पंक्ति अँधेरे में दूर होती चली गई।

कुछ ही क्षणों में पूरा आँगन फिर शांत हो गया।

शंकरन बिना एक शब्द बोले अपने कक्ष में लौट गए।

उनके भीतर क्रोध ज्वालामुखी की तरह धधक रहा था।

उधर गलियारे के दूसरे छोर पर खड़ी मीनाक्षी भी धीरे-धीरे अपने कक्ष में लौट आईं।

उनके चेहरे पर पहली बार एक गहरी, शांत संतुष्टि उभरी।

योजना सफल हो चुकी थी।

किसी को कुछ कहने की आवश्यकता नहीं पड़ी।

सब कुछ स्वयं शंकरन की आँखों के सामने घट चुका था।

मौन विद्रोह की रचयिताएँ

भगी अम्मा ने कुछ क्षण रुककर तीनों बच्चों की ओर देखा।

फिर धीमे स्वर में बोलीं,

“उस रात की पूरी योजना अन्तर्जनम्—यानी इल्लम की स्त्रियों—ने बनाई थी।”

“और उसकी सूत्रधार कोई और नहीं...”

“स्वयं पद्मावती थीं।”

“रामन की अपनी माँ।”

वे अपने पुत्र के आचरण से वर्षों से क्षुब्ध थीं।

जब दो दिन पहले अचु और कुइल को उनकी एडंगाज़ी धान नहीं मिली, तो उनके समुदाय के लोगों ने उन्हें सलाह दी—

“चेरिया थम्पुराटी के पास जाओ।”

“वह दयालु हैं।”

उसी दिन अचु और कुइल चुपचाप मीनाक्षी के पास पहुँचे।

उन्होंने काँपती आवाज़ में बताया कि थम्पुरान ने आदेश दिया है—

अगली रात कुइल को उनके कक्ष में भेज दिया जाए।

यह सुनते ही मीनाक्षी के भीतर वर्षों से दबा हुआ आक्रोश फूट पड़ा।

पद्मावती भी क्रोध से भर उठीं।

ऐसा पहली बार नहीं हुआ था।

लेकिन...

अब बहुत हो चुका था।

ऊपर से रामन लगातार दूसरी शादी की धमकी भी दे रहे थे।

पद्मावती ने दृढ़ स्वर में कहा,

“अब इस आदमी को सबक सिखाना ही होगा।”

लेकिन वे दोनों यह भी जानती थीं कि वे सीधे रामन का सामना नहीं कर सकतीं।

इसीलिए...

एक योजना बनाई गई।

मीनाक्षी और पद्मावती दोनों भली-भाँति जानती थीं कि रामन केवल एक व्यक्ति से डरते हैं—

शंकरन नम्बूदरी।

सम्मानित...

न्यायप्रिय...

और अनुशासनप्रिय।

पद्मावती ने मीनाक्षी से कहा,

"अपने पिता को संदेश भेजो।"

"लिखो कि तुम्हें उनकी याद आ रही है और तुम उनसे मिलना चाहती हो।"

जैसा उन्होंने सोचा था...

वैसा ही हुआ।

अपनी प्रिय बेटी का संदेश मिलते ही शंकरन अगले ही दिन इल्लम पहुँच गए।

उधर मीनाक्षी ने कुइल को संदेश भिजवाया—

जिस रात थम्पुरान ने बुलाया है...

उसी रात आना।

लेकिन अकेली नहीं।

अपने साथ जितनी अधिक पुलयार स्त्रियाँ ला सको...

सबको लेकर आना।

और...

सब उसी परंपरा के अनुसार अनावृत होकर आएँ।

बाकी का काम...

भाग्य स्वयं करेगा।

———

योजना बिल्कुल वैसी ही सफल हुई, जैसी उन्होंने सोची थी।

शंकरन ने सब कुछ अपनी आँखों से देखा।

किसी को कुछ समझाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ी।

सबसे बड़ी बात—

पूरी घटना में कहीं भी यह प्रकट नहीं हुआ कि इसके पीछे मीनाक्षी और पद्मावती का हाथ था।

और ईश्वर भी मानो उसी रात उनके साथ था।

रामन का अचानक गिर जाना...

शंकरन का बिना सूचना के इल्लम पहुँचना...

और सबसे बढ़कर—

रामन का अच्चु को दिया हुआ आदेश भूल जाना।

इन्हीं सब कारणों से अच्चु और कुइल तत्काल उसके क्रोध का शिकार होने से बच गए।

उस रात...

शंकरन नम्बूदरी ने रामन का ऐसा रूप से सामना किया, जैसा पहले कभी नहीं हुआ था।

उनकी गर्जना पूरे इल्लम में गूँज उठी।

“अब समझ में आया...”

उन्होंने क्रोध से कहा,

“कि किसी ने तुम्हारे लिए वरम्बु में गड्ढा क्यों खोदा था!”

“क्या तुम्हें तनिक भी लज्जा नहीं आती?”

“तुम स्वयं को नम्बूदरी कहते हो...”

“धर्म का रक्षक कहते हो...”

“और यही तुम्हारा आचरण है?”

उन्होंने उँगली उठाकर कहा,

“तुम्हारी अपनी बेटी सरसु भी कुछ ही समय बाद कुइल की उम्र की हो जाएगी।”

“क्या तब भी तुम किसी और की बेटी के साथ ऐसा ही व्यवहार करोगे?”

“क्या यही इस थारवाड की परंपरा बन चुकी है?”

रामन सिर झुकाए खड़े रहे।

उनके पास कोई उत्तर नहीं था।

शंकरन का क्रोध अभी शांत नहीं हुआ था।

उन्होंने आगे कहा,

“यदि मेरे बेटों को तुम्हारी करतूतों का पता चल गया...”

“तो वे तुम्हें जीवित नहीं छोड़ेंगे।”

“मीनाक्षी मेरी इकलौती बेटी है।”

“मैंने उससे न जाने कितनी बार उसके जीवन के बारे में पूछा...”

“लेकिन उसने कभी तुम्हारी शिकायत नहीं की।”

उन्होंने गहरी साँस ली।

“यदि मुझे पहले सब पता होता...”

“तो मैं उसे उसी दिन अपने साथ वापस ले जाता।”

कमरे में गहरा मौन छा गया।

उस रात...

न रामन की आँखों में नींद आई...

और न ही शंकरन की।

विदाई और एक नई शुरुआत

उस रात इल्लम में किसी की आँखों में नींद नहीं थी।

रामन नम्बूदरी सारी रात करवटें बदलते रहे।

दूसरी ओर, शंकरन नम्बूदरी भी मौन लेटे रहे।

उनके मन में क्रोध था...

पीड़ा थी...

और अपनी बेटी के लिए गहरी चिंता भी।

सुबह होते ही पूरा इल्लम सामान्य दिनों की अपेक्षा बहुत जल्दी जाग उठा।

शंकरन ने स्पष्ट कह दिया था कि सूरज की तपिश बढ़ने से पहले ही वे वल्लम से लौट जाएँगे।

कोट्टायम से अलप्पुझा तक नाव की यात्रा में साढ़े तीन घंटे से अधिक समय लगता था।

मीनाक्षी सुबह-सुबह ही रसोई में लग गईं।

उन्होंने अपने पिता और सरसु की यात्रा के लिए भोजन सावधानी से बाँधकर तैयार किया।

केले के पत्तों में लिपटे पकवान...

मिठाइयाँ...

और रास्ते के लिए आवश्यक सब कुछ।

जब विदा होने का समय आया, तो शंकरन ने रामन की ओर देखा तक नहीं।

वे सीधे मीनाक्षी के पास गए।

कुछ क्षण तक अपनी बेटी को निहारते रहे।

फिर बहुत शांत स्वर में पूछा,

“बेटी...”

“क्या अब भी तुम यहीं रहना चाहती हो?”

“या मेरे साथ चलोगी?”

बरामदे में गहरा मौन छा गया।

मीनाक्षी ने अपने पिता की आँखों में देखा।

लेकिन...

उन्होंने कुछ नहीं कहा।

न हाँ...

न ना।

उनका मौन पहले जैसा ही अडिग था।

शंकरन सब समझ गए।

उन्होंने और कोई आग्रह नहीं किया।

धीरे से सरसु का हाथ अपने हाथ में लिया।

"चलो, बेटी"।

सरसु ने अपनी माँ की ओर देखा।

मीनाक्षी मुस्कराईं।

उस मुस्कान में स्नेह भी था...

आशीर्वाद भी...

और बिछड़ने की पीड़ा भी।

सरसु दौड़कर अपनी माँ से लिपट गई।

मीनाक्षी ने उसके माथे को चूमा।

"अच्छी बच्ची बनकर रहना"।

उन्होंने धीमे से कहा।

"मौतुशी की बात मानना"।

सरसु ने सिर हिलाया।

कुछ ही देर बाद शंकरन और सरसु वल्लम की ओर बढ़ गए।

मीनाक्षी बरामदे में खड़ी उन्हें तब तक देखती रहीं..

जब तक नाव आँखों से ओझल नहीं हो गई।

भगी अम्मा कुछ क्षणों के लिए चुप हो गईं।

थामरा ने उत्सुकता से पूछा,

“अम्मा...”

“क्या इसके बाद थम्पुरान बदल गए?”

भगी अम्मा ने हल्की मुस्कान के साथ सिर हिलाया।

“अगर लोग इतनी आसानी से बदल जाते...”

“तो इतिहास में इतनी पीड़ा कभी जन्म ही न लेती”।

उन्होंने सामने दूर खड़े उस उजड़े हुए इल्लम की ओर देखा।

“नहीं, बेटी...”

“यह तो केवल शुरुआत थी”।

“अभी इस थारवाड की सबसे बड़ी त्रासदी बाकी है”।

तीनों बच्चे एक साथ उस वीरान इल्लम की ओर देखने लगे।

अब वह उन्हें पहले से भी अधिक रहस्यमय लग रहा था।

ऐसा लगता था...

मानो उसकी हर दीवार किसी ऐसे रहस्य को अपने भीतर छिपाए बैठी हो...

जो अभी सामने आना बाकी था।

भगी अम्मा ने धीरे से अपनी पुकयिला की डिबिया बंद की।

फिर बोलीं,

“अब तुम्हें उस स्त्री की कहानी सुननी होगी...”

“जिसे लोग केवल थम्पुराटी समझते थे...”

“लेकिन जो वास्तव में एक गुरुक्कल थी”।

“यहीं से इस कथा का दूसरा अध्याय शुरू होता है...”

गुरुक्कल थम्पुराटी

दो दिन बाद थम्पुरान लगभग पूरी तरह स्वस्थ हो चुके थे।

वरम्बु पर गिरने के बाद आज पहली बार वे प्रातः काल खेतों का निरीक्षण करने जाने की तैयारी कर रहे थे।

उस सुबह वैद्यन फिर आए थे।

उन्होंने पैर देखकर संतोष से कहा,

“घाव अच्छी तरह भर रहा है”।

“बस एक दिन और विश्राम कर लीजिए”।

“फिर आप पहले की तरह अपना सारा काम कर सकेंगे”।

थम्पुरान बरामदे में आराम से बैठे थे।

उनकी दृष्टि मीनाक्षी पर टिकी थी।

मीनाक्षी तुलसी के चौरे के सामने तुलसी पूजा कर रही थीं।

स्नान के बाद उनके लंबे, भीगे हुए बाल कमर से भी नीचे तक झूल रहे थे।

रामन को उनके खुले बाल बहुत प्रिय थे।

किन्तु अधिकांश थम्पुराटियों की तरह पूजा समाप्त होने के बाद वे बालों में नारियल का तेल लगातीं..

फिर उन्हें बाईं ओर एक सधे हुए जूड़े में बाँध लेतीं..

और उस पर सुगंधित मुल्लापू (मोगरे के फूल) की मोटी वेणी सजा लेतीं।

उनका लंबा, छरहरा शरीर पूरे इल्लम में बड़ी सहजता और गरिमा से चलता था।

उधर...

रामन का अपना शरीर अब धीरे-धीरे दर्द और जकड़न से भरने लगा था।

वे मन-ही-मन सोचते,

यह सब उसकी कलरिपयट्टु की साधना का परिणाम है।

युवावस्था में मीनाक्षी ने अपने पिता और बड़े भाई से आग्रह किया था कि उन्हें कलरिपयट्टु सीखना है।

दोनों ने उनकी इच्छा का सम्मान किया।

उन्होंने एक प्रतिष्ठित कलरी आशान को इल्लम बुलाकर नियमित प्रशिक्षण की व्यवस्था कर दी।

मीनाक्षी ने स्वयं को पूरी निष्ठा से उस साधना में समर्पित कर दिया।

धीरे-धीरे वे कलरिपयट्टु की पूर्ण प्रशिक्षित गुरुक्कल बन गईं।

विवाह से पहले, अपने पिता के इल्लम में वे परिजनों और अतिथियों के सामने निःशस्त्र युद्ध-कौशल का प्रदर्शन करती थीं।

घूँसे...

लातें...

दाँव-पेंच...

पकड़...

छुटकारा...

सबमें वे निपुण थीं।

इतना ही नहीं..

डंडा...

कटार...

तलवार...

भाला...

और ढाल—

हर अस्त्र का संचालन उन्हें समान दक्षता से आता था।

उनके दोनों भाई और शंकरन नम्बूदरी गर्व से रिश्तेदारों और अतिथियों को उनकी कला दिखाते थे।

रामन को आज भी वह दिन याद था...

जब विवाह से पहले मीनाक्षी ने लगभग एक घंटे तक लगातार उनके सामने प्रदर्शन किया था।

बिना रुके...

बिना थके...

उनकी गति, संतुलन और नियंत्रण देखकर वे स्वयं मंत्रमुग्ध रह गए थे।

मीनाक्षी चाहती थीं कि विवाह के बाद भी वे अभ्यास जारी रखें...

और एक दिन अपना कलरी विद्यालय खोलें।

लेकिन...

रामन को यह विचार कभी स्वीकार्य नहीं लगा।

उनकी दृष्टि में...

एक नम्बूदरी स्त्री के लिए इतनी महत्वाकांक्षा उचित नहीं थी।

उन्होंने कभी भी उस स्वप्न को प्रोत्साहन नहीं दिया।

मीनाक्षी सदैव स्वर्णाभूषणों से अलंकृत रहती थीं।

बिल्कुल अपनी माँ की तरह।

उनका मुंडु भी चौड़े सुनहरे किनारे वाला होता था।

जब-जब शंकरन उनसे मिलने आते...

वे अपनी बेटी के लिए कुछ न कुछ सोना अवश्य लाते।

इस कारण रामन को कभी उनके आभूषणों की चिंता नहीं करनी पड़ी।

इस बार भी...

वे सरसु जैसी ही एक जोड़ी स्वर्ण-कर्णफूल लाए थे—

बस आकार में कुछ बड़े।

रामन उन्हें देख सोचने लगे—

क्या मीनाक्षी मेरे साथ प्रसन्न नहीं है?

उसे तो अपने पिता के घर जैसी हर सुविधा यहाँ भी मिलती है।

भले ही शंकरन मुझसे अधिक सम्पन्न हों...

पर मैंने भी उसे किसी चीज़ की कमी नहीं होने दी।

उन्होंने मन ही मन स्वयं को आश्वस्त किया।

उन्हें पूरा विश्वास था कि मीनाक्षी को रात के समय निम्न जाति की स्त्रियों को बुलाने की उनकी आदत के बारे में कुछ भी पता नहीं है।

वे हमेशा उन्हें पिछवाड़े के दरवाज़े से बुलाते थे...

जब पूरा इल्लम सो चुका होता था।

कुइल और पुलयार स्त्रियों वाली घटना को भी उन्होंने मन से निकाल देना ही उचित समझा।

आख़िर हुआ ही क्या था?

शंकरन ने बिना बात का तमाशा खड़ा कर दिया था।

फिर...

मीनाक्षी स्वयं नम्बूदरी थीं।

वे भली-भाँति जानती होंगी कि उस समय समाज में उच्च जाति के पुरुष निम्न जाति की स्त्रियों पर अपना एक अनकहा अधिकार समझते थे।

उन्होंने न कभी विरोध किया...

न कोई शिकायत।

इसलिए...

रामन ने भी उस विषय पर अधिक सोचने की आवश्यकता नहीं समझी।

अधूरी कहानी और बेचैन मन

“बस, आज के लिए यहीं तक।”

भगी अम्मा ने गहरी साँस लेते हुए कहा।

“अब मैं बहुत थक गई हूँ।”

“बाकी कहानी कल सुनाऊँगी।”

फिर मुस्कराकर उन्होंने थामरा की ओर उँगली उठाई।

“और हाँ...”

“कल इस बूढ़ी अम्मा के लिए कुछ मिठाई और नमकीन लाना मत भूलना।”

तीनों बच्चे हँस पड़े।

उन्होंने भगी अम्मा से विदा ली और लौटने लगे।

चलते-चलते थामरा ने कहा,

“देखना, नाले में डुबकी लगाना मत भूलना।”

अम्मू खिलखिलाकर हँस पड़ी।

“मुझे तो उससे भी ज़्यादा जल्दी इस पोथि चोरु को खोलने की है।”

“इतनी देर से उसकी खुशबू सह रही हूँ।”

“कहानी के बीच खोलती, तो भगी अम्मा का ध्यान ही भटक जाता।”

तीनों हँसते हुए बड़े नाले की ओर बढ़ गए।

अगले दिन...

जब दोनों लड़कियाँ घर से निकलने लगीं, तभी पार्वती उनके पीछे-पीछे दौड़ती हुई आईं।

उनके हाथ में एक छोटी-सी टोकरी थी।

उसमें तरह-तरह की खाने-पीने की चीज़ें रखी थीं।

साथ ही...

केले के पत्तों में लिपटे पाँच पोधि चोरु भी थे।

थामरा ने आश्चर्य से पूछा,

"अम्मा..."

"पाँचवाँ किसके लिए है?"

पार्वती मुस्करा दीं।

"आज मैं भी तुम्हारे साथ चल रही हूँ।"

"अप्पाची की बड़ी बहन आने वाली हैं।"

"वे उनके साथ रहेंगी।"

"मेरा भी मन है थोड़ा घूमने का..."

"और बहुत दिनों बाद नाले में तैरने का।"

फिर उन्होंने प्यार से थामरा की ओर देखा।

"देखूँ तो सही..."

"मेरी बेटी अब कितनी अच्छी तैराक बन गई है।"

कुछ क्षणों तक गहरा मौन छाया रहा।

थामरा और अम्मू ने एक-दूसरे की ओर देखा।

दोनों के चेहरे का रंग उड़ चुका था।

यह तो उन्होंने सपने में भी नहीं सोचा था।

अब भगी अम्मा से मिलने का सारा कार्यक्रम बिगड़ गया था।

तीनों चुपचाप चलते रहे।

रास्ते के मोड़ पर गोपाल चेतन पहले से उनका इंतज़ार कर रहे थे।

अम्मू ने दूर से ही हाथ के इशारे से उन्हें वापस लौट जाने को कहा।

गोपाल कुछ समझ नहीं पाए।

उन्होंने प्रश्नवाचक दृष्टि से दोनों लड़कियों को देखा।

लेकिन फिर कंधे उचकाकर लौट गए।

बड़े नाले पर पहुँचकर थामरा बहुत देर तक सोचती रही।

क्या माँ को अपना रहस्य बता देना चाहिए?

लेकिन...

अम्मू इसके बिल्कुल विरुद्ध थी।

वह अप्पाची और पार्वती—दोनों को अच्छी तरह जानती थी।

“नहीं...”

उसने धीरे से कहा।

“अभी नहीं।

“अगर उन्होंने मना कर दिया तो?”

थामरा ने अनमने मन से उसकी बात मान ली।

उस दिन दोनों का तैरने में बिल्कुल मन नहीं लगा।

वे बस थोड़ी देर पानी में रहीं...

फिर बिना कुछ खाए-पिए ही घर लौट आईं।

पार्वती समझ ही नहीं सकीं कि अचानक दोनों का उत्साह कहाँ गायब हो गया।

वापसी का रास्ता…

और फिर पूरा शेष दिन…

बिना किसी विशेष घटना के बीत गया।

शाम को अप्पाच्ची की बहन ने आग्रह किया,

“थामरा…”

“कुछ दिन मेरे साथ अलप्पुझा चलोगी?”

थामरा ने तुरंत सिर हिला दिया।

“नहीं।

“मैं अपनी अप्पाच्ची और अम्मा के साथ ही रहना चाहती हूँ।

भला कौन समझ सकता था…

कि उसका मन वास्तव में कहाँ अटका हुआ था?

उसके मन में बार-बार वही दृश्य घूम रहा था—

रामन नम्बूदरी…

इल्लम के दरवाज़े पर खड़े…

हाथ में छड़ी लिए…

खेतों की ओर जाने को तैयार…

और फिर…

उस भुतहे इल्लम का रहस्य।

वह और अम्मू दोनों अब बेचैन थीं।

वे जानना चाहती थीं कि आखिर ऐसा क्या हुआ…

जिसने उस जीवंत थारवाड को एक उजड़ा हुआ, भुतहा इल्लम बना दिया।

जिस दिन खेत गंजे हो गए

अगले दिन दोनों लड़कियाँ सामान्य से भी पहले घर से निकलने की तैयारी करने लगीं।

उनका निश्चय था—

आज किसी भी तरह पूरी कहानी सुनकर ही लौटेंगी।

थामरा रसोई में पहुँची और बोली,

“अम्मा…”

“आज थोड़ा ज़्यादा पायसम बना दीजिए।”

पार्वती मुस्करा दीं।

“क्यों?”

“आज इतनी मिठाई किसके लिए?”

थामरा ने हँसते हुए कहा,

“बस… मन कर रहा है।”

लेकिन उसके मन की बात कुछ और थी।

वह सोच चुकी थी—

आज भगी अम्मा को स्वादिष्ट पायसम खिलाकर पूरी कहानी एक ही बैठक में सुनवा लेगी।

पार्वती ने दोनों लड़कियों को ध्यान से देखा।

“अब तबीयत ठीक है न?”

उन्होंने चिंता से पूछा।

“कल तो तुम दोनों इतनी उदास थीं..”

“तैरने का भी मन नहीं था।”

“मुझे लगा, अब तुम्हारे मनोरंजन के लिए कुछ नया सोचना पड़ेगा।”

थामरा तुरंत हँस पड़ी।

“अरे नहीं, अम्मा!”

“बस... कल ऐसा ही दिन था।”

“आज हम बिल्कुल ठीक हैं।”

“अगर लौटने में थोड़ी देर हो जाए तो चिंता मत करना।”

“कल की कसर आज पूरी कर लेंगे।”

पार्वती ने मुस्कराकर एक स्टील के बर्तन में गर्म-गर्म पायसम भर दिया।

साथ ही केले के पत्तों में लिपटे चार पोथि चोरु भी उनके हाथ में रख दिए।

दोनों लड़कियाँ खुशी-खुशी उछलती हुई घर से निकल पड़ीं।

भगी अम्मा आज मानो उनकी राह ही देख रही थीं।

उन्हें देखते ही बोलीं,

“पहले मेरी पुकयिला कहाँ है?”

गोपी ने मुस्कराकर तंबाकू की गड्डी उनके हाथ में रख दी।

तभी थामरा ने शरारत से कहा,

“अम्मा...”

“अगर आज पूरी कहानी सुना दें...”

“तो आपको एक विशेष उपहार मिलेगा।”

उसने स्टील का डिब्बा खोला।

क्षणभर में ताज़े पायसम की मीठी सुगंध पूरे बरामदे में फैल गई।

भगी अम्मा की आँखें चमक उठीं।

उन्होंने तुरंत हामी भर दी।

“ठीक है...”

“लेकिन एक शर्त है”।

“कहानी समाप्त होने के बाद भी तुम लोग मुझे मिलने आते रहोगे”।

थामरा ने बिना एक पल गँवाए कहा,

“वचन देती हूँ”।

भगी अम्मा संतुष्ट होकर मुस्कराईं।

उन्होंने पायसम का पहला कौर खाया।

फिर आँखें बंद कर लीं।

और...

एक बार फिर चारों लोग कल्पना की उस अदृश्य बस में सवार हो गए...

जो उन्हें वर्तमान से उठाकर सीधे रामन नम्बूदरी के इल्लम पहुँचा देती थी।

जिस दिन खेत गंजे हो गए

थम्पुरान ने अपनी छड़ी हाथ में उठाई...

और रोज़ की तरह खेतों के निरीक्षण के लिए निकल पड़े।

रास्ते में उनकी भेंट विष्णु नम्बूदरी से हुई।

उन्होंने मुस्कराकर पूछा,

“अब पैर कैसा है?”

“सुना है वरम्बु में बने किसी गड्ढे में गिर पड़े थे”।

ऐसी घटनाएँ बहुत कम होती थीं।

इसलिए रामन के गिरने की खबर पूरे गाँव में फैल चुकी थी।

विष्णु नम्बूदरी के मन में एक और प्रश्न भी था।

वे पूछना चाहते थे—

उस रात रामन के इल्लम के बाहर इकट्ठी हुई पुलयार स्त्रियों का क्या मामला था?

लेकिन...

इतना साहस उनमें नहीं था।

———

रामन और विष्णु...

दोनों के इल्लम में एक ही एझवा स्त्री काम करती थी।

उसका नाम था—

दक्षायणी।

वह दोनों घरों में बड़े-बड़े पत्थर के ओखलों पर चावल कूटकर उसका आटा तैयार करती थी।

उसी दक्षायणी ने विष्णु नम्बूदरी की थम्पुराटी को बताया था—

कि उस रात कुइल के साथ बहुत-सी पुलयार स्त्रियाँ रामन के इल्लम पहुँची थीं।

रामन आगे बढ़ गए।

लेकिन भीतर ही भीतर उनका मन जल उठा।

तो अब पूरा गाँव जानता है...

उन्होंने दाँत भींच लिए।

काश...

उन लोगों को पकड़कर पीट सकता...

जिन्होंने यह अफ़वाह फैलाई...

और वरम्बु में वह गड्ढा खोदा।

धान की पौध अब रोपाई के लिए तैयार थी।

खेतों में रोपाई का काम पूरे जोर-शोर से चल रहा था।

दोपहर की धूप तेज़ थी।

मज़दूर बारी-बारी से पास के नाले में जाकर शरीर ठंडा कर रहे थे।

कुछ लोगों ने तो अपना चोरु पोधि भी खोल लिया था।

वे छोटे-छोटे समूहों में बैठकर भोजन कर रहे थे।

रामन खेतों में घूमते रहे।

जैसे ही वे किसी स्त्री के सामने पहुँचते...

युवा हो या वृद्ध...

सब अपनी छाती अनावृत कर देतीं।

अपमानजनक परंपरा का पालन आज भी उसी तरह हो रहा था।

रामन ने मन-ही-मन सोचा—

कुमारन से कहना होगा...

“इन्हें पंद्रह मिनट से ज़्यादा खाने मत देना।”

“रोपाई जितनी जल्दी पूरी होगी...”

“उतना कम खर्च आएगा।”

“और अगर कोई देर करे...”

“तो उसकी एडंगाज़ी भी घटा देना।”

इतना कहकर वे आगे बढ़ गए।

उन्हें अभी नहीं मालूम था...

कि आज का दिन...

उनके जीवन का सबसे बड़ा मोड़ बनने वाला है।

कुइल का अपमान

खेतों का निरीक्षण करते-करते रामन नम्बूदरी की नज़र अच्चु पर पड़ी।

वह रोपाई के लिए धान की पौध उखाड़ रहा था।

रामन ने चारों ओर नज़र दौड़ाई।

“कुइल कहाँ है?”

उन्होंने कठोर स्वर में पूछा।

अच्चु ने बिना कुछ कहे खेत के भीतर की ओर इशारा किया।

वहाँ, कीचड़ और पानी के बीच, स्त्रियों का एक समूह रोपाई में व्यस्त था।

वह स्थान वरम्बु से काफी दूर था।

यदि रामन वहाँ तक जाना चाहते, तो उन्हें स्वयं कीचड़ में उतरकर खेत पार करना पड़ता।

रामन ने आदेश दिया,

“जाओ... उसे बुलाकर लाओ”!

अच्चु वहीं खड़ा रहा।

उसका शरीर क्रोध से काँप रहा था।

लेकिन उसने सिर नहीं उठाया।

उसकी निगाहें अपने पैरों पर जमी रहीं।

रामन का चेहरा तमतमा उठा।

उन्होंने बिना एक पल गँवाए अपनी छड़ी पूरी ताकत से अच्चु पर दे मारी।

अच्चु दर्द से कराह उठा...

लेकिन...

अपनी जगह से नहीं हिला।

रामन उसके इस साहस से क्षणभर के लिए चौंक गए।

उन्होंने पास खड़ी एक पुलयार स्त्री की ओर देखा।

“तुम...”

“जाकर कुइल को बुलाओ!”

डरी हुई स्त्री बिना कुछ कहे खेत के भीतर भागी।

पूरे खेत में सन्नाटा छा गया।

हर व्यक्ति साँस रोके आगे होने वाली घटना की प्रतीक्षा करने लगा।

———

कुछ ही क्षणों बाद...

कुइल धीरे-धीरे उनकी ओर आती दिखाई दी।

उसकी चाल में वही सहज गरिमा थी।

उसने अपना थोर्थु इस तरह ओढ़ रखा था कि उसके लंबे बाल आगे खींचकर उसकी छाती को ढँक रहे थे।

जैसे-जैसे वह पास आती गई...

रामन की आँखों में वासना और गहरी होती गई।

वे उसके लहराते हुए कदमों...

और उसकी कमर तक झूलते बालों को घूरते रहे।

कुइल आकर उनके सामने शांत भाव से खड़ी हो गई।

रामन ने उसकी आँखों में देखते हुए पूछा,

“अनुसरणम् इल्ले?”

“अब आज्ञा मानना भी छोड़ दिया है?”

कुइल ने कोई उत्तर नहीं दिया।

रामन गरजे,

"रीति के अनुसार कपड़ा हटाओ"।

कुइल चुप रही।

रामन ने और ऊँची आवाज़ में वही आदेश दोहराया।

इस बार कुइल ने शांत स्वर में कहा,

"वलिया थम्पुरान ने मुझे अपने शरीर को ढँककर रखने के लिए कहा है"।

रामन की आँखों में आग भर उठी।

"अच्छा...!"

"अब तुम मुझे शंकरन नम्बूदरी का नाम लेकर डराओगी?"

"तुम्हें काम कौन देता है?"

"एडंगाज़ी कौन देता है?"

उन्होंने एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए कहा,

"आख़िरी बार पूछ रहा हूँ..."

"क्या तुम अपना वक्ष अनावृत करोगी..."

"या नहीं?"

कुइल वहीं स्थिर खड़ी रही।

उसने न सिर झुकाया...

न कपड़ा हटाया।

क्रोध से पागल हो चुके रामन ने कुमारन की ओर मुड़कर आदेश दिया,

"अभी जाओ..."

"और क्षुरकन (नाई) को बुलाकर लाओ"।

उन्होंने एक मज़दूर को नाई लाने भेजा।

दूसरे को कुर्सी लाने का आदेश दिया।

सिर्फ़ दस मिनट बाद...

सभी मज़दूरों की मौन भीड़ के बीच...

नागन क्षुरकन दौड़ता हुआ वहाँ पहुँचा।

रामन ने कुइल की ओर उँगली उठाई।

"इसके बाल मूँड़ दो।"

यह सुनते ही कुइल की चीख पूरे खेत में गूँज उठी।

उसने दोनों हाथों से अपने लंबे बालों को कसकर पकड़ लिया।

वह रोती रही...

गिड़गिड़ाती रही...

लेकिन किसी ने उसकी नहीं सुनी।

चारों ओर खड़े मज़दूर स्तब्ध थे।

उनकी आँखों में भय था...

और असहाय क्रोध भी।

नागन के हाथ काँप उठे।

उसने धीमे स्वर में कहा,

"थम्पुरान..."

लेकिन...

रामन की एक कठोर दृष्टि ही उसे चुप कराने के लिए पर्याप्त थी।

दो मज़दूरों को आदेश दिया गया—

कुइल को पकड़कर कुर्सी पर बैठाओ।

उन्होंने काँपते हुए उसके हाथ और पैर पकड़ लिए।

कुइल छटपटाती रही।

रोती रही।

लातें मारती रही।

लेकिन कोई लाभ नहीं हुआ।

अचु अपनी पत्नी को बचाने दौड़ा।

रामन की छड़ी फिर उसके शरीर पर बरसी।

इस बार दो और मज़दूरों को आदेश मिला—

“इसे भी पकड़ लो।”

पूरा खेत स्त्रियों के विलाप से भर उठा।

उनकी चीखें...

कुइल की चीखों में मिल गईं।

नागन ने भारी मन से अपना उस्तरा तेज़ किया।

फिर काँपते हाथों से कुइल के सिर पर चलाना शुरू किया।

कुछ ही क्षणों में...

पूरा खेत बिल्कुल शांत हो गया।

कुइल अब रो भी नहीं रही थी।

वह बिल्कुल निश्चल बैठी थी।

उसके प्रिय...

कमर तक लहराते...

घने, सुंदर बाल...

एक-एक करके धरती पर गिरते जा रहे थे।

उस दिन केवल उसके बाल ही नहीं कटे...

उसके भीतर भी कुछ हमेशा के लिए टूट गया।

और...

पुलयार समाज के भीतर भी।

जब उसके बाल गिरते गए...

उसका वक्ष अनावृत होता गया।

रामन नम्बूदरी यह दृश्य देख रहे थे।

उनके चेहरे पर क्रूर संतोष की मुस्कान फैल गई।

मौन विद्रोह

कुइल धीरे-धीरे उठी।

उसने किसी की ओर नहीं देखा।

कुछ कदम चलकर वह थोड़ी दूर जाकर ज़मीन पर बैठ गई।

उसकी आँखों से आँसू भी नहीं निकल रहे थे।

मानो उसके भीतर का हर भाव उसी क्षण मर चुका हो।

उधर नागन क्षुरकन अपने उस्तरे को साफ़ कर रहा था।

वह उसे कपड़े में लपेटकर वापस रखने ही वाला था कि अच्चु आगे बढ़ा।

उसने चुपचाप नागन के सामने सिर झुका दिया।

फिर अपने सिर की ओर इशारा किया।

वह भी अपना सिर मुँड़वाना चाहता था।

नागन ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा।

रामन नम्बूदरी भी क्षणभर के लिए स्तब्ध रह गए।

लेकिन इससे पहले कि कोई कुछ समझ पाता...

एक और मज़दूर आगे आया।

फिर दूसरा...

फिर तीसरा...

देखते ही देखते...

पूरा खेत एक पंक्ति में खड़े स्त्री-पुरुष मज़दूरों से भर गया।

हर कोई...

बिना एक शब्द बोले...

अपना सिर मुँड़वाने के लिए खड़ा था।

कुइल अकेली नहीं रहेगी।

अच्चु अकेला नहीं रहेगा।

पूरा समुदाय...

उनके साथ खड़ा था।

नागन की आँखें भर आईं।

काँपते हाथों से उसने एक-एक करके सबके सिर मुँड़ाने शुरू किए।

पुरुष...

स्त्रियाँ...

युवा...

वृद्ध...

एक-एक कर सब आगे आते गए।

सिर्फ़ कुमारन को छोड़कर।

उसने सिर नहीं मुँड़वाया।

कुछ ही देर में...

पूरा खेत काशण्डि थलगल (गंजे सिरों) से भर गया।

सूरज की रोशनी उन मुंडे हुए सिरों पर पड़कर चमक रही थी।

वह दृश्य किसी मौन प्रतिज्ञा जैसा था।

बिना नारे...

बिना हथियार...

बिना हिंसा...

एक पूरा समुदाय अन्याय के विरुद्ध खड़ा हो गया था।

यह उनका मौन विद्रोह था।

रामन नम्बूदरी कुछ देर तक वह दृश्य देखते रहे।

फिर ऐसे मुँह फेरकर चल दिए...

मानो उन्हें इससे कोई फ़र्क ही न पड़ता हो।

मन-ही-मन उन्होंने तिरस्कार से सोचा,

इन अपवित्र जातियों के बाल रहें या न रहें...

मुझे क्या?

और वे छड़ी घुमाते हुए इल्लम की ओर लौट गए।

उस दिन खेतों में फिर कोई काम नहीं हुआ।

किसी मज़दूर ने अपनी एडंगाज़ी लेने भी नहीं गया।

पूरा पुलयार समुदाय गहरे अपमान, पीड़ा और क्रोध के साथ अपने बस्ती की ओर लौट पड़ा।

चलते-चलते स्त्रियाँ फूट-फूटकर रो रही थीं।

उनके लिए बाल केवल श्रृंगार नहीं थे...

उनकी अस्मिता थे।

कुइल बार-बार स्वयं को दोष दे रही थी।

यह सब मेरी वजह से हुआ...

उसे सबसे अधिक भय एक ही बात का था।

क्या अचु अब भी मुझसे प्रेम करेगा?

एक दिन उसने कहा था—

“पहली बार जब मैंने तुम्हें देखा था...”

“तो तुम्हारे लंबे बालों से ही प्रेम हो गया था।”

वह स्मृति उसके हृदय को चीर रही थी।

रात होने तक पूरा पुलयार समुदाय खुले मैदान में एक साथ बैठा रहा।

चाँदनी उनके मुंडे हुए सिरों पर पड़ रही थी।

केवल बूढ़े...

और छोटे बच्चे...

जो उस दिन खेत नहीं गए थे...

उन्हीं के बाल बचे थे।

उस रात...

पूरी बस्ती में एक भी चूल्हा नहीं जला।

भूख से बड़ी पीड़ा...

अपमान की थी।

कुएँ के पास

उधर थम्पुरान इल्लम लौट आए।

वे अपने बरामदे में बैठ गए, पर आज उनके भीतर एक अनजानी बेचैनी थी।

अगर शंकरन नम्बूदरी को आज की घटना का पता चल गया तो?

अगले ही क्षण उन्होंने स्वयं को समझाया।

उन्हें इससे क्या लेना-देना?

ज़मीन मेरी है…

मज़दूर मेरे हैं…

उनके साथ कैसा व्यवहार करना है, यह निर्णय भी मेरा ही होगा।

यह सोचकर वे स्नान के लिए उठे।

इल्लम से कुछ दूर, कुएँ के पास बना कुलिमुरी (स्नानघर) उनकी ओर था।

धीरे-धीरे चलते हुए वे वहाँ पहुँचे।

तभी उनकी नज़र एक अनजान स्त्री पर पड़ी।

वह कुएँ की दूसरी ओर से उनकी तरफ़ आ रही थी।

रामन ठिठक गए।

“तुम कौन हो?”

उन्होंने पूछा।

“और यहाँ क्या कर रही हो?”

स्त्री ने विनम्रता से उत्तर दिया,

“मैं एझवा जाति की हूँ।”

“थम्पुराटी ने मुझे अडुकला (रसोई) के कुछ कामों में सहायता के लिए बुलाया है।”

रामन ने उसे गौर से देखा।

“हूँ...”

“मैंने तुम्हें पहले कभी नहीं देखा।”

उन्होंने चारों ओर नज़र दौड़ाई।

आसपास कोई नहीं था।

उनके चेहरे पर वही परिचित वासना उतर आई।

धीरे से बोले,

“अपने शरीर से यह थोर्थु हटा दो।”

“क्या तुम्हें नहीं मालूम...”

“नम्बूदरी का सम्मान कैसे किया जाता है?”

स्त्री ने अनिच्छा से अपना थोर्थु हटा दिया।

रामन की दृष्टि उसके शरीर पर ठहर गई।

कुछ क्षण तक वे उसे घूरते रहे।

फिर बोले,

“मेरे स्नान के लिए कुएँ से ताज़ा पानी निकालो।”

“उसके बाद रसोई में चली जाना।”

वे उसके पीछे-पीछे कुलिमुरी की ओर बढ़े।

स्त्री ने जल्दी से अपना थोर्थु फिर ओढ़ने की कोशिश की।

रामन ने जीभ से हल्की-सी आवाज़ निकालकर उसे चेतावनी दी।

वह तुरंत रुक गई।

उसने पास रखे बड़े अप्पचेम्बु (पानी रखने के बड़े पात्र) की ओर इशारा किया।

“उसमें पानी पहले से भरा हुआ है।”

रामन ने कठोर स्वर में कहा,

“जो कहा है, वही करो।”

“मुझे ताज़ा पानी चाहिए।”

मन-ही-मन घृणा से भर उठी वह स्त्री चुपचाप कुएँ से पानी खींचने लगी।

दोनों बड़े पात्र भर जाने के बाद वह तेज़ी से रसोई की ओर चली गई।

रामन उसे जाते हुए देर तक देखते रहे।

उन्हें तनिक भी आभास नहीं था...

कि वह स्त्री कोई साधारण कामवाली नहीं थी।

वह थी—

दक्षायणी।

वही दक्षायणी...

जो विष्णु नम्बूदरी के इल्लम में भी चावल कूटने का काम करती थी।

और...

मीनाक्षी थम्पुराटी की सबसे विश्वसनीय सहयोगी थी।

उसी ने मीनाक्षी को उन एझवा और पुलयार स्त्रियों के बारे में बताया था...

जिन्हें रात के अँधेरे में थम्पुरान अपने कक्ष में बुलाते थे।

कुइल की हर ख़बर भी वही मीनाक्षी तक पहुँचाती रही थी।

जब भी मीनाक्षी गुप्त रूप से कुइल को एडंगाज़ी दिलवाना चाहतीं..

दक्षायणी ही उनके संदेश लेकर जाती।

———

लेकिन...

आज पहली बार...

दक्षायणी ने स्वयं थम्पुरान का वास्तविक रूप देखा था।

उसके भीतर घृणा उमड़ पड़ी।

वह सोच भी नहीं सकती थी...

कि जिसकी पत्नी इतनी गरिमामयी...

इतनी सुन्दर...

और इतनी विदुषी हो...

वह पुरुष फिर भी गाँव की हर स्त्री पर अपना अधिकार जमाना चाहता हो।

उसने उसी क्षण निश्चय कर लिया—

आज जो कुछ खेत में हुआ...

और कुलिमुरी के पास उसके साथ जो हुआ...

उसका एक-एक शब्द वह मीनाक्षी थम्पुराटी को बताएगी।

अधूरी वासना

स्नान करके थम्पुरान अपने कक्ष में लौट आए।

लेकिन उनका मन कहीं टिक नहीं रहा था।

बार-बार उनके सामने केवल कुइल का चेहरा उभर आता।

उसका मुंडा हुआ सिर...

उसकी बड़ी-बड़ी आँखें...

और अपमान से भरा उसका मौन।

अजीब बात थी।

बाल कट जाने के बाद भी कुइल का आकर्षण उनके मन से कम नहीं हुआ था।

बल्कि...

उन्हें वह पहले से भी अधिक विचलित कर रही थी।

कुलिमुरी के पास मिली वह युवा एझवा स्त्री भी बार-बार उनकी स्मृति में लौट रही थी।

दिन भर इल्लम में असामान्य शांति छाई रही।

मीनाक्षी और पद्मावती हमेशा की तरह चुपचाप भोजन परोसती रहीं।

भोजन करते-करते थम्पुरान ने सहज बनने की कोशिश करते हुए पूछा,

“आज रसोई में जो नई एझवा स्त्री आई थी...”

“वह कौन है?”

“मैंने उसे पहले कभी नहीं देखा।”

“काम अच्छा करती है?”

मीनाक्षी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

वे शांत भाव से भोजन परोसती रहीं।

तब पद्मावती ने उत्तर दिया,

“हाँ...”

“काम अच्छा करती है।”

फिर उन्होंने सीधा थम्पुरान की आँखों में देखते हुए पूछा,

“तुम्हें क्या लगता है?”

प्रश्न सुनते ही रामन असहज हो उठे।

क्षणभर के लिए उनके पास कोई उत्तर नहीं था।

बात बदलने के लिए उन्होंने जल्दी से कहा,

“आज माठंगा करी बहुत स्वादिष्ट बनी है।”

लेकिन पद्मावती अभी रुकी नहीं थीं।

वे बोलीं,

“उसका नाम दक्षायणी है।”

“वह हमारे इल्लम में भी काम करती है...”

“और विष्णु नम्बूदरी के इल्लम में भी।”

यह सुनते ही थम्पुरान के गले में भोजन अटक गया।

उन्होंने खाँसते हुए कहा,

“दोनों घरों में काम करने वाली स्त्री को यहाँ क्यों रखा है?”

पद्मावती ने तीखे स्वर में उत्तर दिया,

“क्योंकि मुझे यह जानना अच्छा लगता है कि विष्णु नम्बूदरी के घर में क्या चल रहा है।”

उनकी बात में छिपा व्यंग्य रामन समझ गए।

उन्होंने झुँझलाकर कहा,

“अम्मा...”

“आपको ऐसी आदतें नहीं पालनी चाहिए।”

पद्मावती हल्का-सा मुस्कराईं।

फिर बोलीं,

“क्या करूँ, नम्बूदरी...”

“मैं तुम्हारी माँ हूँ।”

“कुछ बातें हम दोनों में एक जैसी ही हैं।”

उनके शब्द तीर की तरह रामन के भीतर उतर गए।

वे चुपचाप भोजन समाप्त कर उठ गए।

मन-ही-मन सोचते रहे—

अम्मा की जुबान सचमुच बहुत कड़वी है।

उस रात भी थम्पुरान को नींद नहीं आई।

लेकिन...

कारण न तो कुइल का अपमान था...

और न ही पुलयार समुदाय की पीड़ा।

उन्हें अब भी केवल अपनी अधूरी वासना बेचैन कर रही थी।

आख़िरकार वे बिस्तर से उठे।

उन्होंने निश्चय किया—

आज वे अपने वैवाहिक अधिकार का उपयोग करेंगे।

शायद इससे मन की यह आग शांत हो जाए।

धीरे-धीरे वे गलियारे से होते हुए उन दो किडप्पुमुरियों की ओर बढ़े जहाँ मीनाक्षी और सरसु सोया करती थीं।

आज सरसु अपने ननिहाल गई हुई थी।

इसलिए वे कुछ अधिक निश्चिंत थे।

हमेशा की तरह उन्होंने मीनाक्षी का ध्यान आकर्षित करने के लिए धीरे-धीरे खाँसना शुरू किया।

एक बार...

फिर दूसरी बार...

फिर तीसरी बार...

लेकिन...

अंदर कोई हलचल नहीं हुई।

अचानक...

दूसरी ओर से भी खाँसी की आवाज़ सुनाई दी।

रामन ठिठक गए।

उन्होंने फिर खाँसा।

उधर से फिर वैसी ही खाँसी सुनाई दी।

कुछ देर तक यही चलता रहा।

रामन उलझन में पड़ गए।

आख़िरकार...

दरवाज़ा खुला।

और अगले ही क्षण...

उनके चेहरे का रंग उड़ गया।

पद्मावती का व्यंग्य

दरवाज़ा खुला।

लेकिन बाहर मीनाक्षी नहीं थीं।

लंबे खुले बालों को जूड़े में बाँधती हुई पद्मावती बाहर निकलीं।

रामन जैसे पत्थर के हो गए।

वे बिल्कुल तैयार नहीं थे कि सामने उनकी माँ खड़ी होंगी।

घबराहट छिपाने के लिए उन्होंने फिर से खाँसना शुरू कर दिया।

पद्मावती ने कुछ क्षण उन्हें ध्यान से देखा।

फिर बिल्कुल सहज स्वर में पूछा,

"क्या चाहिए, नम्बूदरी?"

रामन ने झिझकते हुए पूछा,

"मीनाक्षी... क्या वह भीतर नहीं है?"

"है"।

पद्मावती ने शांत स्वर में उत्तर दिया।

"लेकिन वह सो चुकी होगी"।

"आधी रात बीत चुकी है"।

“और मुझे नहीं लगता...”

“कि वह तुम्हारी तरह इतनी बेचैन है।”

उनके होंठों पर हल्की-सी मुस्कान तैर गई।

“अगर तुम्हें किसी चीज़ की ज़रूरत हो...”

“तो मैं सहायता कर सकती हूँ।”

रामन ने एक बार फिर खाँसी का बहाना बनाया।

“मुझे लगा...”

“मैंने मीनाक्षी को खाँसते सुना।”

पद्मावती मुस्करा उठीं।

“वह मैं थी।”

“मीनाक्षी नहीं।”

“क्या तुम्हें अपनी माँ की आवाज़...”

“और अपनी थम्पुराटी की आवाज़ में अंतर भी नहीं पहचान में आता?”

रामन मौन खड़े रहे।

पद्मावती आगे बोलीं,

“तुम्हारी खाँसी सुनकर मैंने भी खाँसना शुरू कर दिया।”

“सोचा...”

“देखूँ, यह नाटक कितनी देर चलता है।”

“लेकिन मुझे नहीं लगता कि मीनाक्षी अब उठेगी।”

“इसलिए बेहतर होगा...”

“तुम जाकर सो जाओ।”

फिर एक क्षण रुककर उन्होंने तीखा व्यंग्य किया,

“हाँ...”

“यदि रसोई से कुछ चाहिए हो...”

“तो अवश्य बता देना।”

रामन अपमान से भीतर तक जल उठे।

माँ के व्यंग्य ने उन्हें असहज कर दिया था।

वे बिना कुछ बोले तुरंत वहाँ से हट गए।

नींद तो उन्हें आने से रही।

उन्होंने सोचा—

चलो, रसोई से कुछ केले या मीनाक्षी के बनाए नमकीन ही खा लूँ।

बरामदे में टँगा हुआ विलक्कु हाथ में लेकर वे चुपचाप अडुकला (रसोई) की ओर बढ़े।

उन्होंने धीरे से पुराना लकड़ी का दरवाज़ा खोला।

चूल्हे के दूसरी ओर केले रखे रहते थे।

वे नहीं चाहते थे कि फिर से पद्मावती जाग जाएँ...

और उनकी तीखी बातों का सामना करना पड़े।

तभी...

अचानक ऊपर से किसी स्त्री की डरी हुई आवाज़ आई—

“कौन है?”

रामन ने सिर उठाकर देखा।

रसोई के ऊपर बने बड़े मचान पर...

जहाँ अनाज, खेती का सामान और बड़े-बड़े बर्तन रखे जाते थे...

सीढ़ियों के ऊपर से एक चेहरा झाँक रहा था।

उसे देखते ही रामन पहचान गए।

वह वही एझवा स्त्री थी...

जिसे उन्होंने दिन में कुएँ के पास देखा था।

“तुम यहाँ क्या कर रही हो?”

उन्होंने पूछा।

स्त्री ने उत्तर दिया,

“थम्पुराटी ने कहा है...”

“सुबह बहुत काम रहेगा।”

“इसलिए आज रात यहीं रुक जाऊँ।”

“मैं अक्सर ऐसा करती हूँ।”

रामन के चेहरे पर हल्की मुस्कान फैल गई।

क्षणभर के लिए उनके मन में विचार आया—

क्यों न इसे आज रात अपने किडप्पुमुरी में बुला लूँ?

लेकिन अगले ही क्षण उन्हें पद्मावती की बात याद आ गई—

“वह विष्णु नम्बूदरी के इल्लम में भी काम करती है।”

वे सोचने लगे—

अगर इसे बुलाया...

तो क्या यह बात बाहर फैल जाएगी?

फिर उन्होंने स्वयं ही विचार बदल दिया।

नहीं..

आज नहीं।

कहीं अम्मा अभी भी जाग रही हों।

उन्होंने सहज बनने की कोशिश करते हुए पूछा,

“केले कहाँ रखे हैं?”

दक्षायणी मचान की एक सीढ़ी ऊपर चढ़ी।

वहाँ से दो केले नीचे बढ़ा दिए।

रामन ने केले ले लिए।

फिर कठोर स्वर में बोले,

“अब सो जाओ”।

इतना कहकर वे लौट आए।

उनके मन में निराशा थी।

आज भी...

उनका शिकार...

उनके हाथ से निकल गया था।

खेतों का विद्रोह

अगली सुबह थम्पुरान हमेशा की तरह धान के खेतों के निरीक्षण के लिए तैयार हो रहे थे।

तभी बाहर से कुमारन की घबराई हुई आवाज़ सुनाई दी।

“थम्पुरान...!”

रामन तेज़ी से बाहर आए।

“क्या हुआ?”

उन्होंने झुँझलाकर पूछा।

“तुम खेतों में क्यों नहीं हो?”

“तुम तो जानते ही हो...”

“इन नीची जाति के लोगों को ज़रा-सा बहाना मिल जाए, तो काम छोड़कर नाले में नहाने या आराम करने बैठ जाते हैं।”

शोर सुनकर पद्मावती और मीनाक्षी भी अपने-अपने कमरों से बाहर आ गईं।

कुमारन बुरी तरह हाँफ रहा था।

वह दौड़ता हुआ इल्लम तक आया था।

उसने साँस सँभालते हुए कहा,

“थम्पुरान...”

“आज खेत में एक भी मज़दूर काम पर नहीं आया।”

“और अभी रोपाई का समय है।”

“एक दिन भी काम रुक गया, तो बहुत नुकसान होगा।”

रामन का चेहरा क्रोध से लाल हो उठा।

“इतनी हिम्मत!”

वे गरजे।

“जाकर देखो...”

“क्या विष्णु नम्बूदरी के खेतों में कोई अतिरिक्त मज़दूर या उनके परिवार के लोग काम कर रहे हैं?”

फिर वे स्वयं ही बोले,

“नहीं...”

“रुको।”

“मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ।”

उन्होंने अपनी छड़ी उठा ली।

वे अभी इल्लम से बाहर निकल ही रहे थे कि सामने से नागन क्षुरकन आता दिखाई दिया।

रामन ने आश्चर्य से पूछा,

“तुम यहाँ क्या कर रहे हो?”

नागन कुछ उत्तर देता...

उससे पहले ही पद्मावती बोल उठीं,

“मैंने बुलाया है।

“गाय और उसके बछड़े की पूँछ के बाल कटवाने हैं।

रामन ने विस्मय से माँ की ओर देखा।

“क्या?”

“अम्मा...”

“आपका दिमाग़ तो ठीक है?”

“भला किसी ने कभी गाय और बछड़े की पूँछ कटवाते भी देखा है?”

उन्होंने फिर नागन की ओर देखा।

वे कुछ पूछना ही चाहते थे...

कि पद्मावती ने फिर बीच में बात काट दी।

“जाइए, नम्बूदरी।

“पहले अपने खेत बचाइए।

“वरना जल्द ही आपको अपना मुंडु ऊपर बाँधकर...”

“सुबह से शाम तक स्वयं खेत में पसीना बहाना पड़ेगा।

उनके शद्बों में ऐसा व्यंग्य था कि रामन क्षणभर के लिए निरुत्तर हो गए।

माँ की बातें अब उन्हें असहनीय लगने लगी थीं।

एक ओर ग़ायब मज़दूरों की चिंता...

दूसरी ओर पद्मावती के लगातार कटाक्ष।

वे झुँझलाते हुए इल्लम से बाहर निकल गए।

उन्हें बिल्कुल पता नहीं था...

कि उनके किडप्पुमुरी के बाईं ओर...

जहाँ केले के घने पेड़ थे...

उसी झुरमुट के पीछे...

उनके सारे खेत मज़दूर छिपे बैठे थे।

वे साँस रोके केवल एक ही क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे—

थम्पुरान के इल्लम से निकल जाने की।

मीनाक्षी तक पिछले दिन की पूरी घटना पहुँच चुकी थी।

उन्हें मालूम था...

कि पूरे पुलयार समुदाय के सिर जबरन मुँड़वा दिए गए हैं।

यह सुनकर उनका हृदय द्रवित हो उठा।

उन्होंने उन सभी मज़दूरों को गुप्त संदेश भिजवाया था—

"जैसे ही नम्बूदरी सुबह खेतों के लिए निकल जाएँ..."

"चुपचाप इल्लम आ जाना"।

अब...

उनके जीवन का अगला निर्णय...

यहीं लिया जाने वाला था।

जब लज्जा ने पक्ष बदला

केले के पेड़ों की ओट में बैठे पुलयार स्त्री-पुरुष तब तक बिल्कुल स्थिर रहे, जब तक थम्पुरान और कुमारन की आकृतियाँ दूर खेतों की ओर ओझल नहीं हो गईं।

मीनाक्षी ने बरामदे से चारों ओर एक बार दृष्टि डाली।

फिर धीमे स्वर में बोलीं,

“अब आ जाओ”।

अगले ही क्षण…

झुरमुट के पीछे छिपे सभी मज़दूर एक-एक करके बाहर आने लगे।

उनके मुंडे हुए सिर सुबह की धूप में चमक रहे थे।

किसी की आँखों में क्रोध था…

किसी की आँखों में अपमान…

और कई स्त्रियाँ अभी भी रो रही थीं।

कुइल सबसे पीछे खड़ी थी।

वह किसी की ओर देख भी नहीं पा रही थी।

दोनों हाथों से उसने अपने सिर को ढँक रखा था।

उसे लगता था कि अब उसका चेहरा देखने योग्य नहीं रहा।

मीनाक्षी धीरे-धीरे उसके पास पहुँचीं।

उन्होंने बिना कुछ कहे उसके हाथ अपने सिर से हटा दिए।

फिर बहुत स्नेह से उसके गालों को अपने दोनों हाथों में थाम लिया।

कुइल की आँखों से आँसू बह निकले।

“मेरी ओर देखो, बेटी”।

मीनाक्षी ने धीमे स्वर में कहा।

कुइल ने काँपते हुए सिर उठाया।

“तुमने कोई अपराध नहीं किया है”।

“लज्जित होने का अधिकार तुम्हें नहीं…”

"उसे होना चाहिए जिसने तुम्हारा अपमान किया है"।

यह सुनते ही कुइल फूट-फूटकर रो पड़ी।

वह मीनाक्षी के चरणों में बैठ गई।

मीनाक्षी ने तुरंत उसे उठाकर अपने सीने से लगा लिया।

बरसों से भीतर दबा हुआ दुःख जैसे दोनों स्त्रियों की आँखों से एक साथ बह निकला।

बरामदे में खड़ी अन्य पुलयार स्त्रियाँ भी रोने लगीं।

पद्मावती दूर खड़ी सब देख रही थीं।

उनकी आँखें भी नम हो उठीं।

उन्होंने जीवन में पहली बार देखा था—

एक थम्पुराटी...

और एक पुलयार स्त्री...

जाति की सारी दीवारों से ऊपर उठकर...

एक-दूसरे के दुःख को बाँट रही थीं।

उस क्षण...

इल्लम की हवा बदल गई।

और शायद...

इतिहास की दिशा भी।

मीनाक्षी ने सबकी ओर देखा।

उनकी आवाज़ अब पहले से अधिक दृढ़ थी।

"आज से..."

"तुममें से कोई भी अपने अपमान को अपना दोष नहीं मानेगा"।

“बाल फिर उग आएँगे।”

“लेकिन यदि आत्मसम्मान मर गया…”

“तो वह कभी लौटकर नहीं आएगा।”

पूरे समूह में सन्नाटा छा गया।

हर व्यक्ति उनकी बात सुन रहा था।

मीनाक्षी आगे बोलीं,

“आज तुम्हारे सिर नहीं मुंडे हैं…”

“आज अत्याचार का चेहरा उजागर हुआ है।”

“और याद रखना…”

“जिस दिन अन्याय करने वाले को अपने कर्मों पर लज्जा आने लगेगी…”

“उसी दिन परिवर्तन शुरू होगा।”

कुइल ने पहली बार अपनी आँखों से आँसू पोंछे।

उसने धीरे से मीनाक्षी के चरण छुए।

बाकी स्त्री-पुरुषों ने भी सिर झुका दिया।

उस दिन…

पहली बार…

उन्हें लगा कि वे अकेले नहीं हैं।

उनके साथ कोई खड़ा है।

कोई ऐसा…

जो स्वयं उसी इल्लम का हिस्सा था…

जहाँ से उनके अपमान का आदेश निकला था।

जब लज्जा ने पक्ष बदल लिया

एक-एक करके सभी काशंडी (मुंडे हुए सिर वाले) मज़दूर—स्त्री और पुरुष—इल्लम की रसोई के बाहर इकट्ठा होने लगे।

मीनाक्षी और पद्मावती ने जब उनके चमकते हुए मुंडे सिर देखे, तो दोनों का हृदय दहल उठा।

पद्मावती ने अपने सिर पर हाथ रख लिया।

उनकी आँखों में लज्जा थी।

“यह इल्लम अभिशप्त हो चुका है,” उन्होंने भारी स्वर में कहा।

“मेरे ही बेटे ने इतने लोगों का जीवन दुख से भर दिया।”

मीनाक्षी मौन रहीं।

उन्होंने सबको बैठने का संकेत किया।

फिर अत्यंत सम्मानपूर्वक प्रत्येक मज़दूर को पाँच एडंगाझी धान दिया।

जब कुइल की बारी आई, तो मीनाक्षी स्वयं रसोई में गईं।

वहाँ से एक मुंडु, कुछ नारियल और एक बड़ा-सा कटहल लेकर लौटीं।

उन्होंने प्रेम से कुइल की ओर देखा।

फिर उसके हाथों में वे सब रखते हुए बोलीं,

“मैं तुम्हें वचन देती हूँ...”

“अब तुम्हारे साथ ऐसा कुछ भी नहीं होगा।”

मीनाक्षी जानती थीं—

एक स्त्री के लिए उसके बाल क्या मायने रखते हैं।

विशेषकर एक युवा लड़की के लिए...

जिसका सिर जबरन मुंडा दिया जाए...

उससे बड़ा अपमान शायद ही कोई हो।

कुइल तो सरसु से केवल तीन-चार वर्ष ही बड़ी थी।

मीनाक्षी ने मन-ही-मन निश्चय किया—

अब यह सब यहीं समाप्त होगा।

उन्होंने पद्मावती की ओर देखा।

दोनों की आँखों में एक ही संकल्प था।

इसके बाद मीनाक्षी और पद्मावती ने क्षुरकन नागन को इशारे से चायिप (भंडार कक्ष) में बुलाया।

नागन हमेशा की तरह इल्लम के पिछले हिस्से से होकर गया।

उसकी जाति के कारण उसे मुख्य भाग से प्रवेश की अनुमति नहीं थी।

उस दिन…

चायिप के भीतर जो हुआ…

उसने केवल कडनाड ही नहीं..

बल्कि आसपास के समूचे नम्बूदरी समाज को भी झकझोर दिया।

“थामरा…!”

अचानक किसी ने पुकारा।

और कहानी का जादू टूट गया।

थामरा और अम्मु दोनों ने पीछे मुड़कर देखा।

थामरा का चेहरा फक पड़ गया।

सामने थीं—

राधा मणि।

वही…

जो कुछ दिन पहले तेल मिल में अप्पाची की मित्र के रूप में मिली थीं।

थामरा वहीं जड़ हो गई।

वह कुछ कह भी नहीं पाई थी कि भागी अम्मा ने मुस्कराकर राधा मणि को अपने पास बैठने का निमंत्रण दे दिया।

राधा मणि ने बिना किसी भूमिका के पूछा,

“क्या जानकी को पता है कि थामरा यहाँ आती है?”

स्थिति बिगड़ती देख भागी अम्मा तुरंत बोलीं,

“अरे राधा…”

“बच्चियाँ रामन नम्बूदरी की कहानी सुनना चाहती थीं।

“मैं उन्हें कहानी सुना देती हूँ…”

“और बदले में मुझे थोड़ा साथ मिल जाता है…”

“साथ ही थोड़ा-सा पुकयिला भी।

राधा मणि ने थामरा की ओर देखा।

“चलो।

“अब जब मैं तुम्हें यहाँ देख ही चुकी हूँ…”

“तो तुम्हें घर छोड़ भी देती हूँ।

“वरना जानकी मुझे कभी माफ़ नहीं करेगी।

———

तीनों चुपचाप लौटने लगे।

गोपाल चेतन रास्ते में किसी मोड़ पर चुपके से अलग हो गया।

किसी का ध्यान उसकी ओर नहीं गया।

राधा मणि ने भी कुछ नहीं कहा।

थारवाड़ के पास पहुँचने से पहले अम्मु अपनी झोंपड़ी की ओर मुड़ गई।

उधर…

जानकी अम्मा पहले से ही घर के बाहर खड़ी प्रतीक्षा कर रही थीं।

जैसे ही उन्होंने थामरा को राधा मणि के साथ आते देखा...

वे तेज़ी से आगे बढ़ीं।

थामरा बिना कुछ बोले रसोई की ओर चली गई।

और दोनों बुज़ुर्ग स्त्रियाँ धीमे स्वर में आपस में बातें करने लगीं।

अगले दिन...

जानकी अम्मा ने थामरा को अपने सामने बिठा लिया।

उन्होंने कठोर स्वर में पूछा,

"सच-सच बताओ..."

"तुम भागी अम्मा के पास कितनी बार गई हो?"

"और यह पूरी योजना अम्मु की थी... है न?"

थामरा से सब स्वीकार करवाया गया।

इसके बाद उसे घर से बाहर निकलने की मनाही कर दी गई।

उधर...

अम्मु को भी स्थिति का अंदाज़ा हो गया था।

वह कई दिनों तक थारवाड़ के आसपास दिखाई ही नहीं दी।

पार्वती को अपनी बेटी पर दया आ रही थी।

लेकिन उन्होंने कुछ नहीं कहा।

वे चुपचाप हर दिन उसकी पसंद की एक-दो चीज़ें बनाकर उसे खिलाती रहीं।

पूरा एक सप्ताह बीत गया।

फिर...

जानकी अम्मा का क्रोध धीरे-धीरे पिघलने लगा।

उन्हें याद आया—

सिर्फ़ एक सप्ताह बाद थामरा वापस बेंगलुरु चली जाएगी।

और यह विशाल घर...

फिर से उसी पुराने सन्नाटे में डूब जाएगा।

उन्होंने थामरा को अपने पास बुलाया।

“क्या तुम बाकी कहानी सुनना चाहती हो?”

उन्होंने पूछा।

थामरा की आँखें चमक उठीं।

जानकी मुस्कराईं।

“मैं भी तुम्हें यह कहानी सुना सकती थी...”

“लेकिन भागी इसकी असली कथावाचिका है”।

“मानना पड़ेगा...”

“वह कहानी को बहुत सुंदर ढंग से बुनती है”।

थामरा दौड़कर उनसे लिपट गई।

“अप्पाची...”

“मुझे फिर से भागी अम्मा के पास ले चलो”।

जानकी ने सिर हिलाया।

“नहीं”।

“इस बार मैं भागी को यहीं बुलवाऊँगी”।

“कल कार भेज दूँगी”।

“वह यहाँ दोपहर का भोजन करेगी...”

“और रात से पहले उसे घर छोड़ दिया जाएगा।”

“मुझे लगता है...”

“वह एक ही दिन में पूरी कहानी समाप्त कर देगी।”

फिर मुस्कराकर बोलीं,

“उसे हमारे खेत की अच्छी-खासी उपज दूँगी...”

“और थोड़ा पुकयिला भी।”

थामरा ने संकोच से पूछा,

“अप्पाची...”

“क्या अम्मु भी आ सकती है?”

“असल में गलती मेरी थी।”

“मैं ही उसे अपने साथ ले गई थी।”

जानकी हँस पड़ीं।

“चुप, लड़की।”

“मुझे अच्छी तरह पता है...”

“उसने ही तुम्हें इतना ललचाया होगा।”

“वरना अपनी दादी की बात टालने की हिम्मत तुममें नहीं थी।”

अगली सुबह...

पार्वती ने थामरा को जगाया।

“उठो।”

“भागी अम्मा बहुत देर से आई हुई हैं।”

“और तुम्हारी अप्पाची अपनी आलसी पोती का इंतज़ार कर रही हैं”।

थामरा चौंककर उठ बैठी।

आज कहानी का चरम भाग सुनना था...

और वह नौ बजे तक सोती रह गई थी।

उसके मन में असंख्य प्रश्न उमड़ रहे थे।

इतना जीवंत नम्बूदरी थारवाड़...

आख़िर भुतहा कैसे बन गया?

पद्मावती और मीनाक्षी...

दोनों ही अब उसे बेहद प्रिय लगने लगी थीं।

दोनों ने अपने-अपने ढंग से क्रूर थम्पुरान का विरोध किया था।

लेकिन...

आगे क्या हुआ?

यही जानने की बेचैनी उसे भीतर से खाए जा रही थी।

बरामदे में...

भागी अम्मा ज़मीन पर जानकी अम्मा के पास बैठी थीं।

जानकी अपनी आरामकुर्सी पर विराजमान थीं।

थामरा की प्रसन्नता का ठिकाना न रहा...

जब उसने देखा—

जानकी अम्मा की बाईं ओर अम्मु भी मुस्कराती हुई बैठी थी।

थामरा दौड़कर अप्पाची की गोद में चढ़ गई।

उनके गले में बाँहें डाल दीं..

और बार-बार उनके गाल चूमने लगी।

भागी अम्मा के पास दो बड़े कटहल...

एक बोरी कसावा...

एक बोरी नारियल...

और केले के पत्तों में लिपटा पुकयिला रखा था।

अपनी मोती (मुथु) थामरा के लिए...

जानकी अम्मा ने भागी अम्मा को मनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी।

इसी बीच...

पार्वती रसोई से जल्दी-जल्दी बाहर आईं।

वे भी कहानी का अंतिम भाग सुनना चाहती थीं।

नाश्ते में कप्पा और कडला करी खाने के बाद...

भागी अम्मा ने अब तक की पूरी कहानी संक्षेप में जानकी और पार्वती को सुना दी थी।

इससे थामरा के आने तक प्रतीक्षा आसान हो गई थी।

जानकी ने दृढ़ स्वर में कहा,

“दोपहर के भोजन से पहले कहानी समाप्त कर देना”।

“उसके बाद तुम्हें घर छोड़ दिया जाएगा”।

“शाम को मुझे कार तेल मिल भेजनी है”।

भागी अम्मा ने अपने बाएँ गाल में पुकयिला दबाया...

गहरी साँस ली...

और फिर एक बार सबको लेकर उड़ चलीं..

सीधे...

रामन नम्बूदरी के इल्लम में।

मौन विद्रोह

रामन नम्बूदरी अपनी छड़ी घुमाते हुए इल्लम में लौटे।

वे स्नान करके विश्राम करना चाहते थे।

लेकिन...

आँगन में प्रवेश करने से पहले...

उन्हें एक अनजानी ध्वनि सुनाई दी।

किसी के आदेश देने की...

लयबद्ध...

दृढ़...

अनुशासित आवाज़।

आमतौर पर वे अपने कक्ष के पिछले दरवाज़े से भीतर जाते थे।

उसी दरवाज़े से...

जहाँ रात में बुलायी गई स्त्रियाँ प्रवेश करती थीं।

लेकिन उस दिन...

जिज्ञासा उन्हें आँगन की ओर ले गई।

जैसे ही वे भीतर पहुँचे...

वे स्तब्ध रह गए।

उनके सामने...

एक गंजे सिर वाली स्त्री हवा में ऊँची छलाँग लगा रही थी।

उसके हाथ में ओट्टक्कोल (घुमावदार लकड़ी का कलरिपयट्टु शस्त्र) था।

वह बिजली जैसी गति से प्रहार और बचाव के अभ्यास कर रही थी।

दूसरी गंजे सिर वाली स्त्री आदेश दे रही थी।

और एक छोटी गंजे सिर वाली लड़की विस्मय से सब देख रही थी।

रामन की साँस जैसे थम गई।

वे पहचान चुके थे—

वे उनकी अपनी पत्नी...

उनकी माँ...

और उनकी बेटी थीं।

तीनों...

अपने सबसे प्रिय आभूषण—

अपने केश—

त्याग चुकी थीं।

और...

कलरिपयट्टु का अभ्यास कर रही थीं।

मौन विद्रोह (आगे)

“शिव... शिव...!”

रामन नम्बूदरी के मुँह से अनायास निकल पड़ा।

वे जैसे पत्थर बनकर वहीं खड़े रह गए।

अब उनकी दृष्टि पद्मावती पर पड़ी।

वे कलरिपयट्टु के आदेश उसी दृढ़ता और लय के साथ दे रही थीं।

उधर मीनाक्षी अचानक बाघ की तरह झुककर शिकार पर झपटने की मुद्रा में आ गईं।

उनके हाथ में ओट्टक्कोल भयावह ढंग से चमक रहा था।

“मीनाक्षी!”

रामन क्रोध से चीख उठे।

क्षणभर में पूरा अभ्यास रुक गया।

मीनाक्षी और पद्मावती ने बिना झिझक उनकी ओर देखा।

उनकी आँखों में भय का नामोनिशान नहीं था।

उधर...

सरसु घबराकर दौड़ती हुई भीतर चली गई।

रामन का हृदय जैसे बैठ गया।

अपनी छोटी बेटी का मुंडा हुआ सिर देखकर उनका मन काँप उठा।

उन्हें पहली बार लगा—

काश...

उन्होंने उसे संकरण नम्बूदरी के घर से वापस बुलाने की ज़िद न की होती।

उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि एक दिन उन्हें अपनी पत्नी...

अपनी बेटी...

और अपनी माँ...

तीनों को इस अवस्था में देखना पड़ेगा।

पद्मावती के तो जीवन भर घने, लंबे बाल रहे थे।

उनमें मुश्किल से कुछ सफ़ेद बाल दिखाई देते थे।

आख़िर...

इन तीनों ने ऐसा करने की सोची भी कैसे?

स्त्रियाँ तो अपने बालों पर सबसे अधिक गर्व करती हैं।

रामन का धैर्य टूट गया।

वे गरजकर बोले,

“तुम तीनों को आखिर हो क्या गया है?”

मीनाक्षी शांत खड़ी रहीं।

लेकिन पद्मावती ने बिना पलक झपकाए उनकी आँखों में देखते हुए उत्तर दिया,

“हमें लगा…”

“तुम्हें गंजी औरतें बहुत पसंद हैं”।

“इसलिए सोचा…”

“तुम्हें प्रसन्न कर दें”।

वे रुकीं…

फिर उनके स्वर में तीखा व्यंग्य उतर आया।

“वैसे भी…”

“अब गाँव में लंबे बालों वाली औरतों से कहीं अधिक गंजी औरतें हैं”।

“तो हमने सोचा…”

“चलन के साथ चलना ही उचित रहेगा”।

रामन का चेहरा क्रोध से लाल पड़ गया।

“बस करो, अम्मा!”

वे दाँत भींचते हुए बोले।

“मैं नहीं जानता कि आप लोग क्या सिद्ध करना चाहती हैं…”

“लेकिन मैं तुम्हें इस हालत में नहीं देख सकता”।

“उस क्षुरकन की तो मैं…”

उन्होंने क्रोध से मुट्ठियाँ भींच लीं।

पद्मावती ने तुरंत बात काट दी।

“क्यों?”

“जब तुमने उसे आदेश दिया था...”

“तब उसने वही किया जो तुमने कहा।”

“और जब मैंने उसे आदेश दिया...”

“तब उसने वही किया जो मैंने कहा।”

उन्होंने दृढ़ स्वर में कहा,

“यह मत भूलो...”

“मैं तुम्हारी माँ हूँ।”

रामन झुँझलाकर बोले,

“मेरी पत्नी और मेरी बेटी के साथ कुछ भी करने से पहले...”

“तुम्हें मुझसे पूछना चाहिए था।”

उन्होंने पलटकर देखा भी नहीं।

सीधे अपने कक्ष की ओर बढ़ गए।

उनके पीछे...

फिर से कलरिपयट्टु का अभ्यास शुरू हो गया।

लेकिन इस बार...

रामन ने पीछे मुड़कर देखने का साहस नहीं किया।

उस रात...

पूरा भोजन मौन में हुआ।

कोई कुछ नहीं बोला।

लेकिन रामन भीतर ही भीतर जल रहे थे।

उन्हें पूरा दोष कुइल और पुलयार समुदाय का लग रहा था।

यदि वे लोग यह सब न करते...

तो आज मेरे घर की स्त्रियाँ ऐसा कदम कभी न उठातीं।

उन्होंने मन-ही-मन निश्चय किया—

अब इन सबको ऐसा सबक सिखाऊँगा...

जो जीवन भर याद रहेगा।

लेकिन उस रात...

उन्हें नींद नहीं आई।

वे बार-बार करवट बदलते रहे।

मन में क्रोध था...

अपमान था...

और एक अजीब-सी असहायता भी।

यदि संकरण नम्बूदरी को यह पता चल गया...

कि मीनाक्षी, सरसु और पद्मावती ने अपने बाल मुंडवा लिए हैं...

तो क्या होगा?

संकरण अपनी बेटी और नातिन से प्राणों से भी अधिक प्रेम करते थे।

वे किसी को नहीं छोड़ेंगे।

और मीनाक्षी के दोनों भाई...

वे भी साधारण व्यक्ति नहीं थे।

मीनाक्षी को उस दिन योद्धा के रूप में देखकर ही रामन भीतर तक हिल गए थे।

उन्होंने तय किया—

कुछ दिनों तक उनसे दूरी बनाए रखना ही बेहतर होगा।

थम्पुरान की नई साज़िश

अगली सुबह...

रामन नम्बूदरी सामान्य से भी अधिक जल्दी खेतों के लिए निकल पड़े।

उनके मन में केवल एक ही विचार था।

पूरे पुलयार समुदाय को दंड देना।

उन्होंने निश्चय कर लिया था कि अब से हर मज़दूर को पूरे दिन के काम के बदले दो एडंगाझी नहीं...

सिर्फ़ एक एडंगाझी धान मिलेगा।

"इतना ही काफ़ी है..."

उन्होंने मन-ही-मन सोचा।

"इन उद्दंड लोगों को सबक सिखाने के लिए"।

उन्हें सबसे अधिक क्रोध इस बात पर था कि पूरे समुदाय ने कुइल और अच्चु का साथ दिया था।

उनकी दृष्टि में...

एक पुलयार स्त्री का कर्तव्य था कि वह नम्बूदरी के सामने अपना वक्ष अनावृत करे।

कुइल ने उस व्यवस्था की अवहेलना की थी।

और बाकी लोगों ने उसका साथ देकर अपराध को और बड़ा बना दिया था।

खेत पहुँचते ही उन्होंने कुमारन को बुलाया।

कठोर स्वर में आदेश दिया,

"आज से..."

"हर मज़दूर को केवल एक एडंगाझी धान मिलेगा"।

"और अच्चु को मेरे पास भेजो"।

आदेश देकर वे खेतों का निरीक्षण करने आगे बढ़ गए।

———

कुछ देर बाद...

अचु उनके सामने खड़ा था।

हमेशा की तरह...

उसने अपना दाहिना हाथ मुँह पर रखा हुआ था।

उसकी निगाहें झुकी हुई थीं।

रामन ने चारों ओर देखा।

कोई आसपास नहीं था।

वे अचु के और निकट आए।

धीमे लेकिन कठोर स्वर में बोले,

“कल रात...”

“कुइल को मेरे पास भेजना”।

“ध्यान रहे...”

“इस बार उसके साथ कोई और नहीं आएगा”।

“पिछली बार जैसा नाटक हुआ...”

“वैसा दोबारा हुआ तो उसकी कीमत तुम्हें चुकानी पड़ेगी”।

वे कुछ क्षण रुके।

फिर बोले,

“वह सीधे मेरे कमरे के पिछले दरवाज़े से भीतर आएगी”।

“और तुम...”

“दूर वाले आम के पेड़ों के नीचे उसका इंतज़ार करोगे”।

“जब वह बाहर आए...”

“तब उसे लेकर घर चले जाना"।

उन्होंने अच्चु की आँखों में देखते हुए अंतिम चेतावनी दी,

“किसी को इसकी भनक नहीं लगनी चाहिए"।

“और याद रखना...”

“कोई भी उसके साथ नहीं आएगा"।

अच्चु मौन खड़ा रहा।

उसने न सिर हिलाया...

न कोई उत्तर दिया।

रामन ने इसे आज्ञाकारिता समझा।

वे संतुष्ट होकर वहाँ से चले गए।

———

उस रात...

रामन ने भोजन के समय घर का मौन तोड़ने का निश्चय किया।

उन्होंने मीनाक्षी की ओर देखकर कहा,

“मुझे तुम्हारा यह कलरिपयट्टु अभ्यास बिल्कुल पसंद नहीं है"।

“मैं नहीं चाहता कि सरसु इसमें भाग ले"।

“वह शीघ्र ही युवावस्था में प्रवेश करने वाली है"।

“अब उसका ध्यान उन सभी संस्कारों और तैयारियों पर होना चाहिए"।

उन्होंने तीखी दृष्टि से मीनाक्षी को देखा।

“यह अचानक तुम्हें क्या सूझा है?”

फिर उनकी दृष्टि पद्मावती पर गई।

“और अम्मा...”

“आपने कलरिपयट्टु के आदेश इतने अच्छे से कहाँ सीखे?”

वे कुछ क्षण रुके।

फिर कठोर स्वर में बोले,

“मैं तुम तीनों को चेतावनी देता हूँ।

“अपने इन मुंडे हुए सिरों के साथ इल्लम से बाहर कदम मत रखना।

“और मेरे धैर्य की परीक्षा लेने की भूल मत करना।

इतना कहकर वे भोजन समाप्त करके उठ गए।

कुलिमुरी के पास पहुँचते ही...

उन्हें लगा...

जैसे झाड़ियों के पीछे कोई हलचल हुई हो।

वे तुरंत रुक गए।

ऊँचे स्वर में बोले,

“कौन है वहाँ?”

कुछ पत्ते हिले।

हल्की-सी सरसराहट हुई।

फिर...

सब कुछ शांत हो गया।

रामन कुछ क्षण वहीं खड़े रहे।

जब कुछ दिखाई नहीं दिया...

तो वे धीरे-धीरे अपने कमरे की ओर लौट गए।

अगली सुबह...

वे असामान्य रूप से प्रसन्न थे।

उनके मन में केवल एक ही कल्पना थी—

आज रात कुइल आएगी।

रसोई के पास पहुँचकर उन्होंने जानबूझकर कई बार खाँसा।

फिर ऊँचे स्वर में बोले,

"लगता है मुझे बुखार आने वाला है"।

"आज मैं खेत से जल्दी लौट आऊँगा"।

"और सीधे विश्राम करूँगा"।

उन्होंने मीनाक्षी की ओर देखकर कहा,

"मेरे लिए रक्तशाली चावल की कांजी बनाना"।

"शरीर ठीक नहीं लग रहा"।

पद्मावती ने तुरंत व्यंग्य किया,

"मुझे तो समझ नहीं आता..."

"बार-बार तुम्हारी रोग-प्रतिरोधक शक्ति कमज़ोर पड़ती है..."

"या फिर तुम्हारी बेलगाम इच्छाएँ तुम्हें बीमार कर देती हैं"।

रामन ने घृणा से माँ की ओर देखा।

उनकी कटु वाणी अब उन्हें असहनीय लगने लगी थी।

वे बिना कुछ कहे वहाँ से निकल गए।

चलते-चलते वे सोच रहे थे—

मीनाक्षी तो सीधी-सादी है।

उसे भड़काने वाली केवल अम्मा है।

सिर मुंडवाने का विचार भी निश्चित रूप से उन्हीं का होगा।

फिर उन्हें मीनाक्षी का कल का योद्धा-रूप याद आया।

वे अनायास सिहर उठे।

कुछ दिन उससे दूरी बनाए रखना ही ठीक रहेगा...

उन्होंने मन ही मन निश्चय किया।

मीनाक्षी तो यहीं रहेगी...

लेकिन कुइल...

पुलयार लोग अब विद्रोही होते जा रहे हैं।

कौन जाने अगला कदम क्या उठाएँ।

इतने में...

भागी अम्मा की कहानी बीच में ही रुक गई।

जानकी अम्मा ने उन्हें टोका।

वे कहानी की अगली कड़ी पहले से जानती थीं।

उन्हें अंदाज़ा था कि अब कथा किस दिशा में जाने वाली है।

उन्होंने गंभीर स्वर में कहा,

“भागी...”

“ध्यान रखना”।

“बच्चियाँ अभी छोटी हैं”।

“ऐसी कोई बात मत कहना जो उनके लिए उचित न हो”।

भागी अम्मा मुस्कराईं।

“चिंता मत करो, जानकी”।

"मैं समझती हूँ..."

"तुम्हें अपनी पोती की चिंता है।"

और फिर...

उन्होंने कहानी का अगला अध्याय आरम्भ किया—

चोरियानम् की वह रात

उस दिन रामन नम्बूदरी असामान्य रूप से जल्दी खेतों से लौट आए।

सारे रास्ते उनके मन में केवल एक ही विचार घूम रहा था—

आज रात कुइल आएगी।

उन्होंने स्नान किया।

मीनाक्षी द्वारा बनाई गई रक्तशाली चावल की कांजी पी।

फिर सबके सामने थके और बीमार होने का अभिनय करते हुए बोले,

"आज शरीर बिल्कुल साथ नहीं दे रहा।"

"मैं जल्दी विश्राम करूँगा।"

मीनाक्षी ने केवल एक बार उनकी ओर देखा।

न कोई चिंता...

न कोई प्रश्न।

बस एक शांत दृष्टि।

यह वही मौन था जिसे रामन कभी पढ़ नहीं पाए थे।

उधर पद्मावती सब समझ रही थीं।

उनके चेहरे पर हल्की-सी मुस्कान उभरी और उतनी ही जल्दी गायब भी हो गई।

संध्या ढल गई।

धीरे-धीरे अँधेरा पूरे इल्लम पर उतर आया।

आँगन में जलता विलक्कु हवा के हल्के झोंकों से काँप रहा था।

रात का भोजन हमेशा की तरह मौन में हुआ।

रामन ने जानबूझकर कम खाया।

वे चाहते थे कि सबको लगे—

उन्हें सचमुच तेज़ बुखार है।

भोजन समाप्त होते ही वे अपने किडप्पुमुरी में चले गए।

उन्होंने दीपक की लौ धीमी कर दी।

फिर बार-बार पीछे वाले दरवाज़े की ओर देखने लगे।

आज...

उन्हें केवल कुइल की प्रतीक्षा थी।

इल्लम के दूसरे छोर पर...

मीनाक्षी, पद्मावती और दक्षायणी एक साथ बैठी थीं।

तीनों के चेहरे गंभीर थे।

दक्षायणी ने धीरे से कहा,

“संदेश पहुँच चुका है।”

“सब लोग तैयार हैं।”

पद्मावती ने सिर हिलाया।

“आज रात...”

“इस इल्लम का इतिहास बदल जाएगा।”

मीनाक्षी ने कुछ नहीं कहा।

उन्होंने केवल भगवान विष्णु की प्रतिमा की ओर देखा।

फिर अपनी आँखें बंद कर लीं।

मानो भीतर ही भीतर किसी बड़ी शक्ति को स्मरण कर रही हों।

उधर...

रामन का धैर्य समाप्त होने लगा था।

वे बार-बार उठकर दरवाज़े तक जाते।

फिर लौट आते।

रात और गहरी होती गई।

अचानक...

पीछे वाले दरवाज़े पर बहुत हल्की-सी दस्तक हुई।

रामन का चेहरा खिल उठा।

“आ गई...”

उन्होंने मन-ही-मन कहा।

वे तेजी से उठे।

धीरे से दरवाज़ा खोला...

और बिना बाहर देखे फुसफुसाए,

“जल्दी भीतर आ जाओ।”

लेकिन...

अगले ही क्षण...

उनके चेहरे का रंग उड़ गया।

दरवाज़े पर खड़ी आकृति...

कुइल नहीं थी।

वहाँ...

कोई और उनका इंतज़ार कर रहा था।

और उसी क्षण...

रामन नम्बूदरी को पहली बार यह आभास हुआ...

कि जिस जाल में वे दूसरों को फँसाते आए थे...

आज स्वयं उसी में फँस चुके हैं।

अध्याय — चोरियानम की रात

साँझ ढल चुकी थी जब नम्बूदिरि खेतों से लौटकर इल्लम पहुँचा।उसने देखा कि स्त्रियाँ फिर से कलरिपयट्टु का अभ्यास कर रही थीं।उसका मन हुआ कि उन्हें डाँटकर तुरंत रोक दे।अपनी शांत और संकोची मीनाक्षी को हवा में उछलते, छलाँगें लगाते और योद्धा की तरह अभ्यास करते देख वह भीतर तक असहज हो उठता था।पर उस दिन उसने स्वयं को रोक लिया।वह अपनी सारी शक्ति रात के लिए बचाकर रखना चाहता था और पद्मावती की एक और तीखी टिप्पणी सुनने का उसका कोई इरादा नहीं था।उम्र बढ़ने के साथ उसकी माँ को सहना उसके लिए दिन-ब-दिन कठिन होता जा रहा था।उसे सरसु पर दया आई।उसे पूरा विश्वास था कि उस मासूम बच्ची ने अपनी इच्छा से कभी सिर मुंडवाने की अनुमति नहीं दी होगी।

वह कुलिमुरी गया, पैर धोए और स्नान किया।लौटते समय उसने देखा कि उसके कक्ष की सफ़ाई करने वाली स्त्री बाहर निकल रही है।उसे यह देखकर संतोष हुआ।

उस शाम उसका मन पुकयिला खाने को कर रहा था, पर उसने स्वयं को रोक लिया।वह अपनी दिनचर्या में ऐसा कोई परिवर्तन नहीं करना चाहता था जिससे किसी का ध्यान उसकी ओर जाए।

मीनाक्षी ने अदुकला में उसके लिए जो कांजी परोसी थी, उसे लेकर वह अपने कक्ष के सामने वाले बरामदे में आ बैठा।उसने सोचा, यह औषधीय कांजी उसे रात के लिए शक्ति और स्फूर्ति देगी।उसके मन में कल्पना जागी कि आज के बाद कुइयिल पूरी तरह उसके अधिकार के आगे झुक जाएगी।

बाहर पूर्णिमा का उजला चाँद चमक रहा था।उसने अपने कक्ष का दीपक धीमा कर दिया।मीनाक्षी के कमरे और अदुकला से हल्की रोशनी आ रही थी।उसने अनुमान लगाया कि वे दिनभर का काम समेट रही होंगी।

कुछ ही देर बाद उसने अपने कक्ष का पिछला दरवाज़ा धीरे से खोला और उसे अधखुला छोड़ दिया, ताकि आने वाली को दस्तक न देनी पड़े और कोई आवाज़ भी न हो।

लड़की आने में देर कर रही थी।

फिर दूर उसे दो परछाइयाँ दिखाई दीं।

उसका हृदय तेज़ी से धड़क उठा।

वह जल्दी से बाहर निकला और इशारे से उन्हें बुलाया।

कुइयिल संकोच से भीतर आई।चाँदनी में उसका मुंडा हुआ सिर साफ़ दिखाई दे रहा था।उसे देखते ही नम्बूदिरि ने गहरी साँस ली।जैसे ही अचु दूर आम के पेड़ों की ओर लौट गया, उसने अधीरता से दरवाज़ा बंद कर लिया।

"डरो मत," उसने जल्दी से कहा, "मैंने तुम्हें माफ़ कर दिया है"।

फिर उसने उसे बिस्तर की ओर बढ़ाते हुए कहा,

"जाओ... लेट जाओ, लड़की"।

चोरियानम की रात (भाग-2)

कुइयिल बिस्तर पर बैठ तो गई, पर कुछ ही क्षण बाद बेचैनी से उठ खड़ी हुई।वह बार-बार बैठती और फिर उठ जाती, मानो किसी अदृश्य पीड़ा से व्याकुल हो।

नम्बूदिरि झुँझला उठा।वह पहले सामने वाले दरवाज़े तक गया, यह सुनिश्चित किया कि वह भीतर से बंद है, और फिर जल्दी-जल्दी वापस लौटा।

"क्या बात है, चक्करे (प्रिय)?" उसने कोमल स्वर बनाने की कोशिश करते हुए पूछा।"इतनी बेचैन क्यों हो?"

कुइयिल ने दर्द से चेहरा सिकोड़ लिया और तकिए को अपने सामने ढाल की तरह पकड़ लिया।

नम्बूदिरि अभी उसकी ओर बढ़ा ही था कि अचानक उसके शरीर में तीखी जलन दौड़ गई।अगले ही पल उसे पूरे शरीर में असहनीय खुजली होने लगी।

वह अँधेरे में हाथ मारने लगा।

"यह बिस्तर इतना खुजला क्यों रहा है?" वह बड़बड़ाया।

तकिए के नीचे कुछ पत्तियाँ बिखरी हुई थीं।उसने उन्हें उठाकर देखने की कोशिश की, लेकिन जैसे ही हाथ लगाया, जलन और भी बढ़ गई।

कुछ ही क्षणों में कुइयिल भी बुरी तरह खुजलाने लगी।

अब नम्बूदिरि समझ चुका था।

किसी ने जान-बूझकर तकिए के नीचे चोरियानम (बिच्छू-बूटी जैसी तीव्र खुजली पैदा करने वाली वनस्पति) रख दी थी और उसकी पत्तियाँ पूरे बिस्तर पर रगड़ दी थीं।

दोनों अपनी-अपनी त्वचा खुजलाने में व्यस्त ही थे कि तभी बरामदे से किसी पशु की करुण पुकार सुनाई दी।

“यहीं रुको!” नम्बूदिरि ने आदेश दिया।

उसने दीपक उठाया और बरामदे का दरवाज़ा खोल दिया।

सामने वही दृश्य था जिसकी उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी।

इल्लम का छोटा बछड़ा बरामदे के एक खंभे से बँधा हुआ था और लगातार अपनी माँ को पुकार रहा था।

दूर गोशाला में बँधी गाय भी उतनी ही व्याकुल होकर उत्तर दे रही थी।

लेकिन इससे भी अधिक चौंका देने वाला दृश्य उसकी प्रतीक्षा कर रहा था।

मीनाक्षी के किडप्पुमुरी का दरवाज़ा पूरी तरह खुला हुआ था।

और वहाँ...

उसकी थम्पुराटी...

एक नंगे बदन वाले पुरुष के साथ हँसते हुए बातें कर रही थी।

नम्बूदिरि के मुँह से दाँत भींचते हुए शब्द निकले—

“अदुक्कलदोषम्!”

(अर्थात—वैवाहिक निष्ठा का उल्लंघन, व्यभिचार)।

दीपक की मद्धिम रोशनी में उसे उस पुरुष की चमकती हुई पीठ दिखाई दी।

क्षणभर के लिए उसका रक्त जैसे जम गया।

उसे लगा...

वह अच्चु है।

वह दीपक हाथ में लिए तेज़ी से मीनाक्षी के कक्ष की ओर बढ़ा।

लेकिन अगले ही पल उसे याद आया—

कुइयिल अभी भी उसके कमरे में है!

वह तुरंत वापस मुड़ा।

“जल्दी कपड़े पहनकर निकल जाओ!” उसने दबे स्वर में गुर्राते हुए कहा।

बेचारी कुइयिल, जो अभी भी चोरियानम की जलन से तड़प रही थी, घबराकर उठी।

“और तैयार रहो विधवा बनने के लिए,” नम्बूदिरि ने क्रोध से कहा, “यदि तुम्हारा पति सचमुच इल्लम में घुस आया है, तो मैं उसे जीवित नहीं छोड़ूँगा!”

डरी-सहमी कुइयिल पिछले दरवाज़े से भाग निकली।

उधर नम्बूदिरि तेज़ी से मीनाक्षी के कमरे की ओर बढ़ा।

तभी उसने देखा—

वह पुरुष भीतर चला गया...

और मीनाक्षी ने अंदर से दरवाज़ा बंद कर लिया।

बरामदे में बँधा बछड़ा अब भी लगातार रँभा रहा था।

क्रोध से काँपते हुए नम्बूदिरि ने मीनाक्षी के दरवाज़े पर ज़ोर-ज़ोर से दस्तक देनी शुरू कर दी।

पर दरवाज़ा नहीं खुला...

बल्कि बगल वाले कक्ष का दरवाज़ा खुला।

पद्मावती बाहर आई।

उसके चेहरे पर भय का नामोनिशान नहीं था।

वह शांत स्वर में बोली—

“हूँ...? क्या बात है, नम्बूदिरि?”

चोरियानम की रात (भाग-3)

“अम्मा!” नम्बूदिरि लगभग चीख पड़ा, “मैंने अपनी आँखों से मीनाक्षी को अदुक्कलदोषम् करते देखा है। मुझे पूरा संदेह है कि वह युवक अच्चु था। और सरसु कहाँ है? मुझे लगा था कि वह अपनी माँ के साथ सो रही होगी।”

पद्मावती ने बिल्कुल सहज भाव से उसकी ओर देखा।

“सच?” उसने आश्चर्य का अभिनय करते हुए कहा। “अच्चु यहाँ क्यों आएगा? क्या वह अपनी पत्नी को ढूँढ़ने आया था? लेकिन फिर... इस समय रात में कुइयिल यहाँ क्या कर रही थी?”

उसकी बनावटी मासूमियत ने नम्बूदिरि को भीतर तक झकझोर दिया।

पद्मावती ने आगे कहा,

“मीनाक्षी एक सुंदर थम्पुराटी है। अब यह तो तुम ही बेहतर बता सकते हो कि तुम उसे पर्याप्त स्नेह देते हो या नहीं। यदि नहीं देते, तो शायद उसे कहीं और प्रेम ढूँढ़ना पड़े... और फिर अदुक्कलदोषम् भी हो सकता है।”

वह एक क्षण रुकी और फिर बोली,

“हाँ, एक बात और। आज रात मीनाक्षी ने सरसु को मेरे पास सुला दिया था। उसे देर तक काम करना था। लेकिन यदि सचमुच अदुक्कलदोषम् हुआ है, तो उसका निर्णय अवश्य होना चाहिए। मैं तुम्हारा पूरा साथ दूँगी।”

एक पल को नम्बूदिरि को लगा कि शायद पहली बार उसकी माँ उसकी बात से सहमत है।

लेकिन अगले ही क्षण पद्मावती ने ऐसा वाक्य कहा कि उसके पैरों तले ज़मीन खिसक गई।

“कहो तो मैं अभी संकरण और उसके बेटों को बुलवा दूँ? स्मार्थविचारम् भी करवा लेते हैं।”

नम्बूदिरि का चेहरा तमतमा उठा।

“अम्मा!”

उसने झुँझलाकर कहा।

वह अच्छी तरह जानता था कि स्मार्थविचारम् का अर्थ केवल किसी स्त्री पर आरोप लगाना नहीं था। यदि संकरण आया, तो सबसे पहले उसकी अपनी करतूतें सामने आएँगी।

पद्मावती जानती थी कि संकरण का नाम लेते ही उसका बेटा डर जाता है।

वह शांत खड़ी उसे देखती रही।

नम्बूदिरि झुँझलाहट में वापस अपने कमरे की ओर मुड़ गया।

पीछे से पद्मावती की आवाज़ आई—

“और हाँ... पहले उस बेचारे बछड़े को यहाँ से हटवा दो। नहीं तो गुस्से में कहीं उसे मार ही न डालो।”

नम्बूदिरि ने बिना पीछे देखे चिल्लाकर कहा,

“उसे तुरंत हटाओ! नहीं तो मैं उसे सचमुच पीट-पीटकर मार डालूँगा।”

उस रात नम्बूदिरि को नींद नहीं आई।

गुस्सा...

अपमान...

और पूरे शरीर में चोरियानम की असहनीय खुजली...

तीनों ने मिलकर उसे पागल कर दिया था।

उसे अब समझ में आ गया था कि दोनों पलंगों पर चोरियानम जान-बूझकर लगाया गया था।

बछड़े को भी जानबूझकर उसके बरामदे में बाँधा गया था।

लेकिन सबसे बड़ी पहेली वही आदमी था...

जो मीनाक्षी के कमरे में दिखाई दिया था।

क्या सचमुच मीनाक्षी किसी दूसरे पुरुष से मिल रही थी?

या यह सब उसी के विरुद्ध रचा गया कोई षड्यंत्र था?

क्या उसे कुइयिल के आने की जानकारी पहले से थी?

जबकि उसने अचु को सख़्त आदेश दिया था कि किसी को कुछ न बताए।

उसके मन में एक और डर घर करने लगा।

यदि उसने मीनाक्षी पर अदुक्कलदोषम् का आरोप लगाया...

और मीनाक्षी ने संकरण को बता दिया कि उसी रात कुइयिल उसके कमरे में आई थी...

तो?

उसकी अपनी ही पोल खुल जाएगी।

यह जोखिम वह किसी भी कीमत पर नहीं उठा सकता था।

वह सारी रात इन्हीं विचारों में तड़पता रहा।

चोरियानम की रात (भाग-4)

अगली सुबह मीनाक्षी का व्यवहार बिल्कुल सामान्य था।

वह हमेशा की तरह चुपचाप अपने काम में लगी रही।जब कोई उससे कुछ पूछता, तो वह केवल हल्का-सा सिर हिला देती।

नम्बूदिरि बार-बार उसे देखता रहा।

क्या सचमुच उसका कोई प्रेमी हो सकता है?

वह मन ही मन इस विचार को स्वीकार नहीं कर पा रहा था।

जिस आदमी की झलक उसने रात में देखी थी, वह तो किसी साधारण खेतिहर मज़दूर जैसा लगता था।

क्या मीनाक्षी इतनी नीचे गिर सकती है?

नहीं..

उसने स्वयं को समझाया।

वह स्वयं को एक अच्छा पति और योग्य प्रेमी मानता था फिर मीनाक्षी को किसी और की आवश्यकता क्यों पड़ती?

उसने कई बार मीनाक्षी से बात शुरू करने की कोशिश की।

लेकिन हर बार पद्मावती बीच में आ जाती।

उसकी तीखी, व्यंग्यपूर्ण बातें सुनने का धैर्य अब नम्बूदिरि में नहीं बचा था।

सरसु उस दिन एझुथुपल्ली गई थी।

उसे याद आया कि उसने साफ़ मना किया था—

कोई भी स्त्री अपने मुंडे हुए सिर के साथ इल्लम से बाहर नहीं जाएगी।

लेकिन मीनाक्षी ने उसकी बात की परवाह नहीं की और सरसु को विद्यालय भेज दिया।

यदि गाँव वालों ने उसे इस रूप में देख लिया, तो सब यही समझेंगे कि उसके परिवार की सहानुभूति पुलयार समुदाय के साथ है।

उसकी चिंता और भी बढ़ गई।

संकरण ने हाल ही में पद्मनाभपुरम् से कुछ तमिल मज़दूर कडनाड भेजे थे।

यदि उनमें से किसी ने संकरण के खेतों के मज़दूरों को बता दिया कि सरसु भी मुंडे सिर के साथ विद्यालय जा रही है...

तो संकरण और उसके बेटे तुरंत इल्लम पहुँच जाएँगे।

और तब...

उसके लिए बच निकलना असंभव होगा।

कुछ दिन तक नम्बूदिरि ने स्वयं को शांत रखा।

खेतों में न तो उसे कुइयिल दिखाई दी, न अचु।

जब उसने कुमारण से पूछा, तो उसने बताया,

“शायद दोनों कहीं और चले गए हैं। खेतिहर मज़दूर अक्सर काम की तलाश में दूसरे इलाकों में चले जाते हैं।”

कुमारण ने पुलयार बस्ती में बहुत पूछताछ की।

लेकिन किसी ने भी कुइयिल और अचु के बारे में एक शब्द नहीं बताया।

नम्बूदिरि के लिए यह स्वीकार करना कठिन था कि कुइयिल अब उसके हाथ से निकल चुकी है।

उसका स्वभाव दिन-ब-दिन अधिक चिड़चिड़ा होता जा रहा था।

अब वह छोटी-छोटी बातों पर भी मज़दूरों को दंड देने लगा।

एक सुबह उसका विश्वासपात्र मुरुगन इल्लम पहुँचा।

उसने खेतों पर जाने से पहले नम्बूदिरि को अलग ले जाकर धीमे स्वर में कुछ कहा।

बात सुनते ही नम्बूदिरि का चेहरा बदल गया।

वह घबरा गया।

कुछ ही देर बाद वह जल्दी-जल्दी इल्लम से बाहर निकल पड़ा।

जैसे ही वह जाने लगा, पीछे से पद्मावती की आवाज़ आई—

"लगता है आज तुम्हारी पूँछ में आग लग गई है, नम्बूदिरि!"

"जाओ... नदी में बुझा आओ। इल्लम का पानी उसके लिए काफ़ी नहीं होगा।"

भगी अम्मा यह कहते हुए स्वयं हँस पड़ी।

बरामदे में बैठे सभी लोग भी हँसने लगे।

फिर उसने कहा—

"पार्वती... थामरा... ज़रा हमारे लिए भुने हुए कटहल के बीज और थोड़ी कांधारी मिर्च ले आओ।"

"लगता है आज दोपहर का भोजन देर से होगा। पार्वती भी कहानी सुनने में इतनी मग्न है कि रसोई में केवल मजबूरी में जा रही है।"

पार्वती मुस्कराई और थामरा को साथ लेकर रसोई की ओर चली गई।

जानकी अम्मा ने संतोष से कहा—

"मुझे तो पद्मावती का स्वभाव बहुत पसंद आने लगा है।"

पार्वती ने सहमति में सिर हिलाया।

थामरा ने जाते-जाते उत्साह से कहा—

"देख लेना... आखिर में यह सब अन्याय मीनाक्षी ही समाप्त करेगी। वह व्यर्थ थोड़े ही कलरिपयट्टु का अभ्यास कर रही है!"

उसने समर्थन की आशा से भगी अम्मा की ओर देखा।

भगी अम्मा केवल मुस्करा दी।

"अभी वहाँ पहुँचने दो," उसने कहा।

"बस इतना समझ लो... पद्मावती जैसी स्त्रियाँ बहुत कम जन्म लेती हैं।"

“मेरी दादी कहा करती थीं—अगर साहस सीखना हो, तो पद्मावती से सीखो।ज़रूरत पड़े तो अपने ही बच्चों के सामने भी सत्य के लिए खड़े हो जाओ”।

और इतना कहकर भगी अम्मा एक बार फिर सबको अपने शब्दों के सहारे उस बीते हुए युग में ले गईं।

चोरियानम की रात (भाग-5)

मुरुगन जो समाचार लेकर आया था, वह अत्यन्त चिंताजनक था।

कुझयिल और अच्चु, दोनों अलप्पुझा ज़िले में संकरण नम्बूदिरि की ज़मीनों पर जाकर बस गए थे।

गाँव भर में यह चर्चा फैल चुकी थी कि संकरण ने त्रावणकोर के महाराजा को पत्र लिखकर रामन नम्बूदिरि की करतूतों की शिकायत की है और उसके विरुद्ध मुकदमा चलाने की माँग की है।

यह भी कहा जा रहा था कि क्षुरकन (नाई) को अलप्पुझा बुलाया गया है, ताकि वह कडनाड के पुलयार समुदाय के साथ हुई घटना की गवाही दे सके।

यह सुनकर नम्बूदिरि के पैरों तले ज़मीन खिसक गई।

वह खेत के किनारे बैठ गया और गहरे विचारों में डूब गया।

वह न तो संकरण का शत्रु बनना चाहता था और न ही महाराजा की अदालत में कटघरे में खड़ा होना।

कुछ देर सोचने के बाद उसने कुमारण को बुलाया और आदेश दिया,

“आज से हर मज़दूर को चार एडंगाज़ी धान दिया जाएगा”।

“और हर त्योहार पर एक मुंडु और एक थोर्थु भी”।

उसे विश्वास था कि इतना कर देने से पुलयार समुदाय फिर से उसके पक्ष में हो जाएगा।

हालाँकि उसे यह भी डर था कि विष्णु नम्बूदिरि इस बदलाव से प्रसन्न नहीं होगा।

अब तक दोनों नम्बूदिरियों में यह मौन समझौता था कि वे एक-दूसरे से अधिक मज़दूरी देकर प्रतिस्पर्धा नहीं करेंगे।

खेतों का निरीक्षण करते हुए अचानक उसकी नज़र एक परिचित स्त्री पर पड़ी।

वह थी दक्षायणी।

उसके सिर पर एक छोटी-सी गठरी रखी थी।

उसके साथ एक लंबी, चंचल किशोरी थी, जो उछलती-कूदती उसके साथ चल रही थी।

लड़की के गले और पैरों में मनकों के आभूषण थे।

उसकी चाल में अद्भुत निश्चिन्तता थी।

जैसे-जैसे वे निकट आईं, नम्बूदिरि ने अपनी छड़ी उठाकर दक्षायणी के सीने पर पड़े थोर्थु की ओर इशारा किया।

फिर उसने उस लड़की की ओर देखा।

दक्षायणी तुरंत समझ गई।

उसने चुपचाप अपना थोर्थु हटा दिया और बोली,

"यह लड़की अभी रजस्वला नहीं हुई है"।

इतना कहकर उसने लड़की का हाथ पकड़ा और तेज़ी से आगे बढ़ गई।

वे दोनों अभी कुछ ही दूर पहुँची थीं कि सामने से एक पुलयार स्त्री ने ऊँची आवाज़ में पूछा,

"दक्षायणी! कुइयिल कैसी है?"

नम्बूदिरि का माथा ठनका।

वह कुछ समझ पाता, उससे पहले ही उसने देखा—

दक्षायणी लगभग दौड़ते हुए वहाँ से निकल गई।

उसके मन में संदेह जाग उठा।

तो दक्षायणी सचमुच अलप्पुझा गई थी!

और क्यों गई थी?

क्या संकरण उसके विरुद्ध सबूत इकट्ठा कर रहा था?

तभी मुरुगन उसके पास आया और धीरे से बोला,

"थम्पुरन...

दक्षायणी बहुत चालाक है'।

"उस लड़की का नाम चक्की है'।

"वह उसके भाई की बेटी है'।

"और दो सप्ताह पहले ही उनके समुदाय ने उसके यौवनारंभ का उत्सव मनाया है'।

यह सुनते ही नम्बूदिरि के भीतर क्रोध की आग भड़क उठी।

तो दक्षायणी ने उससे झूठ बोला था!

उसने लड़की को बचाने के लिए छल किया था।

उसके मन में एक और बात बैठ गई—

दक्षायणी अब केवल एक कामवाली नहीं रही।

वह इल्लम की स्त्रियों का विश्वास जीत चुकी थी।

और अब शायद संकरण की भी विश्वसनीय बन चुकी थी।

यह विचार उसे भीतर तक बेचैन कर गया।

उस दिन वह समय से पहले इल्लम लौट आया।

मन इतना उलझा हुआ था कि उसे किसी बात की सुध नहीं थी।

सौभाग्य से उस समय मीनाक्षी कलरिपयट्टु का अभ्यास नहीं कर रही थी।

उसने किन्डी से पानी लेकर पैर धोए, एक गहरी साँस ली और अपने कक्ष की ओर बढ़ गया।

लेकिन जैसे ही उसने दहलीज़ पार की...

वह ठिठक गया।

उसकी आरामकुर्सी पर कोई बैठा था।

चेहरे पर कठोर क्रोध।

वह था—

संकरण नम्बूदिरि।

उसका हृदय मानो धड़कना भूल गया।

चोरियानम की रात (भाग-6)

संकरण नम्बूदिरि उसकी आरामकुर्सी पर बैठा था।उसका चेहरा क्रोध से तना हुआ था।

रामन को देखते ही वह गरजा,

“मीनाक्षी! सरसु!”

रामन नम्बूदिरि वहीं जड़ हो गया।

कुछ ही क्षणों में मीनाक्षी और सरसु धीरे-धीरे भीतर से बाहर आए।उनके पीछे पद्मावती भी चली आई।

संकरण की दृष्टि तीनों के मुंडे हुए सिरों पर पड़ी।

उसका क्रोध और भड़क उठा।

उसने उँगली उठाकर कहा,

“यह सब क्या है?”

रामन ने तुरंत सफ़ाई दी,

“अच्चन! यह मैंने नहीं किया”।

संकरण का धैर्य टूट गया।

“तुम्हीं ने मेरी बेटी और मेरी नातिन को इस दशा में पहुँचाया है”।

“भगवान का शुक्र मनाओ कि मैं अपने दोनों बेटों को साथ नहीं लाया”।

“यदि वे यहाँ होते, तो तुम्हारी कुटुमि (शिखा) के साथ तुम्हारा सिर भी धड़ से अलग कर देते”।

उसकी आवाज़ काँप रही थी।

“मीनाक्षी मेरी आँखों का तारा है”।

“यदि मेरी थम्पुराटी (पत्नी) अपनी बेटी और नातिन को इस हालत में देख ले, तो उसी क्षण मर जाएगी”।

फिर उसने सरसु की ओर देखते हुए कहा,

“तुम्हारी अपनी बेटी भी कुछ ही दिनों में सयानी होने वाली है...

और तुम...”

वह रुक गया।

स्त्रियों और बच्ची की उपस्थिति में वह आगे के शब्द नहीं बोल पाया।

कुछ क्षण बाद उसने स्वयं को सँभाला।

“मुझे ऐसे शब्द मत बुलवाओ जिन पर बाद में मुझे पछताना पड़े”।

“मैं अपनी बेटी और अपनी नातिन के सामने तुम्हारी असलियत बयान नहीं करना चाहता”।

———

संकरण अपनी कुर्सी से उठा।

उसने दृढ़ स्वर में कहा,

“मैं सरसु को अपने साथ ले जा रहा हूँ”।

“यह बच्ची इस घर से दूर ही सुरक्षित रहेगी”।

“उसकी नानी उसके बाल जल्दी वापस उगा देगी”।

“उसके यौवनारंभ का समारोह मेरे इल्लम में होगा”।

“यदि तुमने इसका विरोध किया...”

वह एक-एक शब्द पर ज़ोर देते हुए बोला,

“तो मैं तुम्हें महाराजा की अदालत तक घसीटकर ले जाऊँगा”।

फिर उसने मीनाक्षी की ओर देखा।

“मैं अभी मीनाक्षी को यहीं छोड़ रहा हूँ...”

“केवल इसलिए कि यदि मेरे बेटे अपनी बहन को इस अवस्था में देख लेंगे, तो वे तुम्हें जीवित नहीं छोड़ेंगे”।

“लेकिन जब मैं उन्हें सब कुछ बता दूँगा...”

“तब मैं अपनी बेटी को भी यहाँ से ले जाऊँगा”।

संकरण अब बिल्कुल पास आ गया।

उसने रामन की आँखों में देखते हुए कहा,

“याद रखना...

मेरे आदमी हर जगह हैं”।

“तुम्हारी हर हरकत की खबर मुझे मिल जाएगी”।

“शर्म करो”।

“काश...

मैंने अपनी सबसे प्यारी बेटी का विवाह करने से पहले तुम्हारे बारे में अच्छी तरह पता किया होता”।

इतना कहकर उसने सरसु का हाथ पकड़ा।

वह दरवाज़े की ओर बढ़ा।

लेकिन बाहर निकलने से पहले वह एक बार फिर मुड़ा।

उसकी दृष्टि पद्मावती पर टिक गई।

“पद्मावती...”

“क्या तुम्हें ऐसे पुत्र को जन्म देने का कभी पछतावा नहीं होता?”

“इसने पूरे नम्बूदिरि समाज का सिर झुका दिया है”।

“यदि तुममें साहस है...”

“तो इसकी कुटुम्बि खुलवा दो...”

“और इसकी शुद्धि करवा दो”।

यह कहकर संकरण सरसु का हाथ थामे इल्लम से बाहर निकल गया।

बरामदे में कुछ क्षणों तक पूर्ण सन्नाटा छाया रहा।

रामन बिना कुछ बोले अपने कक्ष से बाहर निकल गया।

मीनाक्षी, पद्मावती और घर की अन्य स्त्रियाँ भी चुपचाप अपने-अपने काम में लग गईं।

उस दिन किसी ने एक शब्द भी नहीं कहा।

चोरियानम की रात (भाग-7)

अगले कुछ दिन इल्लम और खेत—दोनों जगह असामान्य रूप से शांत रहे।

रामन नम्बूदिरि के आदेश के अनुसार मज़दूरों को अब चार एडंगाज़ी धान मिलने लगा।

खेतों का काम फिर से सामान्य गति से चलने लगा।

घर के भीतर भी जीवन अपनी पुरानी लय में लौटता दिखाई दिया।

मीनाक्षी पद्मावती के मार्गदर्शन में प्रतिदिन कलरिपयट्टु का अभ्यास करती रही।

रात का भोजन भी अब बिना किसी विवाद के शांतिपूर्वक होने लगा।

फिर भी…

रामन को सरसु की बहुत कमी खलती थी।

उसकी चहकती आवाज़ के बिना इल्लम सूना लगता था।

लेकिन दूसरी ओर, सरसु की अनुपस्थिति ने उसे यह अनुभव भी कराया कि घर में उसका अधिकार कुछ हद तक फिर स्थापित हो गया है।

एक दिन उसने सोचा कि शायद मीनाक्षी का मन जीतने का यही उचित समय है।

उसने उसे मंदिर के वार्षिक उत्सव में साथ चलने का प्रस्ताव दिया।

यद्यपि भीतर ही भीतर वह उनके मुंडे हुए सिरों के कारण अत्यंत लज्जित था।

उसे लग रहा था कि पूरे गाँव के सामने यह मानो घोषणा होगी कि उसका परिवार पुलयार समुदाय के साथ खड़ा है।

वह बार-बार स्वयं को समझाता—

मैंने तो केवल कुइयिल के बाल कटवाने का आदेश दिया था।

उसने एक नम्बूदिरि की आज्ञा नहीं मानी थी।

मैं भला कैसे जान सकता था कि पूरा पुलयार समुदाय उसके समर्थन में अपने सिर मुंडवा लेगा?

मगर पद्मावती और मीनाक्षी के लिए वह दिन किसी उत्सव से कम नहीं था।

उन्हें वर्षों बाद इल्लम से बाहर निकलने का अवसर मिला था।

पिछली बार वे पाँच वर्ष पहले विष्णु नम्बूदिरि के नए इल्लम में पूजा और उत्सव में शामिल होने गई थीं।

इस बार भी उनके साथ दक्षायणी और भार्गवी थीं।

यद्यपि परंपरा के अनुसार यह दायित्व किसी नायर स्त्री को निभाना चाहिए था, फिर भी दोनों एझवा स्त्रियाँ ही उनकी सहचरी बनीं।

उस समय की प्रथा यह थी कि जब नम्बूदिरि परिवार की महिलाएँ बाहर निकलतीं, तो उनके साथ चलने वाली नायर स्त्रियाँ आगे-आगे ऊँची आवाज़ में लोगों को सावधान करतीं, ताकि निम्न जाति के लोग रास्ते से हट जाएँ और उनके स्पर्श से 'अपवित्रता' न हो।

मीनाक्षी और पद्मावती ने अपने हाथों में मरक्कुडा—ताड़पत्र से बने पारंपरिक छाते—ले रखे थे।

रामन ने राहत की साँस ली।

उसे लगा, शायद इन छातों की ओट में लोगों की नज़र उनके मुंडे हुए सिरों पर कम पड़ेगी।

फिर भी...

पूरे उत्सव के दौरान दक्षायणी की उपस्थिति उसे बेचैन करती रही।

उसके मन में उस स्त्री के प्रति अब भी गहरा रोष था।

उसी ने उससे अपनी भतीजी चक्की के बारे में झूठ बोला था।

वही चुपके से अलप्पुझा गई थी।

कम-से-कम उसे इसकी सूचना तो दे सकती थी।

आख़िर वह उसके ही इल्लम में काम करती थी।

इस यात्रा के बाद घर का वातावरण कुछ बदल गया।

पद्मावती और मीनाक्षी कई दिनों तक मंदिर-उत्सव की बातें करती रहीं।

लंबे समय बाद भोजन के समय फिर से बातचीत सुनाई देने लगी।

इल्लम में जैसे थोड़ी-सी रौनक लौट आई।

चोरियानम की रात (भाग-8)

दिन धीरे-धीरे बीतते गए।

एक दिन संकरण नम्बूदिरि के दोनों पुत्र—विजयन और मुरली—इल्लम पहुँचे।

वे मीनाक्षी को अपने साथ मायके ले जाने आए थे।

रामन नम्बूदिरि उस समय घर पर ही था, लेकिन दोनों भाई उसके हिस्से वाले बरामदे तक भी नहीं आए।

उन्होंने न उसके साथ बैठकर बात की और न ही भोजन करने की इच्छा जताई।

उन्होंने स्पष्ट कहा कि उन्हें जल्दी लौटना होगा, क्योंकि उनके गाँव में धान की कटाई का काम चल रहा है।

मीनाक्षी चुपचाप रामन के कक्ष तक आई।

वह द्वार पर खड़ी रही।

रामन के पास कहने के लिए बहुत कुछ था, पर शब्द नहीं थे।

वह समझ चुका था कि यदि उसने मीनाक्षी को रोकने की कोशिश की, तो संकरण और उसके पुत्रों का क्रोध फिर उसके सिर पर टूट पड़ेगा।

कुछ क्षण बाद उसने केवल इतना कहा—

"दो दिन में सरसु को साथ लेकर लौट आना।"

"और अपने पिता को समझाना कि अगले महीने सरसु का यौवनारंभ संस्कार यहीं इल्लम में होगा, जैसा पहले तय हुआ था।"

मीनाक्षी ने हमेशा की तरह कोई उत्तर नहीं दिया।

उसने केवल हल्का-सा सिर झुकाया।

अपने कपड़ों की गठरी उठाई और भाइयों के साथ चल दी।

पद्मावती उन्हें इल्लम के मुख्य द्वार तक छोड़ने गई।

वहाँ भी दोनों स्त्रियों के बीच कोई शब्द नहीं बोला गया।

सिर्फ़ मौन...

और एक गहरी समझ।

मीनाक्षी और सरसु के चले जाने के बाद इल्लम पहले से भी अधिक सूना हो गया।

अब पूरे घर में केवल दो ही लोग रह गए थे—

रामन और पद्मावती।

रसोई में बहुत कम खाना बनने लगा।

आँगन में भी पहले जैसी चहल-पहल नहीं रही।

एक सप्ताह बीत गया।

न मीनाक्षी लौटी...

न सरसु।

एक शाम भोजन करते समय पद्मावती ने कहा,

"इल्लम का नया कुआँ अभी भी अधूरा पड़ा है"।

"उसे पत्थरों से पक्का करवाना बाकी है"।

कुआँ बहुत गहरा खोदा जा चुका था और उसमें भरपूर पानी भी आ गया था।

लेकिन ज़मीन से ऊपर उसकी गोल पत्थर की मेड़ अभी तक नहीं बनी थी।

जब सरसु घर में दौड़ती-भागती रहती थी और बछड़े-बकरियों के साथ खेलती थी, तब सुरक्षा के कारण काम रोक दिया गया था।

चारों ओर बाँस की बाड़ लगा दी गई थी।

अब जबकि घर लगभग खाली था...

पद्मावती ने कहा,

"यही उचित समय है कि सारा अधूरा काम पूरा करवा लिया जाए"।

उसने एक और बात जोड़ी—

"कुलिमुरी के आसपास के पेड़ भी बहुत घने हो गए हैं"।

"धूप भीतर तक नहीं पहुँचती"।

"कपड़े ठीक से सूखते भी नहीं"।

अगले दिन रामन ने कुमारण को आदेश दिया कि कुछ मज़दूर इल्लम भेजे जाएँ ताकि कुएँ का काम पूरा किया जा सके।

वापसी में मुरुगन उसके साथ हो लिया।

चलते-चलते उसने फिर तरह-तरह की बातें छेड़ दीं।

रामन का मन अब भी कुइयिल में अटका हुआ था।

लेकिन जैसे ही मुरुगन ने चक्की का नाम लिया...

वह चौकन्ना हो गया।

मुरुगन ने बताया,

"चक्की उसी एझुथुपल्ली में पढ़ती है जहाँ सरसु पढ़ती थी"।

रामन अचानक रुक गया।

उसे याद आया—

हाँ...

सरसु अक्सर अपनी सहेली चक्की का ज़िक्र किया करती थी।

वह उसके निडर स्वभाव की बहुत प्रशंसा करती थी।

गाँव में शायद ही कोई पेड़ हो जिस पर चक्की न चढ़ सके।

और ऐसा कोई नाला भी नहीं था जिसे वह तैरकर पार न कर सके।

रामन ने मन ही मन सोचा—

यही कारण है कि वह लड़की मुझे याद आ रही थी।

लेकिन तुरंत उसके मन में दूसरा विचार आया।

चक्की सरसु की संगति के योग्य नहीं है।

वह एझवा जाति की लड़की थी।

उसे खुलकर जीने की आज़ादी थी।

जबकि सरसु...

नम्बूदिरि परंपराओं से बँधी हुई थी।

और...

रामन के मन में चक्की के लिए कुछ और ही योजनाएँ जन्म ले चुकी थीं।

चोरियानम की रात (भाग-9)

अगले ही दिन मुरुगन ने कुएँ का अधूरा काम पूरा करने के लिए चार मज़दूर इल्लम भेज दिए—दो पुरुष और दो स्त्रियाँ।

कुमारण उन्हें साथ लेकर आया और पूरे काम की जिम्मेदारी समझाई।

“काम पूरा होने पर तुम सबको दो-दो एडंगाज़ी धान मिलेगा,” उसने कहा।

निर्देश देकर वह वापस खेतों की ओर लौट गया।

जाने से पहले उसने पद्मावती को भी काम का पूरा ब्यौरा दे दिया।

पद्मावती प्रसन्न थी।

मीनाक्षी और सरसु के चले जाने के बाद इल्लम असह्य रूप से सूना हो गया था।

मज़दूरों के आने से कम-से-कम घर में कुछ चहल-पहल तो रहेगी।

उसने दक्षायणी से कहा,

“सबके लिए कांजी और कप्पा बना दो।”

दक्षायणी मुस्कराई।

“थम्पुराटी,” उसने कहा, “इन मज़दूरों में मेरा भाई देवन और उसकी पत्नी कार्थियायनी भी हैं।”

दोपहर होते-होते काम रोक दिया गया।

सभी मज़दूर पास के नाले पर गए, हाथ-पैर धोए और फिर भोजन के लिए अदुकला में आ पहुँचे।

पद्मावती स्वयं व्यवस्था देख रही थी, जबकि दक्षायणी सबको भोजन परोस रही थी।

तभी एक लंबी, चंचल किशोरी भीतर आई और आदर से थम्पुराटी को प्रणाम किया।

दक्षायणी और देवन दोनों मुस्करा उठे।

“यह मेरी भतीजी चक्की है,” दक्षायणी ने परिचय कराया।

“सरसु की कूट्टुकारी (घनिष्ठ सहेली) और एड्डुथुपल्ली में उसकी सहपाठिनी।”

पद्मावती का चेहरा खिल उठा।

वह भीतर गई और तरह-तरह के घर के बने पकवान लेकर आई।

थोड़ी ही देर बाद उसने देखा—

चक्की सरसु के प्रिय झूले पर बैठी थी।

आम के पेड़ से बँधा वह झूला धीरे-धीरे झूल रहा था।

हल्की हवा और फुहारों के बीच चक्की बिल्कुल निश्चिंत होकर झूल रही थी।

उसे देखकर पद्मावती के चेहरे पर अनायास ममता उतर आई।

इतने में जानकी अम्मा अधीर होकर बोलीं,

“अरे भगी!

अब कहानी का सार भी बताओ'।

"कब से भूमिका ही बाँधे जा रही हो'।

"दोपहर भी निकल गई'।

थामरा तुरंत बोल उठी,

"नहीं, अप्पाची!"

"भगी अम्मा जैसी कहानी सुनाती हैं, वैसी ही सुनाइए'।

"मैं कोई हिस्सा छोड़ना नहीं चाहती'।

"इस कहानी से मुझे हमारे अतीत के बारे में कितना कुछ जानने को मिला है'।

"और अगर मैं इसे स्कूल की पत्रिका के लिए लिखूँगी, तो यही छोटे-छोटे विवरण इसे जीवंत बनाएँगे'।

जानकी अम्मा ने मुस्कराकर हार मान ली।

"ठीक है," उन्होंने कहा,

"लेकिन पहले सब लोग भोजन कर लें'।

"उसके बाद कहानी आगे बढ़ेगी'।

दोपहर के भोजन में मथंगा पच्चड़ी, कूक्की थोरण, एडिच्चक्का थोरण, मापिल्लै सांबा चावल और अंत में पयार प्रदामन परोसा गया।

भोजन इतना स्वादिष्ट था कि भगी अम्मा की आँखों में नींद उतरने लगी।

यह देखकर थामरा तुरंत रसोई में भागी और उनके लिए गरम-गरम कट्टन कापी (कड़क काली कॉफी) बनाकर ले आई।

कॉफी पीते ही भगी अम्मा फिर तरोताज़ा हो गई।

उधर...

जब चक्की झूले पर बैठी पकवान खा रही थी और हल्की बारिश का आनंद ले रही थी...

उसी समय रामन नम्बूदिरि इल्लम में दाखिल हुआ।

उसकी नज़र जैसे ही उस किशोरी पर पड़ी...

उसके भीतर फिर वही विकृत लालसा जाग उठी।

वह धीरे-धीरे उसकी ओर बढ़ने लगा।

लेकिन इससे पहले कि वह उसके पास पहुँच पाता...

पद्मावती ने ऊँची आवाज़ में पुकारा,

"नम्बूदिरि!

आओ, भोजन तैयार है"।

रामन ठिठक गया।

उसने तुरंत अपने चेहरे के भाव सँभाले और रसोई की ओर बढ़ गया।

चक्की ने उसे देखा अवश्य...

पर वह निडर होकर अपने पकवान खाती रही।

भोजन करते समय भी रामन की निगाहें बार-बार रसोई के द्वार से बाहर झूलती हुई चक्की पर टिक जाती थीं।

उसने धीरे से पूछा,

"सरसु के झूले पर बैठी यह लड़की कौन है?"

फिर धीमे स्वर में जोड़ दिया,

"कहीं यह किसी नीची जाति की लड़की तो नहीं?"

पद्मावती ने व्यंग्य से मुस्कराकर उत्तर दिया,

"यह सरसु की सहेली और उसकी सहपाठिनी है"।

"मुझे लगा था दक्षायणी ने तुम्हें पहले ही बता दिया होगा"।

रामन ने बात सँभालते हुए कहा,

“नहीं.. याद नहीं रहा”।

“इतने लोग आते-जाते रहते हैं कि कभी-कभी भ्रम हो जाता है”।

लेकिन उसके मन में अब केवल एक ही नाम गूँज रहा था—

चक्की।

चोरियानम की रात (भाग–10)

दिन बीतते गए।

कुएँ की चारदीवारी का काम धीरे-धीरे पूरा होने लगा।

रामन नम्बूदिरि ने कई बार अवसर खोजा कि किसी तरह चक्की से अकेले में बात कर सके।

पर उसकी हर कोशिश विफल रही।

पद्मावती हर समय उस लड़की के आसपास रहती।

वह एक पल के लिए भी उसे अकेला नहीं छोड़ती थी।

आख़िरकार कुएँ का सारा काम समाप्त हो गया।

पद्मावती प्रसन्न होकर बोली,

“अब मैं मीनाक्षी को संदेश भेजूँगी कि इल्लम का अधूरा काम पूरा हो गया है”।

मज़दूर अपने-अपने घर लौट गए।

रामन की सारी योजनाएँ धरी की धरी रह गईं।

———

एक दिन रामन ने पद्मावती से कहा,

“मीनाक्षी और सरसु को वापस बुलवा लो”।

पद्मावती ने शांत स्वर में उत्तर दिया,

“संकरण ने मना कर दिया है”।

“मैंने संदेश भिजवाया था, लेकिन उसने उन्हें भेजने से इंकार कर दिया"।

फिर हल्की मुस्कान के साथ बोली,

“यदि तुम्हें इतनी चिंता है, तो तुम स्वयं जाकर उन्हें ले आओ"।

रामन ने केवल “हूँ...” कहा और चुपचाप बाहर निकल गया।

उसी दिन खेतों से लौटते समय वह सरसु की एझुथुपल्ली के सामने से गुज़रा।

वहाँ उसकी भेंट अरविन्दन एझुथाचन से हुई।

उन्होंने पूछा,

“सरसु अब विद्यालय क्यों नहीं आती?”

“क्या उसे किसी दूसरे एझुथुपल्ली में भेज दिया गया है?”

फिर सहज भाव से बोले,

“उसकी सहेली चक्की तो रोज़ उसके बारे में पूछती रहती है"।

चक्की।

यह नाम सुनते ही रामन के कान खड़े हो गए।

उसने पूरे विद्यालय पर नज़र दौड़ाई।

लेकिन उसकी भटकती हुई दृष्टि चक्की को कहीं खोज नहीं पाई।

निराश होकर वह घर लौट आया।

इल्लम के मुख्य द्वार पर पद्मावती किसी लड़की के साथ बैठी बातें कर रही थी।

जैसे ही वह निकट पहुँचा...

वह चौंक गया।

वह लड़की...

चक्की थी।

रामन का दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा।

उसने तुरंत बहाना बनाया।

“अम्मा!

ज़रा मेरे लिए पानी ले आओ”।

उसे लगा, पद्मावती भीतर जाएगी और उसे कुछ क्षण चक्की के साथ अकेले बिताने का अवसर मिल जाएगा।

लेकिन पद्मावती उसके मन को भली-भाँति समझ चुकी थी।

वह तुरंत उठ खड़ी हुई और बोली,

“आओ बेटी”।

“मैंने सरसु के लिए कुछ पकवान बनाए हैं”।

“तुम भी खाकर देखो”।

यह कहकर वह स्वयं चक्की को साथ लेकर रसोई की ओर चली गई।

रामन वहीं खड़ा रह गया।

एक बार फिर…

उसकी माँ उसकी योजना पर पानी फेर चुकी थी।

भगी अम्मा ने एक लंबी साँस ली।

“बस… आज के लिए इतना ही”।

उन्होंने थके हुए स्वर में कहा।

“अब तो शाम भी होने लगी है”।

उनकी बात सुनकर सब जैसे वर्तमान में लौट आए।

वे घर जाना चाहती थीं।

लेकिन जानकी अम्मा ने तुरंत टोका,

“अरे भगी!”

“इतने विस्तार में जाने की क्या ज़रूरत है?”

“बच्चियाँ अभी छोटी हैं।

“कुछ बातें छोड़कर सीधे कहानी पूरी कर दो।

थामरा तुरंत विरोध में बोली,

“नहीं, अप्पाची!”

“कृपया इन्हें मत रोकिए।

“भगी अम्मा जिस तरह कहानी सुनाती हैं, मैं उसे बिल्कुल वैसे ही सुनना चाहती हूँ।

“मैं उस पुराने थारवाड़ की तस्वीरें भी लूँगी।

“और इस पूरी कहानी को स्कूल की पत्रिका के लिए लिखूँगी।

“हमारे त्रावणकोर-पूर्व केरल के इतिहास के बारे में मेरे मित्रों को शायद कुछ भी पता नहीं होगा।

जानकी अम्मा मुस्करा दीं।

उन्होंने ड्राइवर को आदेश दिया,

“कल सुबह नाश्ते के बाद भगी अम्मा को फिर ले आना।

“आज इन्हें घर छोड़ आओ।

पार्वती ने उनके साथ केले और चावल भी भिजवा दिए।

फिर उन्होंने अम्मू की ओर देखकर कहा,

“तुम यहीं रुक जाओ, बेटी।

“आज रात थामरा के साथ भोजन करना।

जानकी अम्मा दोनों लड़कियों की खिलखिलाहट सुनती रहीं।

उन्हें अच्छी तरह पता था—

कुछ ही दिनों बाद थामरा वापस बेंगलुरु चली जाएगी...

और यह विशाल थारवाड़ फिर से उसी पुराने सन्नाटे में डूब जाएगा।

झूठा आरोप (भाग-1)

उस रात थामरा अप्पाची के पास ही सोई।

नींद आने से पहले उसने धीरे से पूछा,

“अप्पाची... क्या आपको इस कहानी का अंत पहले से पता है?”

जानकी अम्मा ने स्नेह से उसकी ओर देखा।

“मैं चाहूँ तो पाँच मिनट में पूरी कहानी सुना सकती हूँ,” उन्होंने मुस्कराकर कहा, “लेकिन मैं अपनी इस छोटी-सी बच्ची को लेखिका बनते देखना चाहती हूँ।”

थामरा की आँखें चमक उठीं।

“अप्पाची... चक्की का क्या होगा?”

जानकी अम्मा हँस दीं।

“तो क्या मैं केवल चक्की की कहानी बता दूँ और भगी अम्मा की पूरी कथा यहीं समाप्त कर दूँ?”

“नहीं... नहीं!”

थामरा ने तुरंत उनका हाथ पकड़ लिया।

“मैं एक भी बात छोड़ना नहीं चाहती।”

“मुझे चक्की से सबसे ज़्यादा अपनापन महसूस होता है।”

“वह कुइयिल जैसी नहीं है।”

“वह तो बिल्कुल मेरी तरह है—बेफ़िक्र... और जीवन से प्यार करने वाली।”

अगली सुबह जानकी अम्मा ने स्वयं गाड़ी भेजकर भगी अम्मा को बुलवाया।

उन्होंने पार्वती से कहा,

"आज दोपहर के भोजन में कालन, ओलन और उप्पेरी बनाना"।

फिर स्वयं याद करते हुए बोलीं,

"और हाँ...

पिछले दिनों जो कडुमांगा अचार डाला था, अब तक तैयार हो गया होगा।

उसे भी निकाल लेना"।

पार्वती मुस्कराई।

उसने अपनी ओर से एक और व्यंजन जोड़ दिया—

प्रदामन।

यह सुनते ही अम्मू खुशी से उछल पड़ी।

थामरा ने उसे देखकर स्नेह से मुस्करा दिया।

भगी अम्मा इस बार अपने छोटे भतीजे नारायण को भी साथ ले आई थीं।

उन्हें पता था कि थारवाड़ से कोई भी बच्चा भूखा वापस नहीं लौटेगा।

इतने व्यंजन शायद उसे फिर कभी खाने को न मिलें।

भगी अम्मा ने आराम से अपनी टाँगें फैलाईं।

पुकयिला को मुँह में दबाया।

उसे बाएँ गाल में टिकाया।

फिर बोलीं—

"चलो...

अब फिर उसी पुराने इल्लम में चलते हैं"।

उधर...

रामन नम्बूदिरि का मन बुरी तरह अशांत था।

उस दिन जब उसने चक्की को अपने आँगन में निश्चिंत घूमते देखा था...

तभी से उसका मन उसके पीछे अटक गया था।

लेकिन उसकी सबसे बड़ी समस्या थी—

पद्मावती।

वह हर समय चक्की के आसपास रहती।

न वह उससे अकेले बात कर पाता...

न उसके पास जा पाता।

उसने मन ही मन स्वयं को समझाया—

मैं एक नम्बूदिरि हूँ।

"जिस किसी निम्न जाति की स्त्री पर मेरी दृष्टि पड़े, उसे मेरे बुलावे को सम्मान समझना चाहिए"।

"यह उनका सौभाग्य होना चाहिए कि उन्हें किसी नम्बूदिरि की सेवा करने का अवसर मिले"।

उसके भीतर की विकृत मानसिकता फिर जाग उठी।

आख़िर उसने एक योजना बनाई।

मुरुगन।

वही उसकी सहायता करेगा।

मीनाक्षी और सरसु घर पर नहीं थीं।

उससे बेहतर अवसर उसे फिर नहीं मिल सकता था।

लेकिन...

एक बाधा अभी भी सामने थी—

दक्षायणी।

चक्की उसकी भतीजी थी।

यदि ज़रा-सी भी बात हुई...

तो दक्षायणी तुरंत पद्मावती को सब बता देगी।

और फिर...

सारी योजना धरी की धरी रह जाएगी।

रामन ने निश्चय कर लिया—

सबसे पहले दक्षायणी को रास्ते से हटाना होगा।

झूठा आरोप (भाग-2)

अगले ही दिन नम्बूदिरि ने मुरुगन को बुलवाया और चक्की के प्रति अपनी इच्छा तथा दक्षायणी को लेकर अपनी चिंता उससे साझा की।

मुरुगन चालाकी से मुस्कराया।

"थम्पुरन, इसमें चिंता की कोई बात नहीं," उसने धीमे स्वर में कहा। "दक्षायणी पर चोरी का आरोप लगाइए और उसे इल्लम से निकाल दीजिए। उसके बाद लड़की तक पहुँचना आसान हो जाएगा। मैं देवन से कह दूँगा कि वह चक्की को आपके पास भेज दे।"

मुरुगन ने बड़ी चतुराई से पूरी योजना नम्बूदिरि के सामने रख दी।

और रामन नम्बूदिरि बिना अधिक सोचे-समझे उसकी बातों में आ गया।

इतने में अम्मू स्वयं को रोक न सकी।

"भगी अम्मा," उसने बीच में पूछा, "आपको यह सब इतनी विस्तार से कैसे पता है?"

भगी अम्मा हल्के से मुस्कराईं।

"क्योंकि मुरुगन अपने मालिक का वफ़ादार नहीं था," उन्होंने उत्तर दिया। "उसने भी इस घटना का अपना पक्ष अपने बच्चों और आगे की पीढ़ियों को सुनाया, ठीक वैसे ही जैसे मेरे पूर्वजों ने अपने अनुभव हमें बताए।"

"लोककथा कहती है कि बाद में एक स्थानीय कवि ने इस पूरी घटना को ओट्टमथुल्लल के रूप में पिरो दिया और वर्षों तक उसका मंचन करता रहा।"

"अब वह कला लगभग समाप्त हो चुकी है। मेरी माँ और मैंने बचपन में उसका एक प्रदर्शन देखा था। मेरी परदादी ने तो ऐसे कई प्रदर्शन देखे थे।"

“यहाँ तक कि एक बार उस कलाकार ने त्रावणकोर के महाराजा के सामने भी यह प्रस्तुति दी थी, और प्रसन्न होकर महाराजा ने उसे एक स्वर्ण मुद्रा भेंट की थी।”

जानकी अम्मा ने घड़ी की ओर देखा और कहा,

“भगी, अब कहानी आगे बढ़ाओ। समय बहुत हो रहा है।”

भगी अम्मा ने सिर हिलाया, पुकयिला को एक ओर दबाया और फिर से अतीत के उस संसार में लौट गईं।

“यहीं से,” उन्होंने कहा, “रामन नम्बूदिरि ने अपने जीवन की सबसे बड़ी भूल की... एक ऐसी भूल, जिसने अंततः पूरे इल्लम का भाग्य बदल दिया।”

झूठा आरोप (भाग-3)

अगली सुबह मुरुगन ने अपनी योजना पर काम शुरू कर दिया।

वह चुपचाप दक्षायणी के घर पहुँचा और उसके भाई देवन को अलग ले जाकर बोला,

“थम्पुरन तुम्हारे परिवार से बहुत प्रसन्न हैं। यदि चक्की कुछ दिनों तक इल्लम में आकर थम्पुराटी की सहायता करे, तो तुम्हारे परिवार पर उनकी विशेष कृपा होगी।”

देवन ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने केवल मुरुगन की ओर ध्यान से देखा।

मुरुगन ने आगे कहा,

“और हाँ... दक्षायणी को समझा देना कि वह अपनी ज़ुबान पर लगाम रखे। इन दिनों वह ज़रूरत से ज़्यादा बोलने लगी है।”

देवन को मुरुगन की बातों में कुछ अजीब लगा। वह वर्षों से इल्लम में काम करता आया था और थम्पुरन के स्वभाव को भली-भाँति जानता था।

उधर उसी दिन मुरुगन ने नम्बूदिरि से कहा,

“समय आ गया है। पहले दक्षायणी को हटाइए। उसके बाद कोई बाधा नहीं रहेगी।”

रामन ने सिर हिलाया।

उसने उसी शाम दक्षायणी को इल्लम में बुलाने का आदेश दिया।

दक्षायणी हमेशा की तरह शांत भाव से आई और आदरपूर्वक खड़ी हो गई।

रामन ने कठोर स्वर में पूछा,

“अदुकला से एक चाँदी का पात्र गायब है। क्या तुम उसके बारे में कुछ जानती हो?”

दक्षायणी स्तब्ध रह गई।

“नहीं, थम्पुरन,” उसने दृढ़ स्वर में कहा, “मैंने कुछ नहीं लिया।”

“झूठ!” रामन गरजा।

“तुम्हारे अलावा वहाँ कौन आता है? यदि कल तक वह पात्र नहीं मिला, तो तुम्हें चोर घोषित करके इल्लम से निकाल दिया जाएगा।”

दक्षायणी की आँखों में अपमान के आँसू छलक आए, लेकिन उसने अपने को सँभाला।

“मैं निर्धन हो सकती हूँ,” उसने शांत किंतु दृढ़ स्वर में कहा, “पर चोर नहीं हूँ।”

इतने में पद्मावती वहाँ आ पहुँची।

उन्होंने दोनों की ओर देखा और पूछा,

“क्या बात है?”

रामन ने उत्तर दिया,

“अदुकला से चाँदी का पात्र गायब है। मुझे संदेह है कि इसे इसी ने लिया है।”

पद्मावती ने एक क्षण के लिए दक्षायणी की ओर देखा, फिर रामन की आँखों में आँखें डालकर बोलीं,

“दक्षायणी पर चोरी का आरोप लगाने से पहले अपने घर के आईने में एक बार स्वयं को देख लेना, नम्बूदिरि।”

बरामदे में सन्नाटा छा गया।

दक्षायणी की आँखों से अब आँसू बह निकले।

पद्मावती उसके पास गई, उसके कंधे पर हाथ रखा और बोलीं,

“जब तक मैं इस इल्लम में हूँ, कोई तुम्हें चोर नहीं कह सकता।”

रामन के चेहरे पर झुँझलाहट साफ़ दिखाई दे रही थी।

उसे पहली बार लगा कि उसकी माँ केवल उसका विरोध ही नहीं कर रही थी—वह उसकी हर चाल को पहले से समझ भी रही थी।

झूठा आरोप (भाग-4)

पद्मावती ने उसी समय अदुकला की पूरी तलाशी लेने का आदेश दिया।

दक्षायणी, देवन और घर के अन्य काम करने वाले लोग भी वहाँ आ गए।हर कोना छाना गया, हर बर्तन गिना गया।

कुछ देर बाद वही चाँदी का पात्र रसोई के एक ऊँचे लकड़ी के तख्ते के पीछे से मिल गया, जहाँ उसे गलती से रख दिया गया था।

दक्षायणी ने राहत की साँस ली, पर उसके चेहरे का अपमान अभी भी नहीं धुला था।

रामन नम्बूदिरि कुछ क्षण चुप खड़ा रहा।

उसके पास न तो कोई सफाई थी और न ही क्षमा माँगने का साहस।

पद्मावती ने तीखे स्वर में कहा,

"नम्बूदिरि, झूठा आरोप लगाना भी पाप होता है।जिस स्त्री ने वर्षों तक इस इल्लम की सेवा की, उसकी प्रतिष्ठा तुमने एक क्षण में मिट्टी में मिला दी"।

रामन ने बात बदलने की कोशिश की।

"मुझसे भूल हो गई होगी"।

"भूल?" पद्मावती ने व्यंग्य से कहा।

"जिसे तुम भूल कहते हो, वही किसी गरीब का पूरा जीवन बर्बाद कर सकती है"।

दक्षायणी ने दोनों हाथ जोड़कर कहा,

"थम्पुराटी, यदि आपको मुझ पर विश्वास है, तो मेरे लिए वही पर्याप्त है"।

"विश्वास?" पद्मावती बोलीं।

"विश्वास तो हमें तुम पर पहले से था।आज केवल यह सिद्ध हो गया कि तुम्हारा स्वाभिमान किसी भी सोने-चाँदी से अधिक मूल्यवान है"।

उस दिन के बाद दक्षायणी ने अकेले कभी इल्लम में रुकना स्वीकार नहीं किया।

वह केवल दिन में काम करती और सूर्यास्त से पहले अपने घर लौट जाती।

रामन ने कई बार अवसर खोजने की कोशिश की, पर अब उसके चारों ओर एक अदृश्य दीवार खड़ी हो चुकी थी।

पद्मावती और दक्षायणी दोनों सतर्क थीं।

चक्की भी अब पहले की तरह निश्चिंत होकर इल्लम नहीं आती थी।

जब भी वह आती, पद्मावती उसे अपने पास ही बैठाए रखतीं।

रामन दूर से उसे देखता रहता, पर उसके पास पहुँचने का कोई अवसर नहीं मिलता।

यह पहली बार था कि उसे महसूस हुआ कि इल्लम में रहते हुए भी वह अपने ही घर में असहाय होता जा रहा है।

उसका अधिकार अभी भी था, उसका भय भी था, पर उसका नियंत्रण धीरे-धीरे उसके हाथों से फिसल रहा था।

और यही वह परिवर्तन था, जिसने आने वाली घटनाओं की नींव रखी।

झूठे आरोप के बाद

दक्षायणी के विरुद्ध रची गई योजना असफल हो जाने के बाद भी रामन नम्बूदिरि ने हार नहीं मानी।

उसके मन में चक्की का मोह अब एक जुनून बन चुका था।

वह समझ चुका था कि जब तक पद्मावती इल्लम में हैं, उनके रहते चक्की तक पहुँचना लगभग असंभव है।

उधर पद्मावती भी अपने पुत्र की नीयत को भली-भाँति समझ चुकी थीं।

उन्होंने दक्षायणी को अलग बुलाकर कहा,

“अब से चक्की कभी अकेली इल्लम नहीं आएगी।यदि उसे आना भी पड़े, तो तुम या उसका पिता देवन हमेशा उसके साथ रहोगे”।

दक्षायणी ने गंभीरता से सिर हिलाया।

“थम्पुराटी, मैं भी अब उस पर एक पल के लिए भी नज़र हटाने का साहस नहीं करूँगी”।

उधर रामन ने मुरुगन को फिर बुलाया।

“तुम्हारी योजना विफल हो गई,” उसने झुँझलाकर कहा।

मुरुगन ने शांत स्वर में उत्तर दिया,

“स्वामी, युद्ध एक चाल से नहीं जीते जाते।अवसर फिर आएगा।”

“लेकिन पद्मावती हर समय बीच में आ जाती हैं।”

मुरुगन कुछ देर सोचता रहा।

फिर धीमे स्वर में बोला,

“तो अवसर तब ढूँढ़िए जब पद्मावती इल्लम में न हों।”

रामन ने उसकी ओर देखा।

“वह शायद ही कभी बाहर जाती हैं।”

“हर व्यक्ति की कोई न कोई दिनचर्या होती है,” मुरुगन बोला।

“हमें केवल धैर्य रखना होगा।”

रामन ने कोई उत्तर नहीं दिया, लेकिन उसके मन में एक नया विचार जन्म लेने लगा।

इसी बीच अलप्पुझा में, संकरण नम्बूदिरि के इल्लम में, मीनाक्षी और सरसु का जीवन पहले से कहीं अधिक शांत था।

सरसु के सिर पर फिर से छोटे-छोटे बाल उगने लगे थे।

वह फिर से हँसने लगी थी।

चक्की भी कभी-कभी उससे मिलने आती और दोनों पुरानी तरह बातें करतीं।

संकरण अपनी नातिन को देखकर संतोष का अनुभव करते, किंतु मीनाक्षी की आँखों में अब भी एक गहरी उदासी थी।

वह जानती थीं कि एक दिन उन्हें फिर उसी इल्लम में लौटना होगा, जहाँ अन्याय अभी समाप्त नहीं हुआ था।

उधर कडनाड के उस इल्लम में बाहर से सब कुछ सामान्य दिखाई देता था।

खेतों में काम चल रहा था।

मज़दूरों को अब चार एडंगाज़ी धान मिल रहा था।

गाँव वाले भी धीरे-धीरे पुराने जीवन में लौटने लगे थे।

लेकिन इस शांति के भीतर एक अदृश्य तनाव पल रहा था।

पद्मावती, दक्षायणी और मुरुगन—तीनों अपनी-अपनी योजनाओं में लगे थे।

और रामन नम्बूदिरि…

वह अभी भी चक्की को भूल नहीं पाया था।

उसे यह आभास भी नहीं था कि उसके हर कदम पर कई निगाहें लगी हुई थीं, और उसका अगला निर्णय उसके जीवन की दिशा हमेशा के लिए बदलने वाला था।

झूठा आरोप

उस शाम जब नम्बूदिरि खेतों से लौटे, तो उन्होंने देखा कि दरवाज़े पर रखा किंडी (पीतल का जलपात्र) अपनी जगह पर नहीं था। उन्होंने ऊँची आवाज़ में पद्मावती को पुकारा।

पद्मावती आश्चर्यचकित होकर बाहर आईं। पूरे दिन कोई बाहरी व्यक्ति इल्लम में नहीं आया था। यदि कोई आता, तो पिंजरे में बँधा नाया (कुत्ता) अवश्य भौंकता और आँगन में बँधा चंचल बछड़ा भी शोर मचाता।

नम्बूदिरि तेज़ कदमों से रसोई में पहुँचे और दक्षायणी को बुलाया।

दक्षायणी हाथ पोंछती हुई तुरंत बाहर आई।

“मेरा किंडी कहाँ है?” नम्बूदिरि ने चारों ओर देखते हुए कठोर स्वर में पूछा।

फिर उन्होंने सीधे दक्षायणी की ओर उँगली उठाई।

“अम्मा, यह यहाँ रोज़ आने वाली एकमात्र बाहरी औरत है। यही मेरे किडप्पुमुरि की सफ़ाई भी करती है। किंडी इसी ने चुराया है। शायद छह महीने के चावल के बदले बेच भी दिया होगा।”

पद्मावती कुछ क्षण मौन रहीं।

वह वर्षों से दक्षायणी को जानती थीं। उन्होंने उसे बचपन से बड़ा होते देखा था। कभी उसके बारे में चोरी जैसी बात सुनने की कल्पना भी नहीं की थी।

लेकिन किंडी सचमुच गायब था।

“इसे अभी इसी समय इल्लम से निकाल दो!” नम्बूदिरि गरजे।

“या फिर मुरुगन को इसके माडम (झोपड़ी) की तलाशी लेने भेजता हूँ।नहीं... इसे यहीं रोको।मैं अभी मुरुगन को भेजता हूँ”।

तुरंत मुरुगन को बुलाया गया।

लगभग आधे घंटे बाद वह वापस लौटा।

उसके हाथ में वही किंडी था।

वह उसे विजयी भाव से ऊपर उठाकर बोला,

“स्वामी... मिल गया”।

नम्बूदिरि ने व्यंग्यपूर्ण मुस्कान के साथ कहा,

“देखा, अम्मा? अब तो विश्वास हो गया? अब इसे तुरंत इल्लम से निकाल दीजिए”।

पद्मावती का चेहरा बुझ गया।

वह बिना कुछ कहे अपने कक्ष में चली गई।

दक्षायणी की आँखों से आँसू बह निकले।

वह कुछ कहना चाहती थी, पर शब्द उसके गले में ही अटक गए।

“आज के बाद इस इल्लम में कदम रखने की हिम्मत मत करना!” नम्बूदिरि ने अंतिम आदेश सुनाया।

दक्षायणी सिर झुकाकर बाहर निकल गई।

उसके आँसू केवल अपमान के नहीं थे।

वर्षों की निष्ठा, विश्वास और अपनापन एक झूठे आरोप के नीचे कुचल दिए गए थे।

झूठा आरोप (भाग-2)

दक्षायणी के जाने के बाद नम्बूदिरि पद्मावती के कक्ष में गए।उन्हें लगा कि माँ को समझाना आवश्यक है।

“अम्मा,” उन्होंने शांत स्वर बनाने की कोशिश करते हुए कहा, “चिंता मत कीजिए। मैंने मुरुगन से कह दिया है कि वह अपनी माँ और बहन को इल्लम भेज देगा। वे रसोई का सारा काम संभाल लेंगी।”

पद्मावती ने उनकी ओर देखा भी नहीं।

कुछ देर बाद उन्होंने धीमे स्वर में कहा,

“मैं मीनाक्षी को वापस बुलवा भेजूँगी।”

यह सुनते ही नम्बूदिरि ठिठक गए।

उन्होंने तुरंत स्वयं को सँभालते हुए कहा,

“अरे… उसकी कोई आवश्यकता नहीं है। वे अपने समय पर लौट आएँगी।”

कुछ क्षण सोचकर उन्होंने बात बदल दी।

“अम्मा, आप क्यों न कुछ दिन अपनी बड़ी बहन के यहाँ एट्टुमनूर चली जाएँ? यदि चलना कठिन हो तो मैं पालकी की व्यवस्था करवा देता हूँ।”

“मैं पैदल चली जाऊँगी,” पद्मावती ने शांत स्वर में उत्तर दिया।

“जैसी आपकी इच्छा,” नम्बूदिरि बोले।

“मुरुगन की बहन वल्ली आपके साथ रहेगी। रास्ते भर आपका मन भी लगा रहेगा। और जब तक आप लौटेंगी, उसकी माँ परमेश्वरी रसोई देख लेगी।”

पद्मावती फिर भी मौन रहीं।

उनके मन में केवल दक्षायणी थी।

दक्षायणी की माँ भी वर्षों तक इसी इल्लम में काम करती रही थी।

उन्होंने दक्षायणी को बचपन से जवान होते देखा था।

उस पर चोरी का झूठा आरोप लगाकर निकाल दिया जाना उन्हें भीतर तक तोड़ गया था।

लेकिन नम्बूदिरि भीतर ही भीतर प्रसन्न थे।

उन्हें लग रहा था कि उनकी सबसे बड़ी बाधा हट चुकी है।

अगली सुबह उन्होंने स्वयं यह सुनिश्चित किया कि पद्मावती एट्टुमनूर के लिए निकल जाएँ।

मुरुगन की बातूनी बहन वल्ली उनके साथ थी।

पद्मावती धीरे-धीरे चलती हुई इल्लम से निकल गईं।

उनके जाते ही नम्बूदिरि ने मुरुगन को बुलाया।

“अब जाओ,” उन्होंने धीमे स्वर में कहा।

“देवन से कहो कि वह चक्की को इल्लम भेज दे।”

करीब दो घंटे बाद मुरुगन लौट आया।

“स्वामी,” उसने कहा, “देवन तैयार नहीं है। कार्तियायनी कहती है कि चक्की थीएन्दरी (मासिक धर्म के कारण एकांतवास) में है।”

नम्बूदिरि का चेहरा क्रोध से तमतमा उठा।

“उसे कहो,” उन्होंने दाँत भींचकर कहा,

“यदि लड़की नहीं भेजी गई तो इतना स्तन-कर लगाया जाएगा कि पूरा परिवार बर्बाद हो जाएगा।”

मुरुगन चुपचाप चला गया।

अगले दिन वह फिर लौटा।

“स्वामी, देवन ने वचन दिया है।”

“तीन दिन बाद... जब थीएन्दरी समाप्त हो जाएगी... वह चक्की को भेज देगा।”

नम्बूदिरि अधीर हो उठे।

वह प्रतीक्षा नहीं करना चाहते थे।

लेकिन धार्मिक नियमों का उल्लंघन भी नहीं कर सकते थे।

इसलिए उन्होंने स्वयं को धैर्य रखने के लिए विवश किया।

(क्रमशः — अगला भाग: “वह बच्ची जो सब जानती थी”)

वह बच्ची जो सब जानती थी (भाग–1)

दो दिन बीत गए।

नम्बूदिरि की अधीरता अब बेचैनी में बदल चुकी थी।

मुरुगन हर बार उन्हें यही कहकर शांत करता,

"स्वामी, बस एक दिन और"।

तीसरे दिन सुबह नम्बूदिरि यह सोचकर जागे कि अब केवल एक रात का इंतज़ार शेष है।

उन्होंने स्नान किया, तैयार हुए और परमेश्वरी द्वारा बनाई गई कांजी पीकर खेतों की ओर निकलने ही वाले थे कि मुरुगन हाँफता हुआ दौड़ता आया।

"स्वामी...!"

"अब क्या हुआ?" नम्बूदिरि झुँझलाकर बोले।

"मैंने अभी-अभी मीनाक्षी थम्पुराटी और सरसु को नदी की ओर से इल्लम लौटते देखा है"।

यह सुनते ही नम्बूदिरि जैसे पत्थर के हो गए।

वे बरामदे में रखी कुर्सी पर धम्म से बैठ गए।

उनके मन में एक ही प्रश्न घूम रहा था—

वे अचानक वापस क्यों आ गईं?

लेकिन इससे पहले कि वे कुछ समझ पाते, आँगन में एक और परिचित आकृति दिखाई दी।

वह थे—

संकरण नम्बूदिरि।

मुरुगन उन्हें देख ही नहीं पाया था, क्योंकि वे मीनाक्षी और सरसु से कुछ दूरी आगे चल रहे थे।

संकरण सीधे आकर नम्बूदिरि के पास बैठ गए।

रामन आदरपूर्वक खड़े हो गए।

उधर मीनाक्षी और सरसु बिना किसी से कुछ कहे चुपचाप इल्लम के भीतर चली गईं।

कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद संकरण बोले,

"रामन...

मेरी बेटी स्वयं वापस आने पर अड़ गई।

लेकिन मुझे लगता है कि उसके मन में कोई गहरी बात है।

वह कुछ कहती नहीं।

मैं चिंतित हूँ।

इसीलिए मैं स्वयं उसे छोड़ने आया हूँ"।

उन्होंने गहरी साँस ली।

“सरसु भी ठीक नहीं है।

वह ढंग से खाती तक नहीं।

मेरे दोनों बेटे क्रोध से भरे हुए हैं।

उन्हें भी समझ नहीं आ रहा कि आखिर हुआ क्या है"।

रामन नम्बूदिरि सचमुच उलझ गए।

उन्हें कुछ समझ नहीं आया।

उन्होंने स्वयं को संयत करते हुए उत्तर दिया,

“अच्चन...

मुझे तो किसी बात का ज्ञान नहीं।

यहाँ सब ठीक है"।

संकरण ने उनकी ओर कुछ क्षण गहराई से देखा।

फिर उठ खड़े हुए।

“फसल कटाई का समय है।

मेरे दोनों बेटे खेतों में व्यस्त हैं।

मुझे लौटना होगा"।

रामन ने राहत की साँस ली।

उन्हें लगा कि तूफ़ान टल गया।

लेकिन उन्हें यह आभास भी नहीं था कि असली तूफ़ान अभी इल्लम के भीतर उनका इंतज़ार कर रहा था।

वह बच्ची जो सब जानती थी (भाग-2)

संकरण नम्बूदिरि के जाते ही रामन लगभग दौड़ते हुए इल्लम के भीतर पहुँचे।

उन्होंने सबसे पहले मीनाक्षी को रोका।

“यह सब क्या है?” उन्होंने कठोर स्वर में पूछा।

मीनाक्षी शांत भाव से अपना सामान खोलती रहीं।

उन्होंने न सिर उठाया, न कोई उत्तर दिया।

रामन की झुँझलाहट बढ़ गई।

वह सरसु के पास पहुँचे।

“तुम बताओ, वहाँ क्या हुआ? तुम लोग अचानक लौट क्यों आए?”

सरसु ने उनकी ओर देखा तक नहीं।

उसका चेहरा निर्विकार था।

वह चुपचाप बैठी रही, मानो उसने बोलना ही छोड़ दिया हो।

रामन ने कई बार पूछा, पर न माँ ने उत्तर दिया, न बेटी ने।

असहाय होकर वह इल्लम से निकल पड़े और सीधे खेतों की ओर चल दिए।

उन्होंने देवन और कार्तियायनी को ढूँढ़ना चाहा, लेकिन बताया गया कि दोनों खेत के दूर वाले हिस्से में काम कर रहे हैं।

रामन उलझन में वहीं खड़े रह गए।

उन्होंने अपनी कुर्सी मँगवाई और बैठने ही वाले थे कि दूर से मुरुगन दौड़ता हुआ दिखाई दिया।

“अब क्या हुआ?” रामन ने झुँझलाकर पूछा।

मुरुगन ने जो समाचार दिया, उससे रामन के पैरों तले ज़मीन खिसक गई।

“स्वामी… पद्मावती अम्मा भी लौट आई हैं।

रामन कुछ क्षण तक उसे देखते रह गए।

अब उन्हें समझ ही नहीं आ रहा था कि हो क्या रहा है।

मीनाक्षी लौट आई।

सरसु लौट आई।

और अब पद्मावती भी बिना किसी सूचना के वापस आ गई थीं।

उन्होंने तुरंत पूछा,

"क्या दक्षायणी भी लौट आई?"

मुरुगन ने सिर हिलाया।

"नहीं, स्वामी।

वह गाँव छोड़कर चली गई है।

अपने ही लोग उसे चोर कहने लगे थे।

अपमान सह न सकी"।

रामन कुछ देर मौन रहे।

फिर मुरुगन ने उन्हें ढाढ़स बँधाया।

"चिंता मत कीजिए, स्वामी।

कल सब ठीक हो जाएगा"।

लेकिन रामन का मन आशंकाओं से घिर चुका था।

घर लौटते समय उनके मन में एक ही प्रश्न बार-बार उठ रहा था—

क्या अब भी चक्की को बुलाना उचित होगा?

सब कुछ योजना के विपरीत हो रहा था।

जैसे ही वह इल्लम के निकट पहुँचे, उनके कानों में फिर वही परिचित लय गूँजी—

कलारी के वैथारी।

उनका हृदय अनायास धड़क उठा।

आँगन में मीनाक्षी अपने गुरुक्कल रूप में थीं।

छोटे-छोटे बालों के साथ भी उनका व्यक्तित्व तेजस्वी था।

वह बिना किसी हथियार के थेक्कन कलारी की जटिल मुद्राओं का अभ्यास कर रही थीं।

उनकी छलाँगें, घूमना, संतुलन और गति—सब कुछ इतना सटीक था कि रामन मंत्रमुग्ध भी हुए और भीतर से भयभीत भी।

उन्हें याद आया कि उन्होंने अनेक प्रसिद्ध गुरुक्कलों को वेरुमकाई (निःशस्त्र युद्धकला) का प्रदर्शन करते देखा था।

वे शरीर के मर्मबिंदुओं पर ऐसा प्रहार करते कि सामने वाला तुरंत निष्क्रिय हो जाता।

और फिर उसी कला से उसे स्वस्थ भी कर देते।

संकरण अक्सर गर्व से कहा करते थे,

"मेरी बेटी अकेली कई पुरुषों का सामना कर सकती है"।

आज पहली बार रामन को लगा कि वह कोई अतिशयोक्ति नहीं थी।

पद्मावती एक-एक चाल का वैथारी दे रही थीं।

और सरसु...

वह चेंडा बजा रही थी।

उसके चेहरे की मासूम मुस्कान गायब हो चुकी थी।

अब वहाँ केवल मौन, दृढ़ता और भीतर दबी हुई पीड़ा थी।

रामन को पहली बार लगा कि इस इल्लम में केवल लोग ही नहीं बदले हैं—

पूरा घर उसके विरुद्ध खड़ा हो गया है।

वह बच्ची जो सब जानती थी (भाग-3)

सूर्यास्त होते-होते कलारी का अभ्यास समाप्त हो गया।

आँगन में फिर वही पुराना सन्नाटा लौट आया।

उसी समय थट्टन (सुनार) सरसु के लिए बनवाए गए नए स्वर्ण-कर्णफूल लेकर इल्लम पहुँचा।

यह वही आभूषण थे जिन्हें सरसु के रजस्वला होने के संस्कार के लिए विशेष रूप से तैयार कराया गया था।

लेकिन सरसु अपने कमरे से बाहर ही नहीं आई।

थट्टन काफी देर प्रतीक्षा करता रहा।

अंततः उसने वे कर्णफूल पद्मावती को सौंप दिए और चुपचाप लौट गया।

उस रात भोजन हमेशा की तरह मौन में परोसा गया।

पद्मावती ने सबके सामने भोजन रखा, पर स्वयं एक कौर भी नहीं खाया।

मीनाक्षी और सरसु अपने-अपने कमरों में ही रहीं।

इल्लम में किसी ने कोई बात नहीं की।

केवल बर्तनों की हल्की आवाज़ और दूर कहीं झींगुरों का स्वर सुनाई देता रहा।

अगली सुबह भी वातावरण वैसा ही था।

घर में केवल पद्मावती की गतिविधियाँ दिखाई देती थीं।

वह कभी आँगन बुहारतीं, कभी तुलसी पर जल चढ़ातीं, तो कभी रसोई में कुछ काम करतीं।

नम्बूदिरि के लिए सुबह की कांजी उनके कमरे के बाहर रख दी गई।

उन्होंने चुपचाप उसे पी लिया।

जब वह खेतों के लिए निकले, तब भी न मीनाक्षी दिखाई दीं, न सरसु।

पद्मावती से कुछ पूछने का साहस भी उनमें नहीं था।

उन्हें अच्छी तरह पता था कि अब उनकी माँ का हर उत्तर व्यंग्य से भरा होता है।

उधर खेतों में पहुँचकर भी उनका मन काम में नहीं लगा।

वह बार-बार देवन और कार्तियायनी को खोजते रहे।

दोनों कहीं दिखाई नहीं दिए।

उन्होंने सोचा—

शायद चक्की को बुलाने की योजना कुछ दिनों के लिए टाल देना ही ठीक होगा।

लेकिन मुरुगन ने फिर उन्हें समझाया।

“स्वामी, आप व्यर्थ चिंता कर रहे हैं।

देवन भारी कर के भय से अवश्य अपनी बेटी को भेजेगा”।

रामन का विवेक उनकी वासना के आगे फिर हार गया।

उन्होंने स्वयं को समझाया—

“इतनी मेहनत के बाद अब पीछे हटना मूर्खता होगी”।

उन्होंने मुरुगन को आदेश दिया,

“देवन को आज चार एडंगाज़ी देना।

और उससे कह देना कि आज रात नौ बजे के बाद ही चक्की को इल्लम भेजे”।

मुरुगन ने सिर झुकाकर आदेश स्वीकार किया।

उसे लगा—

अब वह रात आ ही गई है जिसका उसका स्वामी कई दिनों से इंतज़ार कर रहा था।

उसे यह आभास नहीं था कि नियति भी उसी रात उसकी प्रतीक्षा कर रही थी—

लेकिन किसी और उद्देश्य से।

(क्रमशः — अगला भाग: दोपहर का विराम और उस रात की प्रतीक्षा)

वह रात जिसका इंतज़ार था (भाग-4)

भगी अम्मा ने कुछ देर के लिए कथा रोक दी।

लगातार बैठे रहने से उनके पैरों में अकड़न आ गई थी।जनकी अम्मा ने समझ लिया कि अब दोपहर के भोजन का समय हो गया है।

वैसे भी कथा अपने अंतिम चरण में पहुँच चुकी थी।

उन्होंने पार्वती की ओर इशारा किया।

पार्वती ने थामरा और अम्मू को रसोई में बुला लिया।

उस दिन भोजन किसी उत्सव से कम नहीं था।

भगी अम्मा और उनके भतीजे नारायण ने भरपेट कालन, ओलन और प्रदमन का आनंद लिया।

अम्मू भी स्वादिष्ट भोजन खाकर फूली नहीं समा रही थी।

थामरा मुस्कराते हुए उसे खाता देख रही थी।

अचानक उसके मन में चिंता उठी।

“भगी अम्मा,” उसने कहा, “कहानी इतनी बड़ी है... मुझे डर है कि लिखते समय कहीं इसके इतने सारे विवरण भूल न जाऊँ।”

अम्मू ने तुरंत उसका हाथ दबाया।

“मैं भी तो सुन रही हूँ,” उसने हँसते हुए कहा।

“अगर तुम कुछ भूल गई, तो मैं याद दिला दूँगी।”

भगी अम्मा ने पुकयिला गाल में दबाई, आराम से बैठीं और फिर कथा आरम्भ की।

थामरा ने विनती की,

“भगी अम्मा, चाहे जितना समय लगे, कहानी का एक भी हिस्सा मत छोड़िए। मैं इसे पूरा लिखना चाहती हूँ।”

जनकी अम्मा ने अपनी पोती की ओर देखा।

मन में हल्की-सी चिंता थी।

लोककथा का अँधेरा पक्ष अभी बाकी था।

क्या इतनी छोटी लड़की को यह सब सुनना चाहिए?

लेकिन उसी क्षण उनके भीतर एक और भाव जागा।

उनकी पोती केवल कहानी नहीं सुन रही थी।

वह उसे जी रही थी।

और शायद एक दिन उसे शब्द भी देगी।

उधर उसी दिन इल्लम में रामन नम्बूदिरि ने फिर वही पुराना नाटक शुरू किया।

वह रसोई के आसपास घूमते हुए बार-बार खाँसने लगे।

“लगता है जुकाम हो गया है...”

“गला भी बैठ रहा है...”

“शायद आज जल्दी सो जाना चाहिए...”

लेकिन इस बार किसी ने उनकी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया।

न पद्मावती ने।

न मीनाक्षी ने।

न सरसु ने।

रात का भोजन समय से उनके कमरे के बाहर रख दिया गया।

उन्होंने चुपचाप भोजन किया।

इल्लम में दीपक सामान्य से भी पहले मंद कर दिए गए।

चारों ओर गहरा सन्नाटा छा गया।

मुरुगन जाते समय विश्वास दिला चुका था,

“स्वामी, चिंता मत कीजिए।

आज रात नौ बजे के बाद देवन स्वयं चक्की को लेकर आएगा'।

रामन नम्बूदिरि अपने कमरे की खिड़की के पास बैठ गए।

उनकी दृष्टि बार-बार पिछले दरवाज़े पर टिक जाती।

हर आहट पर उन्हें लगता—

वह आ गई।

लेकिन कोई नहीं आया।

समय धीरे-धीरे बीतता गया।

रात गहराती गई।

चाँद पश्चिम की ओर झुक गया।

फिर भी इल्लम के पिछवाड़े कोई कदमों की आहट नहीं सुनाई दी।

प्रतीक्षा धीरे-धीरे अधीरता में बदल गई।

अधीरता क्रोध में।

और अंततः थकान में।

भोर होने से कुछ पहले रामन नम्बूदिरि उसी प्रतीक्षा में बैठे-बैठे सो गए।

अगली सुबह भी इल्लम वैसा ही शांत था।

पद्मावती अकेली अपने दैनिक कार्यों में लगी हुई थीं।

जैसे पिछली रात कुछ हुआ ही न हो।

चक्की की प्रतीक्षा (भाग–5)

दो सप्ताह बीत गए।

चक्की का कहीं कोई पता नहीं था।

रामन नम्बूदिरि का धैर्य अब पूरी तरह टूट चुका था।

वह पहले से अधिक चिड़चिड़े और क्रोधित रहने लगे।

खेतों में भी उनका मन नहीं लगता था।

वह छोटी-छोटी बातों पर मज़दूरों को डाँट देते और फिर देर तक चुपचाप बैठे रहते।

तभी एक दिन मुरुगन तेज़ी से उनके पास आया।

उसके चेहरे पर इस बार चिंता नहीं, उत्साह था।

“स्वामी,” उसने धीमे स्वर में कहा, “अच्छी खबर है”।

रामन ने उत्सुकता से उसकी ओर देखा।

“देवन और उसका परिवार वापस गाँव लौट आए हैं। वे पास के गाँव में एक रिश्तेदार के विवाह में गए थे।”

रामन की आँखों में फिर वही पुरानी चमक लौट आई।

उन्होंने मन-ही-मन निश्चय किया—

देवन ने उनका आदेश टालने का साहस किया था।

अब उसे इसका दण्ड अवश्य मिलेगा।

यदि वह उसके हाथ लग गया, तो उसे अच्छी तरह सबक सिखाया जाएगा।

उस दिन लगभग दस बजे, जब रामन खेतों के लिए निकलने की तैयारी कर रहे थे, उनकी दृष्टि फिर आँगन की ओर चली गई।

मीनाक्षी अपने गुरुक्कल रूप में कलारी का अभ्यास कर रही थीं।

उनकी देह हवा की तरह हल्की और बिजली की तरह तीव्र गति से चल रही थी।

पद्मावती पूरे आत्मविश्वास के साथ वैथारी (कलारी की लयबद्ध आज्ञाएँ) दे रही थीं।

और सरसु...

वह पूरे एकाग्र भाव से चेंडा बजा रही थी।

ढोल की गंभीर लय मीनाक्षी की प्रत्येक छलाँग, प्रत्येक प्रहार और प्रत्येक मुद्रा को गति दे रही थी।

रामन कुछ क्षण वहीं खड़े रह गए।

उनकी दृष्टि मीनाक्षी पर टिक गई।

उन्हें याद आया कि उन्होंने जीवन में अनेक प्रसिद्ध गुरुक्कलों को वेरुमकाई (निःशस्त्र युद्धकला) का प्रदर्शन करते देखा था।

वे केवल हाथों से प्रतिद्वंद्वी को निष्क्रिय कर देते थे।

शरीर के मर्म-बिंदुओं पर ऐसा सटीक प्रहार करते कि सामने वाला तत्काल गिर पड़ता।

और आवश्यकता पड़ने पर उसी विद्या से उसे पुनः स्वस्थ भी कर देते।

संकरण अक्सर गर्व से कहा करते थे,

“मेरी बेटी अकेली कई पुरुषों का सामना कर सकती है। वेरुमकाई में उसका कोई मुकाबला नहीं।”

आज पहली बार रामन को उस बात का वास्तविक अर्थ समझ आने लगा।

मीनाक्षी केवल अभ्यास नहीं कर रही थीं—

वह स्वयं को भीतर और बाहर, दोनों स्तरों पर मज़बूत बना रही थीं।

पद्मावती की आवाज़ स्थिर थी।

सरसु के चेंडा की थाप अटल थी।

और उस लय के बीच मीनाक्षी की प्रत्येक गति मानो एक मौन घोषणा थी—

अब वह पहले वाली मीनाक्षी नहीं रही।

रामन के भीतर एक अनजाना भय धीरे-धीरे आकार लेने लगा।

उन्हें पहली बार लगा कि इस इल्लम में शक्ति का संतुलन बदल रहा है।

इल्लम की ओर (भाग-6)

भगी अम्मा ने अचानक कथा बीच में रोक दी और दोनों लड़कियों की ओर देखा।

“बेटियों,” उन्होंने शांत स्वर में कहा, “कलारी केवल लड़ना नहीं सिखाती। वह शरीर को संतुलन, मन को धैर्य और आत्मा को अडिग बनाना सिखाती है। यही विद्या मीनाक्षी को मीनाक्षी गुरुक्कल बनाती है।”

उन्होंने कुछ क्षण रुककर आगे कहा,

“अपने समय की किसी भी स्त्री से अलग थी वह। उस युग में, जब स्त्रियों को घर की चौखट से बाहर झाँकने की भी अनुमति नहीं थी, उसने कलारी को अपना जीवन बना लिया। वह हर अन्याय का उत्तर शब्दों से नहीं देती थी। लेकिन जब वह निर्णय लेती, तब उसे रोक पाना किसी के बस की बात नहीं था।”

थामरा मंत्रमुग्ध होकर सुन रही थी।

उसने अपनी अप्पाची की ओर देखा और उत्साह से बोली,

“अप्पाची, मैं भी कलारी सीखना चाहती हूँ। बिल्कुल मीनाक्षी गुरुक्कल की तरह। और आगे चलकर आयुर्वेद की वैद्य बनना चाहती हूँ।”

जनकी अम्मा की आँखें प्रसन्नता से चमक उठीं।

“ऐसा ही होगा,” उन्होंने स्नेह से कहा।

“पढ़ाई पूरी करके केरल लौट आना। मैं तुम्हारे लिए एक अच्छे गुरुक्कल की व्यवस्था करूँगी।”

अम्मू भी खुशी से उछल पड़ी।

“अगर मुझे भी सीखने मिले तो कितना अच्छा हो!”

भगी अम्मा मुस्करा दीं।

उन्हें लगा, मीनाक्षी की कथा केवल सुनाई नहीं जा रही थी—वह दो नई बच्चियों के भीतर कोई बीज भी बो रही थी।

तभी जनकी अम्मा ने कहा,

“भगी, कहानी का अंत सुनाने से पहले बच्चों को इल्लम दिखा लाओ। जब थामरा अपनी आँखों से उस स्थान को देख लेगी, तो वह इस पूरी कथा को और भी जीवंत ढंग से लिख सकेगी।”

अम्मू ने खुशी से ताली बजाई।

थामरा तो दौड़कर अपनी अप्पाची के गले से लिपट गई।

“अप्पाची! मैं यह उपहार कभी नहीं भूलूँगी।”

जनकी अम्मा मुस्करा दीं।

भावुक होकर उन्होंने बात बदल दी।

“बस, आज के लिए यहीं तक। कल सुबह नाश्ते के बाद तुम सब भगी अम्मा के घर पहुँच जाना। वहीं से इल्लम चलेंगे।”

उस रात थामरा को देर तक नींद नहीं आई।

अब तक वह केवल कहानी सुन रही थी।

अगले दिन वह उसी इल्लम में कदम रखने वाली थी—

जहाँ मीनाक्षी गुरुक्कल ने कलारी का अभ्यास किया था,

जहाँ पद्मावती ने अपने मौन विद्रोह की शुरुआत की थी,

जहाँ कुइल के आँसू गिरे थे,

और जहाँ से एक ऐसा इतिहास जन्मा था जिसे लोग आज भी 'भूतहा इल्लम' कहकर याद करते थे।

उसके मन में भय भी था, उत्सुकता भी।

उसे ऐसा लग रहा था मानो स्वयं वह पुराना इल्लम वर्षों से उसकी प्रतीक्षा कर रहा हो।

(क्रमशः — अगला भाग: "जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं")

जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं (भाग-7)

अगली सुबह मानो आई नहीं, धीरे-धीरे धरती पर उतर आई।

आकाश बादलों से भरा था।

बारिश अभी शुरू नहीं हुई थी, लेकिन हवा में भीगी पत्तियों की गंध तैर रही थी।

पेड़ों पर बैठे पक्षी भी जैसे धीमे स्वर में बात कर रहे थे।

थामरा उस दिन माँ के जगाने से पहले ही उठ बैठी।

आज वह केवल किसी पुराने घर को देखने नहीं जा रही थी।

उसे ऐसा लग रहा था मानो कोई अदृश्य पुकार उसे वहाँ बुला रही हो।

अम्मू भी नाश्ते से पहले ही दौड़ती हुई आ पहुँची।

उसके चेहरे पर उत्साह साफ झलक रहा था।

लेकिन जब उसने धीमे से कहा—

"आज हम इल्लम जाएँगे..."

तो उसकी आवाज़ फुसफुसाहट से अधिक नहीं थी।

मानो कहीं वह घर उनका नाम सुनकर जाग न जाए।

लगभग दस बजे वे सब भगी अम्मा के घर पहुँचे।

भगी अम्मा अपनी लाठी के सहारे बरामदे में उनका इंतज़ार कर रही थीं।

गोपाल चेट्टन भी आज असामान्य रूप से शांत दिखाई दे रहा था।

पार्वती अपने साथ पानी, केले और गुड़ लाई थीं।

जनकी अम्मा ने एक छोटे केले के पत्ते में हल्दी की चुटकी और कुछ तुलसी के पत्ते बाँधकर भी भेजे थे।

उन्होंने मुस्कराकर कहा था—

"यह भूत-प्रेत के लिए नहीं...

पुरानी जगहों का सम्मान करना चाहिए।"

थामरा ने वह छोटी-सी पोटली अपने ब्लाउज़ की गाँठ में सावधानी से रख ली।

उसे लगा जैसे वह हल्की-सी गर्माहट दे रही हो।

सब लोग नाले को पार करके धान के खेतों की ओर बढ़े।

दूर-दूर तक फैली हरियाली के बीच कहीं वह पुराना इल्लम छिपा हुआ था।

लेकिन उस हिस्से के खेत बाकी खेतों जैसे नहीं लग रहे थे।

पुरानी मेड़ें ऊँची घास में दब चुकी थीं।

फिर भी घास उनके पैरों के आगे स्वयं हटती चली जाती थी,

मानो उसे अभी भी आने-जाने वालों के कदम याद हों।

केले के फटे हुए पत्ते हवा में ऐसे लहरा रहे थे,

जैसे किसी बीते युद्ध के फटे हुए ध्वज।

नारियल के ऊँचे वृक्ष एक-दूसरे की ओर झुक आए थे।

उनकी चोटियाँ आपस में मिलकर ऐसा आभास दे रही थीं मानो कोई विशाल छत बन गई हो।

लताएँ पत्थरों, पेड़ों और दीवारों पर इस तरह फैली थीं,

मानो वर्षों से किसी भूले हुए अतीत को अपनी बाँहों में समेटे हुए हों।

तभी कहीं भीतर से एक बार कोयल की आवाज़ सुनाई दी।

फिर चारों ओर ऐसा सन्नाटा छा गया,

मानो किसी ने उसे भी चुप रहने की चेतावनी दे दी हो।

कुछ ही कदम आगे बढ़ते ही इल्लम दिखाई दिया।

थामरा अनायास रुक गई।

दूर से वह केवल एक उजड़ा हुआ, जर्जर पत्थर का मकान लगता था।

लेकिन पास आकर...

उसने कुछ और ही महसूस किया।

उसे लगा—

यह घर मरा नहीं था।

यह जाग रहा था।

टूटी हुई टाइलों वाली छत किसी थके हुए शरीर की तरह ऊपर-नीचे होती प्रतीत हो रही थी।

सामने का लंबा बरामदा किसी ऐसे मुँह जैसा लग रहा था

जो बोलना भूल चुका हो,

लेकिन याद रखना नहीं।

दूर कोने में पुराना कुआँ खड़ा था।

उसकी पत्थर की मेड़ काई से ढकी हुई थी।

अंदर का पानी बिल्कुल काला और स्थिर दिखाई दे रहा था।

हल्की हवा चली।

सूखे पत्ते एक साथ उठे और फिर धीरे से नीचे बैठ गए।

उनकी सरसराहट बिल्कुल वैसी लगी,

जैसे किसी घर में पुरुषों के आते ही स्त्रियाँ धीमे स्वर में बातें करने लगती हैं।

भगी अम्मा ने धीमे से कहा—

"दौड़ना मत...

और ज़ोर से हँसना भी मत"।

अम्मू ने तुरंत थामरा का हाथ कसकर पकड़ लिया।

“मैं डर नहीं रही...”

उसने कहा।

लेकिन उसकी आवाज़ बता रही थी कि वह स्वयं अपने शद्बों पर विश्वास नहीं कर पा रही थी।

थामरा भी काँप रही थी।

लेकिन यह केवल भय नहीं था।

उसे लग रहा था कि यह इल्लम उसकी जिज्ञासा को पहचान चुका है...

और उसे अपने भीतर बुला रहा है।

जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं (भाग-8)

वे सब पुराने पगडंडी वाले रास्ते से इल्लम के भीतर पहुँचे।

ज़मीन गीली पत्तियों से ढकी हुई थी।

लेकिन उन पत्तियों के नीचे थामरा को कुछ और महसूस हुआ।

जैसे कभी यह आँगन असंख्य कदमों की आहट से भरा रहता हो।

उसे लगा मानो आज भी उन पैरों की स्मृतियाँ मिट्टी में जीवित हों—

रसोई की ओर जाती दक्षायनी...

आँगन में खेलती सरसु...

बछड़े के पीछे भागती छोटी-सी बच्ची...

और एक कमरे से दूसरे कमरे तक शांत कदमों से चलती मीनाक्षी।

अचानक थामरा की नज़र मिट्टी पर पड़ी।

वहाँ छोटे-छोटे नंगे पैरों के ताज़ा निशान दिखाई दे रहे थे।

ऐसे जैसे कोई कुछ ही क्षण पहले वहाँ से गुज़रा हो।

वह झुककर उन्हें ध्यान से देखने लगी।

पीछे से गोपाल चेट्टन की आवाज़ आई—

“कुछ मत छूना”।

थामरा ने जैसे ही सिर उठाया...

वे पदचिह्न गायब हो चुके थे।

मानो कभी थे ही नहीं।

अम्मू ने उसका हाथ और कसकर पकड़ लिया।

वे बरामदे में पहुँचे।

अंदर बाहर की तुलना में कहीं अधिक ठंडक थी।

टूटी हुई टाइलों के बीच से छनकर आती धूप फर्श पर लंबी धारियों की तरह बिछी हुई थी।

हवा में एक अजीब-सी मिली-जुली गंध थी—

पुरानी लकड़ी...

गीला पत्थर...

औषधीय तेल...

धुएँ की हल्की महक...

और कहीं बहुत भीतर से आती पके कटहल की मीठी सुगंध।

थामरा ने आँखें बंद कर लीं।

उसे लगा जैसे सूनी रसोई अचानक जीवित हो उठी हो।

बड़े-बड़े पीसने वाले पत्थर घूम रहे हों।

पीतल के बर्तन चमक रहे हों।

कांजी उबल रही हो।

एक ओर केले के गुच्छे रखे हों।

और रसोई में काम करती स्त्रियाँ धीमे स्वर में बातें कर रही हों—

ऐसे कि पुरुषों को लगे, सब कुछ वैसा ही है जैसा वे चाहते हैं।

पार्वती अचानक रुक गईं।

“तुम लोगों को भी यह गंध आ रही है?”

उन्होंने धीमे स्वर में पूछा।

भगी अम्मा ने बिना आश्चर्य के सिर हिलाया।

“कुछ घर...

कुछ भी नहीं भूलते।

रसोई भी नहीं।”

वे धीरे-धीरे आँगन की ओर बढ़े।

चारों ओर जंगली घास उग आई थी।

लेकिन बीच का हिस्सा बिल्कुल साफ़ था।

ऐसा लग रहा था,

मानो किसी ने उसी सुबह झाड़ू लगाई हो।

भगी अम्मा ने अपनी लाठी से उस स्थान की ओर इशारा किया।

उनकी आवाज़ फुसफुसाहट में बदल गई।

“यहीं..

यहीं मीनाक्षी अभ्यास करती थीं।”

जैसे ही उनके मुँह से यह शद्ब निकले—

अचानक वातावरण बदल गया।

एक तीखी, गूँजती हुई आवाज़ हवा में तैर उठी।

उसके तुरंत बाद भारी, गहरी ध्वनि सुनाई दी,

जिसकी कंपन सीधे सीने तक महसूस हुई।

भगी अम्मा काँप उठीं।

उन्होंने ऊपर की ओर इशारा करते हुए फुसफुसाकर कहा—

“चेंडा...!”

अम्मू ने डरकर थामरा को कसकर पकड़ लिया।

गोपाल चेट्टन तेजी से चारों ओर देखने लगे।

लेकिन कहीं कोई नहीं था।

केवल पेड़ों की शाखाएँ थीं,

जो बिना हवा के भी धीमे-धीमे झूल रही थीं।

थामरा अनायास उस खुले स्थान के बीचों-बीच चली गई।

पहले उसे अपने ऊपर हँसी आई।

लेकिन अगले ही क्षण...

उसे लगा जैसे हवा अचानक बदल गई हो।

उसके शरीर से गर्मी उतर गई।

उसकी आँखों के सामने जंगली घास हटने लगी।

टूटी हुई दीवारें फिर से सीधी खड़ी हो गईं।

पूरा आँगन जीवित हो उठा।

धरती की गहराइयों से आती हुई चेंडा की लय उसके कानों में गूँजने लगी।

उसे लगा—

एक आकृति बिजली की गति से हवा में उछली।

उसके हाथ में ओट्टक्कोल था।

वह अत्यंत तेज़ी से प्रहार कर रही थी।

जब थामरा ने पलटकर देखा—

वहाँ कुछ भी नहीं था।

केवल धूप की एक किरण थी,

जिसमें छोटे-छोटे कीट ऐसे उड़ रहे थे,

मानो हवा में चिंगारियाँ तैर रही हों।

थामरा के होंठ अपने-आप हिल उठे।

“...मीनाक्षी गुरुक्कल...”

उसने धीमे से कहा।

भगी अम्मा ने तुरंत उसकी ओर देखा।

लेकिन इस बार उन्होंने उसे टोका नहीं।

उन्होंने आँखें बंद कीं

और बहुत धीमे स्वर में कुछ बुदबुदाईं।

ऐसा लगा,

मानो वह किसी अदृश्य उपस्थिति का अभिवादन कर रही हों।

उसी क्षण...

थामरा के भीतर कुछ बदल गया।

यह डर नहीं था।

यह उस शक्ति का अनुभव था,

जो अन्याय सहकर भी टूटती नहीं—

बल्कि और अधिक दृढ़ होकर खड़ी हो जाती है।

जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं (भाग-9)

उसी क्षण थामरा के भीतर एक अनजानी अग्नि जल उठी।

वह भय नहीं था।

वह साहस भी नहीं था।

वह कुछ और था—

मानो उन सभी स्त्रियों की मौन शक्ति, जिन्होंने अपमान सहा, संघर्ष किया और फिर भी झुकने से इनकार कर दिया था, उसकी आत्मा को स्पर्श कर गई हो।

उसे अचानक अपनी स्कूल की शिक्षिका मिस टेरेसा याद आ गईं।

पिता की मृत्यु और माँ के गहरे दुःख के बाद जब वह स्वयं भीतर से टूट गई थी, तब मिस टेरेसा ने उसके दोनों कंधों को मजबूती से पकड़कर कहा था—

“बेटी, जीवन की कठिनाइयों से बाहर निकलने का कोई छोटा रास्ता नहीं होता।न उनके ऊपर से, न उनके नीचे से।उनसे होकर ही गुज़रना पड़ता है।और जो उनसे होकर निकलता है, वही पहले जैसा नहीं रहता”।

आज...

इल्लम के उस सूने आँगन में खड़ी थामरा को उन शब्दों का अर्थ पहली बार पूरी तरह समझ में आया।

मीनाक्षी गुज़र चुकी थीं।

पद्मावती भी गुज़र चुकी थीं।

इल्लम की हर स्त्री उस अग्निपरीक्षा से होकर निकली थी।

और शायद...

एक दिन उसे भी अपने जीवन की अग्निपरीक्षा से होकर गुजरना होगा।

तभी पार्वती की आवाज़ ने उस सम्मोहन को तोड़ा।

“बस बहुत हुआ,” उन्होंने सामान्य बनने की कोशिश करते हुए कहा।

“चलो, बाकी घर भी देख लें।बारिश कभी भी शुरू हो सकती है”।

वे लोग आँगन पार करके इल्लम के उस हिस्से की ओर बढ़े जहाँ थम्पुरन का किडप्पुमुरी था।

जैसे ही वे उस ओर पहुँचे,

पूरा वातावरण बदल गया।

आँगन में जहाँ साहस की स्मृति थी,

वहाँ इस हिस्से में भय, दमन और सत्ता का बोझ महसूस हो रहा था।

हवा यहाँ फुसफुसाती नहीं थी।

वह सीने पर दबाव डालती थी।

कमरे का टूटा हुआ दरवाज़ा किसी ऐसे घाव की तरह दिखाई दे रहा था,

जो वर्षों बाद भी भर नहीं पाया था।

अंदर दो विशाल आम की लकड़ी के पलंग थे।

एक पूरी तरह सड़ चुका था।

उसके पाए नमी में गलकर झुक गए थे।

दूसरा अब भी खड़ा था—

काला,

मजबूत,

और अजीब ढंग से जीवित-सा।

मानो अब भी किसी की प्रतीक्षा कर रहा हो।

थामरा की दृष्टि उसी पर टिक गई।

क्या यही वह पलंग था...

जिस पर चोरियानम की पत्तियाँ बिछाई गई थीं?

क्या इसी पर बैठकर नम्बूदिरि ने अपने जीवन की सबसे बड़ी पराजय का स्वाद चखा था?

कमरे के पीछे वाला दरवाज़ा आधा खुला हुआ था।

उसी रास्ते से...

कभी कुइल आई थी।

उसी रास्ते से चक्की को बुलाने की योजना बनाई गई थी।

और उसी रास्ते से न जाने कितनी स्त्रियाँ इस इल्लम में लाई गई थीं।

अचानक एक छिपकली दीवार पर दौड़ गई।

अम्मू चीख पड़ी।

अगले ही क्षण उसे अपनी ही घबराहट पर हँसी आ गई।

लेकिन वह हँसी भी कुछ ही पल टिक सकी।

कमरे के फर्श पर थामरा की नज़र एक छोटी-सी लाल वस्तु पर पड़ी।

वह झुककर उसे उठा लाई।

वह लाल काँच का टूटा हुआ टुकड़ा था।

धूप उस पर पड़ते ही वह खून की बूँद की तरह चमक उठा।

“उसे वहीं रख दो।”

भगी अम्मा की आवाज़ इस बार पहले से कहीं अधिक गंभीर थी।

“कुछ चीज़ें घर की होती हैं।

उन्हें घर में ही रहने दो।”

थामरा ने धीरे से अपनी हथेली खोली।

जैसे ही वह लाल टुकड़ा नीचे गिरा...

एक क्षण के लिए वह सुनहरे रंग में बदल गया।

और उसी पल उसके मन में वैद्य की छवि कौंध गई—

पारा...

रसशास्त्र...

मकरध्वज...

जीवन देने वाली औषधि...

और उसी के भीतर छिपा हुआ मृत्यु का विष।

अगले ही पल वह काँच का टुकड़ा धूल में समा गया।

ऐसा लगा,

मानो इल्लम ने उसे फिर अपने भीतर छिपा लिया हो।

तभी...

कुएँ की दिशा से एक लंबी, गहरी कराह सुनाई दी।

न पानी के गिरने की आवाज़...

न पत्थर के खिसकने की...

बल्कि ठीक वैसी पुकार—

जैसी कभी इल्लम का बछड़ा अपनी माँ को पुकारता था।

सबके कदम वहीं थम गए।

भगी अम्मा ने भी पहली बार अपने गाल में दबा हुआ पुकयिला चबाना बंद कर दिया।

आवाज़ फिर आई।

इस बार और भी धीमी...

और कहीं अधिक गहरी।

पेड़ों की शाखाएँ हिल उठीं,

हालाँकि हवा बिल्कुल नहीं चल रही थी।

पार्वती ने तुरंत थामरा की कलाई पकड़ ली।

"अब हम यहाँ से चल रहे हैं,"

उन्होंने दृढ़ स्वर में कहा।

लेकिन थामरा की नज़र अब भी उसी कुएँ पर टिकी हुई थी।

उसे लग रहा था...

कहानी अभी पूरी नहीं हुई है।

उस घर के पास अभी भी कुछ कहने को शेष है।

जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं (भाग–10)

लेकिन थामरा के कदम रुकने का नाम नहीं ले रहे थे।

उसे लगा मानो वह कुआँ उसे अपनी ओर बुला रहा हो।

जैसे पिछले कई दिनों से भगी अम्मा की कहानी उसे खींचती चली आई थी,

वैसे ही अब उस कुएँ का मौन उसे पुकार रहा था।

अम्मू भी उसके पीछे-पीछे चली।

डरी हुई थी,

लेकिन उसे अकेला छोड़ने का साहस भी नहीं था।

कुएँ की पत्थर की मेड़ काई से पूरी तरह ढकी हुई थी।

थामरा ने सावधानी से उसके किनारे पर हाथ रखा।

पत्थर बर्फ की तरह ठंडा था।

वह धीरे-धीरे झुककर भीतर देखने लगी।

बहुत नीचे...

गहरा, स्थिर और काला पानी दिखाई दे रहा था।

पहले उसे अपना ही चेहरा नज़र आया।

बारिश की पहली बूँदें पानी की सतह पर गिरने लगी थीं,

जिससे उसका प्रतिबिंब हल्का-सा काँप रहा था।

लेकिन अगले ही क्षण...

पानी की सतह बदलने लगी।

उसके पीछे...

तीन आकृतियाँ उभर आईं।

एक वृद्धा।

एक युवती।

और एक छोटी लड़की।

तीनों के सिर मुंडे हुए थे।

तीनों शांत थीं।

लेकिन वे थामरा की ओर नहीं देख रही थीं।

उनकी दृष्टि इल्लम के उस हिस्से की ओर थी,

जहाँ थम्पुरन का किडप्पुमुरी था।

जहाँ से उनके जीवन का सबसे बड़ा अपमान शुरू हुआ था।

थामरा भय से पीछे हट गई।

उसके मुँह से एक तीखी चीख निकल गई।

अम्मू भी ज़ोर से चिल्ला उठी।

गोपाल चेट्टन तुरंत उनकी ओर दौड़े।

लेकिन भगी अम्मा ने अपनी लाठी आगे बढ़ाकर उन्हें रोक दिया।

"कुएँ के पास भीड़ मत लगाओ..."

उन्होंने धीमे लेकिन दृढ़ स्वर में कहा।

उनका चेहरा पीला पड़ चुका था।

कुछ क्षण तक वह स्वयं भी उस कुएँ को देखती रहीं।

फिर बहुत धीमे स्वर में बोलीं—

"यह इल्लम...

हर किसी को अपना अतीत नहीं दिखाता।"

सब लोग स्तब्ध होकर उनकी ओर देखने लगे।

भगी अम्मा ने थामरा की ओर देखा।

“आज इसने तुम्हें चुना है”।

“कहते हैं...

यह घर केवल उसी को अपनी स्मृतियाँ दिखाता है,

जो उसके दुःख से मुँह न मोड़े”।

“आज...

इसने तुम्हें उन स्त्रियों की स्मृति सौंप दी है”।

“अब उनकी चुप्पी...

तुम्हारी ज़िम्मेदारी है”।

पार्वती काँप उठीं।

उन्होंने बिना कुछ कहे थामरा का हाथ कसकर पकड़ लिया।

उसी समय...

मानो किसी ने अदृश्य जादू का पर्दा थोड़ा-सा हटा दिया हो।

छत की टूटी हुई टाइलों के बीच से एक मैना अचानक फड़फड़ाती हुई बाहर निकली।

वह तेज़ आवाज़ में उन्हें डाँटती हुई दूर उड़ गई।

और तभी...

बरसात शुरू हो गई।

पहले कुछ मोटी-मोटी बूँदें।

फिर देखते ही देखते मूसलाधार वर्षा।

बारिश का पानी टूटी हुई छत से धाराओं की तरह बहने लगा।

ऐसा लग रहा था,

मानो वर्षों से रोके हुए आँसू आखिरकार इस घर की आँखों से निकल पड़े हों।

भीगे हुए पत्थरों से धुएँ, तेल, गीली मिट्टी और पुराने समय की मिली-जुली गंध उठने लगी।

लड़कियाँ दौड़ पड़ीं।

उनकी हँसी में अब डर भी था,

राहत भी,

और एक अनकही उत्तेजना भी।

गोपाल चेट्टन ने भगी अम्मा का हाथ थाम लिया।

पार्वती पीछे से उन्हें आवाज़ देती रहीं—

"धीरे भागो... फिसल जाओगी...!"

लेकिन दोनों लड़कियाँ अब रुकने वाली नहीं थीं।

उन्हें लग रहा था,

जैसे पूरा इल्लम बारिश की ओट से उन्हें जाते हुए देख रहा हो।

जैसे किसी ने बहुत वर्षों बाद उसकी कहानी सुनी हो।

और अब वह निश्चिंत होकर उन्हें विदा कर रहा हो।

जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं (भाग-11)

इल्लम की सीमा पार करने से पहले थामरा एक बार फिर रुक गई।

न जाने क्यों...

उसका मन आख़िरी बार पीछे मुड़कर देखने को हुआ।

उसने धीरे-धीरे थम्पुरन के किडप्पुमुरी की ओर देखा।

बरसात अब तेज़ हो चुकी थी।

पूरा आँगन भीग रहा था।

पत्थरों पर पानी की धाराएँ बह रही थीं।

लेकिन आश्चर्य...

थम्पुरन के कमरे के सामने वाला बरामदा लगभग सूखा था।

मानो बादलों ने भी उस हिस्से को छूने से इंकार कर दिया हो।

बरामदे में वही पुरानी लकड़ी की कुर्सी रखी थी।

वही कुर्सी,

जिस पर बैठकर थम्पुरन कभी अपने खेतों, अपने मज़दूरों और पूरे गाँव पर अधिकार जताता था।

दोनों बाँहें अब भी बाहर की ओर फैली हुई थीं,

जैसे आज भी किसी को आदेश देने की प्रतीक्षा कर रही हों।

एक पाया काई में धँस चुका था,

जिससे कुर्सी हल्की-सी तिरछी दिखाई दे रही थी।

फिर भी...

वह टूटी हुई नहीं लग रही थी।

बल्कि...

इंतज़ार करती हुई।

टप...

टप...

टप...

छत से गिरती पानी की बूँदें उसके पीछे पत्थर पर पड़ रही थीं।

उनकी लय बिल्कुल वैसी थी,

जैसी कभी थम्पुरन की छड़ी की आवाज़—

जो मेड़ों पर,

पत्थरों पर,

और कभी-कभी इंसानों के शरीर पर भी पड़ती थी।

उसी क्षण...

थामरा की साँस अटक गई।

कुर्सी बहुत हल्के से हिली।

सिर्फ़ एक बार।

इतनी हल्की कि कोई और शायद उसे हवा का झोंका समझ ले।

लेकिन हवा चल ही नहीं रही थी।

अम्मू की उँगलियाँ थामरा की कलाई में धँस गईं।

दोनों बिना पलक झपकाए उस ओर देखने लगीं।

बरामदे की भीगी हुई धूल पर एक ताज़ी लकीर उभर आई।

ऐसी,

मानो किसी ने अभी-अभी अपनी छड़ी का सिरा घसीटते हुए वहाँ से गुज़रा हो।

और तभी...

कमरे के भीतर से एक सूखी खाँसी सुनाई दी।

एक बार...

फिर दूसरी बार...

और फिर तीसरी बार...

तीनों खाँसियाँ उतनी ही स्पष्ट थीं,

जितनी भगी अम्मा ने अपनी कहानी में सुनाई थीं।

भगी अम्मा का चेहरा एकदम बदल गया।

उनकी आँखों की चमक बुझ गई।

उन्होंने बहुत धीमे,

लेकिन कठोर स्वर में कहा—

“बस...”

इस बार उनकी आवाज़ में कहानी सुनाने वाला रस नहीं था।

उसमें केवल चेतावनी थी।

उन्होंने लाठी ज़मीन पर टिकाई और बोलीं—

“कुछ स्थान...

अपने स्वामी को कभी पूरी तरह नहीं भूलते।”

“यह घर उसे स्वीकार नहीं करता...

लेकिन उसकी स्मृति अभी भी यहाँ भटकती है।”

“चलो...”

“अब एक क्षण भी यहाँ रुकना ठीक नहीं।”

कोई कुछ नहीं बोला।

सब तेज़ी से वहाँ से निकल पड़े।

बारिश उनके पीछे लगातार गिरती रही।

लेकिन किसी ने पीछे मुड़कर देखने का साहस नहीं किया।

थामरा ने केवल एक बार महसूस किया—

मानो किसी की दृष्टि अब भी उनकी पीठ पर टिकी हुई हो।

और फिर...

इल्लम घने वर्षा-पर्दे के पीछे धीरे-धीरे ओझल हो गया।

जब इल्लम ने अपनी स्मृतियाँ खोल दीं (भाग–12)

वे तब तक नहीं रुके, जब तक भगी अम्मा के छोटे-से घर के बरामदे तक नहीं पहुँच गए।

अम्मू अब भी काँप रही थी।

लेकिन उसकी आँखों में भय से अधिक विस्मय था।

कुछ देर तक वह कुछ बोल ही नहीं सकी।

फिर धीरे से बोली,

“मैंने उन्हें देखा…”

थामरा ने चौंककर उसकी ओर देखा।

“कुएँ में?”

अम्मू ने सिर हिलाया।

“नहीं… आँगन में।”

“जब तुम वहाँ खड़ी थीं… तब एक पल के लिए मुझे लगा कि तुम अकेली नहीं थीं।”

थामरा चुप हो गई।

उसने धीरे से अपनी हथेलियों की ओर देखा।

उनमें अब भी हल्दी और भीगे पत्थरों की हल्की-सी गंध थी।

उसने अपने ब्लाउज़ की गाँठ टटोली।

जनकी अम्मा की दी हुई छोटी पोटली अब भी सुरक्षित थी।

लेकिन तुलसी का एक पत्ता बाहर निकलकर उसकी हथेली से चिपका हुआ था।

उसने उसे बड़े स्नेह से उठाया

और फिर सावधानी से वापस पोटली में रख दिया।

वापसी का रास्ता पहले जैसा नहीं लग रहा था।

धान के खेत वही थे।

नारियल के पेड़ वही थे।

छोटी-सी धारा भी उसी तरह बह रही थी।

लेकिन थामरा को लग रहा था,

मानो हर चीज़ के भीतर कोई कहानी छिपी हुई है—

जिसे सुनने वाला चाहिए।

जब वे थरवाड पहुँचे,

जनकी अम्मा पहले से ही बरामदे में बैठी थीं।

उनके सामने धूप में सूखती हरी मिर्चें बिछी थीं।

उन्होंने सबसे पहले बच्चों के भीगे हुए कपड़ों को देखा।

फिर उनके चेहरों को।

कुछ क्षण तक वह बिना कुछ बोले उन्हें देखती रहीं।

फिर बहुत शांत स्वर में बोलीं—

"तो...

इल्लम ने तुम्हें भीतर आने दिया।"

थामरा ने कोई उत्तर नहीं दिया।

वह चुपचाप जाकर अप्पाची के पैरों के पास बैठ गई

और अपना सिर उनकी गोद में रख दिया।

उसके भीतर का भय अब वैसा नहीं रहा था।

वह आश्चर्य में बदल चुका था।

और आश्चर्य...

धीरे-धीरे एक उत्तरदायित्व में बदल रहा था।

उसे अचानक समझ में आया—

वह इल्लम इसलिए भुतहा नहीं था कि वहाँ मृत आत्माएँ भटकती थीं।

वह इसलिए जीवित था,

क्योंकि जीवित लोग उसकी कथा सुनना भूल चुके थे।

उसकी दीवारें न्याय की प्रतीक्षा कर रही थीं।

उसका मौन किसी ऐसे व्यक्ति की प्रतीक्षा कर रहा था,

जो उसे शब्द दे सके।

और अब...

थामरा जानती थी कि वह कहानी केवल भगी अम्मा की आवाज़ में कैद रह जाने के लिए नहीं बनी थी।

उसे लिखा जाना था।

उसे आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाना था।

अगले दिन भगी अम्मा फिर थरवाड आईं।

अब कथा का अंतिम अध्याय शेष था।

लेकिन इस बार बरामदे का वातावरण बदल चुका था।

थामरा अब वह जिज्ञासु लड़की नहीं रही थी,

जो केवल किसी भूतहा इल्लम का रहस्य जानना चाहती थी।

अब वह उस घर की साक्षी बन चुकी थी।

उसने उसकी निस्तब्धता सुनी थी।

उसकी स्मृतियों को महसूस किया था।

जनकी अम्मा भी आज असामान्य रूप से शांत थीं।

पार्वती थामरा के बिल्कुल पास बैठ गईं।

अम्मू आगे खिसककर बैठी,

ताकि एक भी शब्द छूट न जाए।

भगी अम्मा ने हमेशा की तरह पुकयिला गाल में दबाया,

आराम से बैठीं,

और धीमे स्वर में बोलीं—

“उस दिन के बाद...

इल्लम में कोई चैन की नींद नहीं सोया।”

“ऊपर से सब कुछ शांत दिखाई देता था...

लेकिन उस शांति के भीतर...

कुछ बहुत बड़ा आकार ले रहा था।”

यहीं से आरम्भ होती है—

‘नौवाँ पहर’ की कथा।

नवाँ पहर (भाग-1)

उस शाम कदानाड के ऊपर आकाश समय से पहले ही अँधेरा हो गया।

दोपहर का सूर्य घने, फूले हुए बादलों के पीछे छिप गया और सांझ ने नियत समय से पहले ही इल्लम को अपने आगोश में ले लिया।

रात्रि-भोज के बाद जब रामन नम्बूदिरि अपने किडप्पुमुरी में लौटे, तब तक चाँद क्षितिज पर नीचा और फीका-सा उग चुका था।उसकी चाँदी जैसी रोशनी पत्थर के लंबे बरामदे पर बिखरी हुई थी।

रामन अपने कमरे में बेचैनी से टहल रहे थे।

उनकी लाठी का सिरा पत्थर के फर्श पर सूखी, अधीर लय में बज रहा था—

टक... टक... टक...

थामरा के मन में अनायास वही सफ़ेद रेखा कौंध गई, जो उसने कुछ दिन पहले उसी किडप्पुमुरी के फर्श पर देखी थी।

रामन को पूरा विश्वास था कि यह रात उनसे वह सब वापस ले आएगी, जो स्त्रियों, खेत-मज़दूरों और शंकरण ने उनसे छीन लिया था—

उनका अधिकार...

उनका भय...

और लोगों की आज्ञाकारिता।

मुरुगन ने संदेश भेजा था कि रात ढलने के बाद चक्की को इल्लम लाया जाएगा।

उस निडर एझवा लड़की का विचार मात्र ही रामन के भीतर एक उन्मत्त उत्तेजना भर रहा था।

लेकिन...

इल्लम सो नहीं रहा था।

बंद दरवाज़ों के पीछे मीनाक्षी अपनी जगह ले चुकी थीं।

पद्मावती ने योजना के अनुसार एक-एक कर दीपकों की लौ धीमी कर दी थी।

सरसु, पीली और अस्वाभाविक रूप से शांत, भीतर की दीवार के पास चेंडा के सामने बैठी थी।

उसके छोटे-छोटे हाथ ढोल की चमड़ी पर टिके हुए थे—

मानो किसी ऐसी आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे हों, जो केवल ताल ही नहीं, कई जीवनों का भाग्य भी तय करने वाली हो।

उधर आँगन की छाया में...

एक काली थोर्थु में लिपटी चक्की खड़ी थी।

वह काँप रही थी।

केवल भय से नहीं..

उस निर्णय के बोझ से, जिसे स्वीकार करने का साहस उसने किया था।

उस रात उसे किसी शिकार की तरह इल्लम नहीं लाया गया था।

वह वहाँ एक साक्षी बनकर आई थी।

भगी अम्मा की आवाज़ इतनी धीमी हो गई कि जनकी अम्मा के बरामदे में बैठे सभी लोग अनायास उनकी ओर झुक आए।

उन्होंने कहा,

“एक बात समझ लो, बच्चों...

उस रात मीनाक्षी केवल क्रोध में नहीं थीं।

“क्रोध जल्दी भड़कता है...

और उतनी ही जल्दी बुझ भी जाता है।

“लेकिन उस रात उनके भीतर जो था...

वह धीरे-धीरे वर्षों में गढ़ा गया था।

“कुइल का अपमान...

चक्की का भय...

सरसु की चुप्पी...

पद्मावती का अपराधबोध...

और उन सभी स्त्रियों का दर्द...

जो इस बरामदे से कभी इस डर के साथ गुज़री थीं कि कहीं कोई उन्हें देख न ले...”

“इन सबने मिलकर उस रात मीनाक्षी के भीतर एक ऐसी शक्ति गढ़ दी थी, जिसे अब कोई रोक नहीं सकता था।

नवाँ पहर (भाग-2)

रात का नौवाँ पहर शुरू होते ही...

किडप्पुमुरी के पीछे का दरवाज़ा धीरे-धीरे चरमराया।

रामन नम्बूदिरि तुरंत उठ खड़े हुए।

उनकी साँसें तेज़ हो गईं।

उन्हें पूरा विश्वास था कि पहले मुरुगन का धीमा संकेत सुनाई देगा...

और फिर डरी-सहमी चक्की उस पिछवाड़े वाले दरवाज़े से भीतर प्रवेश करेगी।

लेकिन...

जो सबसे पहले भीतर आई, वह चक्की नहीं थी।

वह थी—

पद्मावती।

उन्होंने दीपक को बहुत नीचे पकड़ा हुआ था।

उसकी रोशनी केवल उनके पैरों के आसपास फैल रही थी।

उनका चेहरा आधा उजाले में था,

आधा अँधेरे में।

कुछ क्षण तक वे बिना बोले रामन को देखती रहीं।

फिर शांत स्वर में बोलीं—

“चक्की नहीं आएगी।”

रामन ने विस्मय से उनकी ओर देखा।

उनके शब्दों का अर्थ समझने से पहले ही भीतर क्रोध उमड़ने लगा।

“लेकिन...”

पद्मावती ने उनकी बात पूरी होने से पहले ही कहा—

“उसकी जगह...

कोई और आया है।”

उन्होंने धीरे-से पीछे अँधेरे की ओर हाथ उठाया।

एक पतली-दुबली आकृति आगे बढ़ी।

उसकी आँखों पर कपड़े की एक पट्टी बँधी हुई थी।

दोनों हाथ कसकर भींचे हुए थे।

कुछ क्षणों तक...

रामन उसे पहचान ही नहीं सके।

तभी दीपक की लौ ज़रा-सी ऊपर उठी।

उसका प्रकाश उस लड़की के चेहरे पर पड़ा।

और अगले ही क्षण...

रामन मानो बिजली का झटका खाकर पीछे हट गए।

“सरसु...!”

उनके मुँह से अविश्वास से भरी चीख निकली।

पद्मावती के चेहरे पर मुस्कान नहीं थी।

वह निर्णय सुनाने वाले न्यायाधीश का भाव था।

उन्होंने बहुत धीमे स्वर में कहा—

“अब समझे, नम्बूदिरि...”

“जब किसी और की बेटी को तुम इस दरवाज़े तक बुलाते हो...

तो उसके पिता पर क्या बीतती होगी?”

सरसु ने तुरंत अपनी आँखों से कपड़े की पट्टी खींचकर फेंक दी।

उसने एक पल भी वहाँ नहीं रुका।

वह मुड़ी...

और अँधेरे में भाग गई।

रामन का चेहरा अपमान, क्रोध और भय से विकृत हो उठा।

उन्होंने झटके से अपनी कुडुमि पकड़ ली।

और तेज़ी से आँगन की ओर बढ़े।

जैसे ही उन्होंने दरवाज़ा खोला...

सबसे पहले जो आवाज़ उनके कानों में पड़ी...

वह थी—

चेंडा।

एक प्रहार...

फिर दूसरा...

धीमा...

गंभीर...

और भयावह।

उसकी कंपन पत्थर के फर्श से होती हुई लकड़ी के खंभों में चढ़ गई।

फिर दीवारों से टकराकर पूरे इल्लम में गूँज उठी।

रामन वहीं ठिठक गए।

उसी समय...

उनके पीछे से पद्मावती की वैथारी गूँजी।

न बहुत ऊँची...

न बहुत तेज़...

लेकिन इतनी तीखी कि उसने रात के सन्नाटे को दो टुकड़ों में बाँट दिया।

उन्होंने आदेश दिया—

“सिंह वडिवु!”

थामरा चौंक उठी।

“अम्मा...

यह सिंह वडिवु क्या होता है?”

भगी अम्मा ने उसकी ओर देखा।

मानो वे इसी प्रश्न की प्रतीक्षा कर रही थीं।

“कलरिपयट्टु में,” उन्होंने कहा,

"क्रोध चिल्लाता नहीं..

उसे साधा जाता है"।

"सिंह वडिवु आठ पशु-मुद्राओं में से एक है"।

"इसमें दोनों पैर धरती को मजबूती से पकड़ते हैं...

शरीर आगे झुकता है...

दृष्टि सीधे शत्रु पर टिकती है...

और हर गति में नियंत्रित उग्रता छिपी रहती है"।

उन्होंने गर्व से आगे कहा—

"पूरे उस क्षेत्र में...

मीनाक्षी जैसी सिंह वडिवु कोई नहीं कर सकता था"।

"कहा जाता था...

उसे केवल उस मुद्रा में खड़ा देखकर ही विरोधी का साहस आधा रह जाता था"।

थामरा मंत्रमुग्ध होकर सुन रही थी।

धीरे से बोली—

"अम्मा...

आपको यह सब कैसे मालूम?"

भगी अम्मा मुस्करा दीं।

वह मुस्कान बहुत पुरानी यादों से भरी हुई थी।

"मेरे पति ने विवाह से पहले कलारी सीखी थी"।

"दूसरे गुरुक्कलों से उन्होंने मीनाक्षी गुरुक्कल के बारे में बहुत कुछ सुना था"।

"उन्होंने इस कथा पर आधारित ओट्टमथुल्लल भी कई बार देखा था"।

फिर उन्होंने हल्की साँस ली।

“लेकिन...

रोटी का संघर्ष...

शौक़ से बड़ा होता है"।

“ज़मीन को हाथ चाहिए थे।

जो हाथ कभी लड़ना सीख रहे थे...

वे बाद में हल चलाना सीख गए"।

इतना कहकर भगी अम्मा फिर कथा में लौट आईं।

नवाँ पहर (भाग-3)

सिंह वडिवु की मुद्रा में खड़ी मीनाक्षी अब वह शांत, संकोची थम्पुराटी नहीं थीं, जो चुपचाप भोजन परोसती थीं, आँखें झुकाकर रहती थीं और अपमान का उत्तर उपवास या मौन से देती थीं।

उस रात उनके भीतर कुछ बदल चुका था।

दीपक की लौ में उनके छोटे कटे हुए बाल चमक रहे थे।

दोनों पैर दृढ़ता से धरती में जमे थे।

शरीर थोड़ा आगे झुका हुआ था।

और उनकी आँखें...

सीधे रामन नम्बूदिरि के किडप्पुमुरी के द्वार पर टिकी थीं।

उन्होंने रामन को पुकारा नहीं।

कोई आरोप नहीं लगाया।

कोई शब्द नहीं कहा।

वह केवल अपनी जगह अडिग खड़ी रहीं।

रामन नम्बूदिरि अपनी लाठी उठाए बाहर आए।

उनके चेहरे पर क्रोध साफ़ दिखाई दे रहा था।

लेकिन वे कुछ कह पाते,

उससे पहले ही...

मीनाक्षी चल पड़ीं।

उन्होंने बिजली की गति से घूमकर छलाँग लगाई।

उनका शरीर हवा में लहराया।

और अगले ही क्षण—

उन्होंने रामन के बिल्कुल पास हवा को ऐसी तीव्रता से चीरते हुए प्रहार किया कि निकट रखा विलक्कु (तेल का दीपक) एक ओर झुक गया।

दीपक की लौ काँप उठी।

रामन भय से पीछे हट गए।

हालाँकि...

मीनाक्षी का प्रहार उन्हें छुआ तक नहीं था।

भगी अम्मा ने धीमे स्वर में कहा,

"यही एक सच्चे गुरुक्कल की शक्ति होती है"।

"उसे पहला वार करने की आवश्यकता नहीं पड़ती"।

"वह केवल अपराधी के शरीर को उसके अपने ही किए हुए प्रत्येक अत्याचार की याद दिला देता है"।

रामन की आँखें तेजी से इधर-उधर घूमने लगीं।

कभी मीनाक्षी की ओर...

कभी सरसु की ओर...

कभी पद्मावती की ओर...

और फिर...

आँगन की दीवार की छाया में खड़ी चक्की पर जाकर ठहर गईं।

उसे देखते ही...

उनके चेहरे का रंग उड़ गया।

अब उन्हें सब समझ में आ गया।

सब जान चुके थे।

उनकी माँ जानती थीं।

उनकी पत्नी जानती थीं।

उनकी बेटी जानती थी।

और अब...

पूरा इल्लम जान चुका था।

तभी...

आँगन के उस पार गहरे अँधेरे से कुछ आकृतियाँ बाहर आईं।

वे बहुत अधिक नहीं थीं।

इतनी भी नहीं कि कोई दंगा हो जाता।

लेकिन...

इतनी अवश्य थीं कि सत्य की साक्षी बन सकें।

सबसे आगे दक्षायनी थीं।

उनके पीछे देवन और कार्तियायनी।

अचु...

कुइल...

और उनके साथ कुछ अन्य स्त्री-पुरुष।

उनके सिरों पर अब नए बाल उगने लगे थे।

छोटे...

खुरदरे...

लेकिन वे इस बात के साक्षी थे कि अपमान हमेशा के लिए किसी का सिर झुका नहीं सकता।

उनमें से कोई भी इल्लम की पवित्र सीमा के भीतर नहीं आया।

वे वहीं खड़े रहे,

जहाँ जाति ने उन्हें जीवन भर खड़ा रहने के लिए विवश किया था।

लेकिन उस रात...

वही सीमा एक न्यायालय बन गई।

और उनका मौन...

उनकी गवाही।

रामन एक-एक कदम पीछे हटने लगे।

धीरे-धीरे...

वापस अपने किडप्पुमुरी की ओर।

उनकी आँखों में पहली बार भय स्पष्ट दिखाई दे रहा था।

उन्होंने दाँत भींचकर कहा—

"तुम सबको इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी"।

"मैं इस इल्लम का थम्पुरन हूँ!"

उनकी बात पूरी भी नहीं हुई थी कि पद्मावती हँस पड़ीं।

वह कोई ज़ोरदार हँसी नहीं थी।

वह उपहास से भरी, गहरी और चुभती हुई हँसी थी।

भगी अम्मा यहाँ तक कहते-कहते कुछ क्षण के लिए स्वयं भी चुप हो गईं।

फिर उन्होंने पद्मावती के शब्द दोहराए—

"सच्चे थम्पुरन को कभी यह घोषणा नहीं करनी पड़ती कि वह थम्पुरन है"।

"अपनी सत्ता का ढिंढोरा केवल डरा हुआ आदमी पीटता है"।

बरामदे में बैठे सभी लोग कुछ क्षण तक निःशब्द रह गए।

थामरा के रोंगटे खड़े हो गए।

उसे लगा—

उस एक वाक्य ने रामन नम्बूदिरि की पूरी सत्ता को चकनाचूर कर दिया था।

नवाँ पहर (भाग-4)

पद्मावती के शब्दों ने रामन नम्बूदिरि को भीतर तक झकझोर दिया।

उनका चेहरा क्रोध से लाल हो उठा।

उन्होंने झटके से अपनी लाठी उठाई और चक्की की ओर बढ़े।

शायद उनके मन में अभी भी यह भ्रम था कि भय दिखाकर सब कुछ पहले जैसा कर देंगे।

लेकिन...

वे दूसरा कदम भी नहीं रख पाए थे कि मीनाक्षी बिजली की चमक की तरह उनके सामने आ खड़ी हुई।

इतनी तीव्र गति से कि किसी को उनकी चाल दिखाई ही नहीं दी।

रामन ने पलक झपकाई भी नहीं थी कि उनकी लाठी हाथ से छूटकर दूर पत्थर के फर्श पर जा गिरी।

ठनाक!

पत्थर से टकराकर उसकी आवाज़ पूरे इल्लम में गूँज उठी।

मीनाक्षी उनके सामने स्थिर खड़ी थीं।

उनकी हथेली रामन के सीने से कुछ ही इंच दूर थी।

स्पर्श नहीं किया था...

लेकिन आवश्यकता भी नहीं थी।

उनकी आँखें ही पर्याप्त थीं।

उन आँखों में वर्षों का अपमान...

मौन...

पीड़ा...

और अदम्य संकल्प एक साथ दिखाई दे रहे थे।

उन्होंने एक शद्ब भी नहीं कहा।

फिर भी उनकी दृष्टि स्पष्ट कह रही थी—

"एक कदम और बढ़ाया... तो यह हाथ रुकने वाला नहीं है"।

रामन वहीं जड़ हो गए।

उसी क्षण उन्हें पहली बार एहसास हुआ कि जिस स्त्री को उन्होंने वर्षों तक केवल अपनी आज्ञाकारी पत्नी समझा...

वह वास्तव में एक गुरुक्कल थी।

और आज...

वह अपने पूरे स्वरूप में उनके सामने खड़ी थी।

उसी समय—

पूरे इल्लम पर एक अजीब-सा सन्नाटा छा गया।

मानो समय स्वयं ठहर गया हो।

भगी अम्मा ने धीरे से कहा,

"उस क्षण...

पूरा इल्लम दो भाग्यों के बीच खड़ा था"।

"एक रास्ता यह था कि रामन अपने आदमियों को बुलाते...

मज़दूरों को कुचल देते...

मीनाक्षी पर आरोप लगाते...

और जाति, धर्म और पुरुष-सत्ता के पीछे छिपकर सब कुछ दबा देते"।

“दूसरा रास्ता…”

भगी अम्मा ने गहरी साँस ली।

“…यह था कि स्वयं इल्लम उन्हें अस्वीकार कर दे।”

इतना कहकर वे कुछ पल के लिए चुप हो गईं।

बरामदे में बैठे सभी लोग उनकी अगली पंक्ति की प्रतीक्षा करने लगे।

तभी…

चेंडा की गूँज एक बार फिर उठी।

पहले से भी अधिक गंभीर।

और उसी क्षण…

इल्लम के नए कुएँ की दिशा से एक भयावह आवाज़ सुनाई दी।

छपाक!

इतनी भारी कि मानो कोई बड़ा पत्थर गहरे पानी में गिरा हो।

लेकिन…

वह पत्थर नहीं था।

अगले ही क्षण…

एक चीख ने पूरे इल्लम को हिला दिया।

“सरसु…!”

यह चक्की की आवाज़ थी।

उसकी चीख इतनी तीखी थी कि सबके शरीर में सिहरन दौड़ गई।

बिना एक क्षण गँवाए तीन पुलयार युवक कुएँ की ओर दौड़े।

उन्होंने किसी की अनुमति की प्रतीक्षा नहीं की।

वे सीधे अँधेरे पानी में कूद पड़े।

लेकिन...

बहुत देर हो चुकी थी।

सरसु उस दुःख के आगे हार चुकी थी,

जिसे उसका कोमल मन अब और सह नहीं पाया था।

वह उस रात जीवित बेटी बनकर वहाँ आई थी।

लेकिन जब उसे कुएँ से बाहर निकाला गया...

वह एक निस्तब्ध देह बन चुकी थी।

सफ़ेद कपड़े में लिपटी हुई।

सदा के लिए मौन।

नवाँ पहर (भाग-5)

सरसु की निर्जीव देह को देखते ही समय जैसे थम गया।

मीनाक्षी कुछ क्षण तक स्तब्ध खड़ी रहीं।

उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ कि उनकी बेटी अब नहीं रही।

यह...

उनकी किसी योजना का हिस्सा नहीं था।

वे तो केवल रामन को उसकी क्रूरता का दर्पण दिखाना चाहती थीं।

लेकिन...

उस दर्पण में सबसे पहले उनकी अपनी बेटी समा जाएगी—

यह उन्होंने कभी नहीं सोचा था।

सरसु ने स्वयं उस रात चक्की के स्थान पर खड़े होने का निश्चय किया था।

जब चक्की अपने माता-पिता के साथ शंकरण नम्बूदिरि के इल्लम गई थी,

तब उसने सरसु को सब कुछ बता दिया था—

कैसे उसके पिता देवन को धमकाया गया...

कैसे स्तन-कर का भय दिखाकर उसे इल्लम भेजने के लिए विवश किया गया...

और कैसे उसे आदेश दिया गया कि यदि वह नहीं गई तो पूरा परिवार बर्बाद हो जाएगा।

सरसु पहले ही कुइल के अपमान की कहानी सुन चुकी थी।

लेकिन उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि उसके अपने पिता की वासना...

अब उसकी ही सहेली तक पहुँच जाएगी।

वह यह मान बैठी थी कि

यदि उसके पिता उसी स्थान पर अपनी बेटी को देखेंगे,

जहाँ वे किसी और की बेटी को बुलाते थे,

तो शायद...

उनके भीतर कहीं दबी हुई लज्जा जाग उठेगी।

शायद...

वे रुक जाएँगे।

शायद...

उन्हें पहली बार समझ आएगा कि दूसरे की बेटी भी किसी पिता की संतान होती है।

लेकिन...

ऐसा नहीं हुआ।

यह सत्य...

यह कठोर यथार्थ...

सरसु का नन्हा मन सह नहीं पाया।

मीनाक्षी कुएँ के पास घुटनों के बल गिर पड़ीं।

उनके मुँह से निकली चीख ने पूरे इल्लम को जैसे चीर दिया।

वह विलाप किसी माँ का ही नहीं था—

वह उन सभी स्त्रियों का विलाप था,

जिन्होंने वर्षों तक अपमान सहा था।

पद्मावती भी वहीं बैठ गईं।

उनकी भी आवाज़ फूट पड़ी।

पहली बार...

वह दृढ़, तीखी और व्यंग्यपूर्ण स्त्री पूरी तरह टूट गई।

पुलयार स्त्री-पुरुष भी अपने आँसू नहीं रोक सके।

वे अपनी छाती पीट-पीटकर रोने लगे।

वे उस छोटी थम्पुराटी के लिए शोक मना रहे थे,

जिसने दूसरी लड़की को बचाने का प्रयास किया...

और स्वयं अपनी जान दे दी।

रामन नम्बूदिरि के हाथ काँपने लगे।

उन्होंने अपने सीने को कसकर पकड़ लिया।

माथे पर पसीना छलक आया।

साँसें तेज़ हो गईं।

वे कुछ कदम पीछे हटे...

फिर लड़खड़ाते हुए अपने किडप्पुमुरी की ओर भागे।

बरामदे में रखा उनका प्रिय आर्मचेयर उनके शरीर से टकराया।

कुर्सी एक ओर झूल गई।

रामन पीछे के दरवाज़े से बाहर निकले

और अँधेरे में भागते चले गए।

गीली पत्तियों को रौंदते हुए...

झाड़ियों से टकराते हुए...

मानो कोई अदृश्य शक्ति उनका पीछा कर रही हो।

अच्चु ने सहज ही उनके पीछे दौड़ने का प्रयास किया।

लेकिन मीनाक्षी ने हाथ उठाकर उसे रोक दिया।

उनकी आवाज़ टूटी हुई थी...

फिर भी दृढ़।

“उसे जाने दो...”

कुछ क्षण रुककर उन्होंने कहा,

“जीवन में पहली बार...

उसे अकेले चलने दो”।

उसके बाद...

पूरा इल्लम ऐसे मौन में डूब गया,

जो किसी भी विलाप से अधिक भयावह था।

मीनाक्षी और पद्मावती ने मिलकर सरसु की देह को सफ़ेद वस्त्र में लपेटा।

उसके सिरहाने एक दीपक जलाया।

और दोनों वहीं बैठ गईं।

अब उनके पास कोई शब्द नहीं बचे थे।

कुइल इल्लम की सीमा पर खड़ी थी।

उसके सिर पर नए बाल उगने लगे थे—

जैसे अग्नि के बाद धरती पर फिर से हरियाली लौटती है।

दूसरी ओर...

चक्की काँप रही थी।

इतनी बुरी तरह कि उसकी माँ कार्तियायनी को उसे संभालना पड़ रहा था।

बरामदे में बैठी थामरा ने लगभग फुसफुसाते हुए पूछा,

“भगी अम्मा...

क्या मीनाक्षी ने अंत में थम्पुरन को मार दिया?”

भगी अम्मा ने धीरे से सिर हिलाया।

“नहीं, बच्ची।”

“ऐसी लोककथाएँ कभी इतने सरल उत्तर नहीं देतीं।”

“क्या मीनाक्षी ने उस पर हाथ उठाया?”

“नहीं।”

“क्या उन्होंने उसे रोक दिया?”

“हाँ।”

“क्या उसके अपराध-बोध...

उसका भय...

उसकी दवाइयाँ...

और स्वयं इल्लम उसके विरुद्ध खड़े हो गए?”

भगी अम्मा ने लंबी साँस ली।

“शायद...”

“मृत लोग गवाही नहीं देते।”

“और उन स्त्रियों ने कभी कुछ स्पष्ट नहीं कहा।”

“इसीलिए यह कथा जीवित रही।”

“किसी स्वीकारोक्ति के रूप में नहीं...”

“बल्कि एक चेतावनी के रूप में।"

नवाँ पहर (भाग-6)

वह मृत्यु जिसका किसी ने नाम नहीं लिया

भगी अम्मा ने कुछ क्षण आँखें मूँद लीं।

जब उन्होंने फिर बोलना शुरू किया, उनकी आवाज़ पहले से भी धीमी थी।

“उस रात...”

“नारायण वैद्यन ने रामन नम्बूदिरि को देखा था।"

“वे इल्लम से कुछ दूर, छोटी धारा के पास लड़खड़ाते हुए चल रहे थे।"

ऐसा लग रहा था,

मानो कोई उनका पीछा कर रहा हो।

वे बार-बार मुड़कर पीछे देखते।

अपनी लाठी हवा में घुमाते।

खाली अँधेरे से लड़ते।

कभी किसी का नाम पुकारते...

तो कभी स्वयं ही डरकर पीछे हट जाते।

नारायण वैद्यन उन्हें पुकारते हुए उनकी ओर बढ़े,

लेकिन...

रामन उन्हें देख भी न सके।

वे घबराए हुए इल्लम की ओर भाग पड़े।

उस रात...

किसी ने उन्हें दोबारा नहीं देखा।

अगली सुबह...

रामन नम्बूदिरि अपने बिस्तर पर मृत पाए गए।

उनके शरीर पर कोई घाव नहीं था।

न तलवार का निशान।

न किसी संघर्ष का प्रमाण।

न किसी हिंसा का चिह्न।

कमरे में केवल एक वस्तु विशेष रूप से सबका ध्यान खींच रही थी।

उनके पलंग के पास रखी थी—

वही छोटी कुप्पी,

जिसमें सुनहरे-लाल रंग की गोलियाँ रखी जाती थीं।

वही औषधि...

जिसे वैद्यन ने उन्हें सीमित मात्रा में लेने की चेतावनी दी थी।

नारायण वैद्यन ने देह की जाँच करने के बाद केवल इतना कहा—

"मैंने पहले ही कहा था..."

"औषधि भी यदि मर्यादा से अधिक ले ली जाए, तो वही विष बन जाती है"।

उन्होंने उससे अधिक कुछ नहीं कहा।

और...

किसी ने उनसे कुछ पूछा भी नहीं।

भगी अम्मा कुछ क्षण रुकीं।

फिर बोलीं,

"लोककथा यहीं से कई दिशाओं में बँट जाती है"।

"कुछ लोग कहते हैं कि रामन अपराध-बोध से टूट गए थे"।

“कुछ कहते हैं कि भय ने उनका हृदय रोक दिया'।

“कुछ का वि श्वास था कि उन्होंने शक्ति बढ़ाने वाली औषधि आवश्यकता से अधिक खा ली थी'।

“और कुछ लोग…”

उन्होंने हल्की मुस्कान के साथ कहा,

“…आज भी मानते हैं कि उस रात स्वयं इल्लम ने अपने स्वामी को स्वीकार करने से इंकार कर दिया था'।

बरामदे में बैठे सभी लोग निः शब्द थे।

भगी अम्मा आगे बोलीं—

“रामन की मृत्यु के बाद शंकरण नम्बूदिरि आए'।

“वे मीनाक्षी को अपने साथ ले गए'।

“कुछ लोगों का कहना है कि वह फिर कभी उस इल्लम में नहीं लौटीं'।

“दूसरे कहते हैं कि वर्ष में एक बार…”

“वह सरसु के कुएँ के पास एक दीपक जलाने अवश्य आती थीं'।

“जहाँ उनकी बेटी ने अंतिम बार इस संसार को देखा था'।

“पद्मावती कुछ समय तक वहीं रहीं'।

“वृद्ध थीं..”

“लेकिन अंत तक अडिग रहीं'।

“फिर एक दिन…”

“उन्होंने भी वह इल्लम छोड़ दिया'।

“जिस घर ने वर्षों तक भय को आश्रय दिया था…”

“वह अब स्वयं जीवन को संभाल नहीं पा रहा था'।

“रसोई ठंडी पड़ गई'।

“गौशाला सूनी हो गई।”

“खेत दूसरे हाथों में चले गए।”

“और चक्की...”

“उसे फिर कभी किसी ने उस इल्लम की ओर बुलाने का साहस नहीं किया।”

“कुइल ने भी दूसरी जगह अपना जीवन बसाया।”

“जब उसके बाल फिर से लंबे होने लगे...”

“तो खेतों में काम करने वाली स्त्रियाँ अपने सिर पर हाथ फेरकर उस दिन को याद करतीं..”

“जिस दिन शर्म ने पहली बार अपना पक्ष बदल लिया था।”

नवाँ पहर (भाग-7 - अंतिम)

इल्लम आज भी जागता क्यों है

भगी अम्मा ने धीरे-धीरे अपनी पीठ दीवार से टिका दी।

उनकी आँखें दूर कहीं खो गईं।

“इल्लम एक ही दिन में खंडहर नहीं बना, बच्ची,” उन्होंने कहा।

“जो घर पीढ़ियों तक सत्ता का प्रतीक रहे हों...”

“वे एक दिन में नहीं मरते।”

“सबसे पहले...”

“उनकी आवाज़ें चली जाती हैं।”

“फिर दीपक बुझ जाते हैं।”

“फिर गाय-बछड़े...”

“फिर उत्सव...”

“और अंत में...”

“लोग।”

उन्होंने अपनी उँगली हवा में उठाई।

“लेकिन एक चीज़ वहीं रह गई।”

“रामन नम्बूदिरि की वह आर्मचेयर...”

“जो उनके किडप्पुमुरी के बाहर रखी रहती थी।”

“वह आज भी वहीं है।”

“मानो किसी ऐसे स्वामी की प्रतीक्षा कर रही हो...”

“जिसे अब कोई सम्मान से याद नहीं करना चाहता।”

उन्होंने आगे कहा,

“और वह कुआँ...”

“उसके भीतर आज भी उन स्त्रियों की परछाइयाँ बसती हैं...”

“जिन्होंने अपनी चीखें अपने भीतर ही दफ़ना दी थीं।”

“रात के समय...”

“यदि कोई उस पुराने इल्लम के पास से गुज़रे...”

“तो लोग कहते हैं...”

“उसे थम्पुरन के हिस्से से किसी के खाँसने की आवाज़ सुनाई देती है।”

“कभी बहुत दूर से चेंडा की धीमी थाप सुनाई देती है।”

“और बरसात की रातों में...”

“लंबे गलियारे में किसी स्त्री की हँसी हवा के साथ बहती हुई सुनाई देती है...”

“मानो कोई तलवार अँधेरे को चीरती चली जा रही हो।”

भगी अम्मा ने थामरा की ओर देखा।

“यही कारण है कि लोग कहते हैं...”

“वह इल्लम भूतों का घर है।”

उन्होंने सिर हिलाया।

“नहीं..”

“वह केवल भूतों से नहीं बसता”।

“वह स्मृतियों से बसता है”।

“अन्याय से बसता है”।

“उन स्त्रियों के मौन से बसता है...”

“जो जानती थीं कि कब सहना है...”

“और कब उठ खड़ा होना है”।

“रामन नम्बूदिरि चाहते थे कि उनके बाद भी लोगों पर उनका भय राज करे”।

“लेकिन...”

“जीवित क्या रहा?”

भगी अम्मा की आँखों में चमक आ गई।

“उनका अत्याचार नहीं..

उन स्त्रियों का प्रतिरोध”।

जनकी अम्मा के बरामदे में लंबे समय तक कोई कुछ नहीं बोला।

रसोई से आती करछी की हल्की आवाज़...

कटहल के पेड़ पर बैठे कौए की काँव-काँव...

दूर से किसी फेरीवाले की पुकार...

सब जैसे उस मौन का सम्मान कर रहे थे।

थामरा चुपचाप बैठी थी।

दोनों हाथ कसकर एक-दूसरे में फँसे हुए।

वह एक भुतहे घर की कहानी सुनने आई थी।

लेकिन...

भगी अम्मा ने उसे केवल एक लोककथा नहीं सुनाई थी।

उन्होंने उसे इतिहास का वह चेहरा दिखाया था,

जो पुस्तकों में शायद ही कभी लिखा जाता है—

घावों का इतिहास...

साहस का इतिहास...

स्त्रियों की बुद्धिमत्ता और मौन विद्रोह का इतिहास।

वह कथा उसके भीतर ऐसे उतर गई थी,

जैसे कोई कड़वी लेकिन जीवन देने वाली औषधि।

उस रात...

थामरा ने अपनी कॉपी खोली।

बहुत देर तक...

कलम कागज़ पर नहीं चली।

फिर उसने धीरे-धीरे पहला वाक्य लिखा—

"उन्होंने मौन में विद्रोह किया।

और मौन में ही सिंहनाद कर दिया"।

बाहर वर्षा शुरू हो चुकी थी।

कटहल के पत्तों पर गिरती बूंदों की आवाज़ पूरे थरवाड में गूँज रही थी।

दूर...

नाले के उस पार...

वह पुराना इल्लम अँधेरे में खड़ा था।

लेकिन अब...

थामरा को वह वीरान नहीं लगता था।

उसे ऐसा लगा,

मानो उस घर की स्त्रियों को आखिरकार एक नई आवाज़ मिल गई हो।

और वह आवाज़...

उसकी अपनी कलम बनने वाली थी।

जब स्मृति औषधि बन गई (उपसंहार – भाग 1)

कई वर्षों बाद...

बरसात की पहली तेज़ वर्षा हो रही थी।

थामरा नारायण थरवाड के बरामदे में बैठी थी।

उसकी गोद में कागज़ों का एक मोटा पुलिंदा रखा था।

आँगन का कटहल का पेड़ अब बूढ़ा हो चुका था।

उसकी शाखाएँ पहले से कहीं अधिक झुक गई थीं।

लेकिन...

उसकी पत्तियों पर गिरती वर्षा की ध्वनि बिल्कुल वैसी ही थी,

जैसी वर्षों पहले हुआ करती थी।

वही आवाज़ उसे एक ही क्षण में अतीत में ले गई।

उमस भरी दोपहरें...

कटहल के दूध से चिपचिपी उँगलियाँ...

अप्पाची की तीखी डाँट...

अम्मू की खिलखिलाहट...

और वह दिन...

जब दो छोटी लड़कियाँ तैरने का बहाना बनाकर एक ऐसी कहानी के पीछे चल पड़ी थीं,

जिसने फिर कभी उनका साथ नहीं छोड़ा।

उसकी गोद में रखे पन्ने अब किसी उत्साहित स्कूली लड़की की जल्दबाज़ी में लिखी हुई नोटबुक नहीं थे।

वे उसके साथ-साथ बड़े हुए थे।

छात्रावास के संदूकों से...

पढ़ाई की मेज़ों तक...

कलरी से...

औषधालय तक...

एक मानसून से दूसरे मानसून तक...

वे उसके जीवन के साथी बने रहे।

कुछ पन्नों पर नारियल के तेल के धब्बे थे।

कुछ पर हल्दी के निशान।

कुछ पर पुरानी स्याही फैल गई थी।

और कुछ पन्ने नमी से हल्के मुड़ गए थे।

हाशियों में उसने जान-बूझकर कुछ मलयालम शब्द वैसे ही रहने दिए थे—

इल्लम,

किडप्पुमुरी,

पुकयिला,

कलरी,

और मकरध्वज।

उसे लगता था कि इन शब्दों की आत्मा किसी दूसरी भाषा में पूरी तरह उतर ही नहीं सकती।

पहले पृष्ठ पर,

अपनी साफ़ और संतुलित लिखावट में,

उसने शीर्षक लिखा था—

“द एवेंजिंग बोसम्स”
(प्रतिशोधी उरोज)

वह धीरे-धीरे पन्ने पलटने लगी।

हर पन्ने के साथ...

भगी अम्मा फिर से जीवित होने लगीं।

मुँह के एक कोने में दबा हुआ पुकयिला...

हाथ में पुरानी लाठी...

किसी कठिन मोड़ पर कहानी कहने से पहले लिया गया उनका छोटा-सा विराम...

सब कुछ थामरा की आँखों के सामने उतर आया।

अप्पाची भी याद आईं—

जो ऊपर-ऊपर डाँटती थीं,

लेकिन कहानी सबसे अधिक ध्यान से वही सुनती थीं।

अम्मू के मासूम प्रश्न...

पार्वती का शांत स्नेह...

और रास्ते की ओर बार-बार देखते गोपाल चेट्टन की बेचैन निगाहें...

इन सबने भी उस पांडुलिपि में अपना स्थायी स्थान बना लिया था।

थामरा जानती थी—

यह कहानी केवल उसने नहीं लिखी थी।

यह असंख्य लोगों की स्मृतियों से होकर...

पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती हुई...

अंततः उसकी कलम तक पहुँची थी।

जब स्मृति औषधि बन गई (उपसंहार – भाग 2)

थामरा अब वह छोटी लड़की नहीं रही थी...

जो कभी खंडहर बन चुके इल्लम के सामने काँपती हुई खड़ी थी...

और जिसने कुएँ के काले पानी में उन स्त्रियों की परछाइयाँ देखी थीं।

उस सुबह...

वर्षों की कठिन साधना के बाद...

केशवन वैद्यन ने उसे अपने शिष्य के रूप में आशीर्वाद दिया था।

उन्होंने उसके सिर पर हाथ रखते हुए कहा था—

“अब तुमने इतना सीख लिया है कि सेवा आरम्भ कर सको।”

“इतना नहीं कि अहंकार कर सको।”

“और इतना भी नहीं कि सीखना छोड़ दो।”

“लेकिन...”

“इतना अवश्य कि लोगों का दुःख बाँट सको।”

उनके ये सरल शब्द पूरे दिन थामरा के भीतर गूँजते रहे।

उन्हें सुनते हुए उसे भगी अम्मा की बातें भी याद आईं।

आज उसके हाथ वैसे नहीं रहे थे,

जैसे बचपन में थे।

तब वे कटहल के दूध और स्याही से रंगे रहते थे।

अब...

उनसे जड़ी-बूटियों,

औषधीय तेलों

और काढ़ों की सुगंध आती थी।

इन्हीं हाथों ने वर्षों तक

सिल-बट्टे पर जड़ें पीसी थीं।

काढ़े तैयार किए थे।

बुखार से तपते बच्चों की नाड़ी देखी थी।

घायल लोगों के घाव साफ़ किए थे।

और उन पीड़ाओं को भी छुआ था,

जिन्हें देखने का साहस बहुत-से लोग नहीं जुटा पाते।

लेकिन...

जितनी अधिक वह चिकित्सा सीखती गई,

उतना ही एक सत्य उसके भीतर गहराता गया।

हर घाव शरीर पर दिखाई नहीं देता।

कुछ घाव...

स्मृतियों में बस जाते हैं।

कुछ...

घरों की दीवारों में रह जाते हैं।

और कुछ...

माँ से बेटी तक,

बिना कभी शब्द पाए,

पीढ़ियों तक चले आते हैं।

उसने विष-विज्ञान पढ़ा था।

औषधीय तेलों का ज्ञान पाया था।

धातुओं का शोधन सीखा था।

अग्नि, श्वास और पीड़ा के रहस्य समझे थे।

और उसके मन में अब भी एक सपना जीवित था—

एक दिन वह पारंपरिक आयुर्वेद में

पारे (रस) के शोधन और उसके द्वारा बनने वाली दुर्लभ जीवनरक्षक औषधियों का गहन अध्ययन करेगी।

शायद...

इसी कारण वह बार-बार उस पुराने इल्लम की ओर लौटती रही।

आयुर्वेद की पढ़ाई के बीच...

कलरी के अभ्यास के बीच...

अप्पाची के निधन के बाद...

अम्मू के विवाह के बाद...

और पार्वती के धीरे-धीरे वृद्ध होते जाने के बीच...

वह उस इल्लम को बार-बार लिखती रही।

हर बार उसे लगता—

अब कहानी पूरी हो गई।

लेकिन तभी...

कोई छोटी-सी ध्वनि उसे फिर वापस बुला लेती।

रात में रोता हुआ बछड़ा...

भगी अम्मा की काँपती आवाज़...

रामन नम्बूदिरि की लाठी की खट्-खट्...

आँगन में गूँजता चेंडा...

या...

कुएँ के गहरे पानी में झिलमिलाते वे चेहरे।

शुरू-शुरू में...

वह इल्लम उसके लिए केवल एक भुतहा मकान था।

लेकिन समय के साथ उसने समझा—

वह घर भूतों से नहीं,

बल्कि उन स्मृतियों से आबाद था,

जिन्हें वर्षों तक दबाकर रखा गया...

सहन किया गया...

और फिर भी भुलाया नहीं जा सका।

उसके भूत सफ़ेद वस्त्र पहने हुए प्रेत नहीं थे।

वे थे—

वे मौन...

जो उन लोगों से भी अधिक समय तक जीवित रहे,

जिन्होंने उन्हें जन्म दिया था।

जब स्मृति औषधि बन गई (उपसंहार - भाग 3 एवं समापन)

उसी समय...

रसोई से पार्वती की आवाज़ आई—

“थामरा...

दीपक बुझने वाला है।

और याद रखना...

कल तक बिजली भी नहीं आएगी।”

थामरा उठी।

उसने धीरे से बाती सीधी की।

दीपक की लौ एक क्षण काँपी...

फिर स्थिर हो गई।

उसका सुनहरा प्रकाश पांडुलिपि पर फैल गया।

पास रखे उसके गुरु द्वारा उपहार में दिए गए लकड़ी के औषधि-पात्र पर...

और थरवाड के पुराने लकड़ी के खम्भों पर भी।

उस एक क्षण में...

उसे लगा जैसे उसका पूरा जीवन उसके सामने एक साथ उपस्थित हो गया हो।

कटहल के दूध से सनी उँगलियों वाली छोटी बच्ची...

अम्मू के पीछे-पीछे भागती वह किशोरी...

जो निषिद्ध इल्लम तक पहुँच गई थी...

ताड़पत्रों और औषधियों के बीच झुकी रहने वाली छात्रा...

और अब...

दूसरों का उपचार करने के लिए तैयार वैद्य।

उसे महसूस हुआ—

इनमें से कोई भी जीवन समाप्त नहीं हुआ था।

वे सब एक-दूसरे में समा गए थे।

उस कहानी ने उसे सुनना सिखाया था।

और आयुर्वेद ने उसे यह सिखाया था कि...

सुनना ही उपचार की पहली सीढ़ी है।

वह फिर बैठ गई।

स्याही में कलम डुबोई।

और पांडुलिपि के अंतिम पृष्ठ के नीचे लिखा—

“नारायण थरवाड में,
वैद्य के रूप में अपना प्रशिक्षण पूर्ण करने के बाद आई पहली वर्षा के दौरान पूर्ण।”

कुछ क्षण तक उसकी कलम वहीं रुकी रही।

कई ऐसे नाम थे,

जिन्हें वह लिख सकती थी।

और अनेक ऐसे,

जिन्हें वह कभी जान ही नहीं पाई।

काफ़ी देर बाद उसने छोटे अक्षरों में लिखा—

“भगी अम्मा के लिए,
जिन्होंने मुझे यह कहानी दी।

अप्पाची के लिए,
जिन्होंने इसे सुनाए जाने दिया।

अम्मा के लिए,
जिन्होंने घर को हमेशा ऊष्मा से भरा रखा।

अम्मू के लिए,
जिसने यह कहानी मेरे साथ सुनी।

और इल्लम की उन सभी स्त्रियों के लिए—
जिनके नाम इतिहास में दर्ज हैं...
और उनके लिए भी जिनके नाम कभी लिखे नहीं गए...
लेकिन जिन्होंने मिट जाने से इंकार कर दिया।”

स्याही कुछ क्षण तक चमकती रही।

फिर धीरे-धीरे कागज़ में समा गई।

मानो कहानी भी अंततः अपनी सही जगह पहुँच गई हो।